भारत का विधि आयोग

साक्षी पहचान संरक्षण

और

साक्षी सुरक्षा कार्यक्रम

विषय पर

एक सौ अट्ठानवेवीं रिपोर्ट

अगस्त, 2006

349.54R
P6.198;1

न्यायमूर्ति
एम. जगन्नाथ राव
अध्यक्ष,

भारत का विधि आयोग
शास्त्री भवन
नई दिल्ली- 110001
फैक्स : (011) 23073864,
23388870
E-Mail:chic@nic.in

निवासः
1, जनपथ
नई दिल्ली- 110011
दूरभाषः 23019465

7 जून, 2005

अर्ध0शा0सं0 6(3)99-2004-एल0सी0(एल एस)

मननीय श्री भारद्वाज जी,

विषय : 'साक्षी पहचान संरक्षण और साक्षी सुरक्षा कार्यक्रम' विषय पर विधि आयोग की एक सौ अट्ठानवेवीं रिपोर्ट।

भारत के उच्चतम न्यायालय ने हाल ही में बहुत से निर्णयों में, यथा एन.एच.आर.सी. बनाम गुजरात राज्य : 2003(9) स्केल 329, पी.यू.सी.एल बनाम भारत संघ : 2003(10) स्केल 967, ज़ाहिरा बनाम गुजरात राज्य : 2004(4) एस सी सी 138, साक्षी बनाम भारत संघ : 2004(6) स्केल 15 और ज़ाहिरा बनाम गुजरात : 2006(3) स्केल 104, साक्षी पहचान संरक्षण और साक्षी सुरक्षा कार्यक्रमों के प्रश्नों का निर्देश किया है । साक्षी के मामले में न्यायालय ने साक्षी की सुरक्षा के विषय विधान की आवश्यकता पर जोर दिया है । इन टिप्पणियों को ध्यान में रखते हुए विधि आयोग ने इस विषय पर विचार करने के लिए स्वयं ही इसका चयन किया है । इस रिपोर्ट में आयोग ने सेशन न्यायालय या उसके समान स्तरीय न्यायालयों में चलाए जा सकने वाले मुकदमों के लिए साक्षी पहचान संरक्षण प्रक्रियाओं तक ही सीमित रखा है ।

अन्वेषण, जांच और सुनवाई के दौरान साक्षी की पहचान को संरक्षण देने की आवश्यकता होगी और साक्षी सुरक्षा कार्यक्रम साक्षी को न्यायालय के बाहर सुरक्षा प्रदान करने के लिए लागू होंगे ।

आज यह माना जाता है कि आतंकवादी और यौन संबंधी अपराधों में ही नहीं अपितु सभी गम्भीर अपराधों के मामलों में, जहां साक्षियों को खतरा है, साक्षी पहचान को सुरक्षित रखे जाने की आवश्यकता है ।

प्रारम्भ में, आयोग ने 'साक्षी पहचान संरक्षण और साक्षी सुरक्षा कार्यक्रमों' के विषय पर एक परामर्शीपत्र तैयार किया (अगस्त 2004) और प्रश्नों पर प्रतिक्रियाएं आमंत्रित कीं ।

परामर्शीपत्र तीन भागों में विभक्त था : भाग एक - सामान्य (अध्याय एक से चार), भाग- दो - साक्षी पहचान संरक्षण और अभियुक्त के अधिकार (अध्याय पांच, छः) और भाग तीन - साक्षी सुरक्षा कार्यक्रम (अध्याय सात) । विद्यमान विधियों के उदाहरणस्वरूप न्यूजीलैण्ड और पुर्तगाल की विधियां संलग्न की गई थीं ।

<u>परामर्शीपत्र के साथ संलग्न प्रश्नावली और प्रतिक्रियाएं</u> :

परामर्शीपत्र साथ संलग्न प्रश्नावली के दो भाग हैं - भाग क और ख । पहला भाग साक्षी की पहचान के संरक्षण से संबंधित है और दूसरा साक्षी सुरक्षा कार्यक्रमों से संबंधित है ।

आयोग ने दो गोष्ठियां आयोजित की, पहली 9 अक्टूबर, 2004 को नई दिल्ली में और दूसरी 22 जनवरी, 2005 को हैदराबाद में । इन गोष्ठियों में उच्च न्यायालयों के बहुत से न्यायाधीशों, वकीलों, पुलिस अधिकारियों, लोक अभियोजकों, न्यायिक अधिकारियों (मजिस्ट्रेट और सेशन न्यायाधीश) ने भाग लिया ।

जहां तक लिखित प्रतिक्रियाओं का संबंध है, राज्य सरकारों, पुलिस महानिदेशकों/पुलिस महानिरीक्षकों, उच्च न्यायालय के न्यायाधीशों, अन्तर्राष्ट्रीय तथा स्थानीय संगठनों, अधीनस्थ न्यायपालिका के न्यायाधीशों, न्यायविदों, वकीलों तथा लोक अभियोजकों से लगभग 50 प्रतिक्रियाएं प्राप्त हुई । इनका विश्लेषण किया गया ।

अन्तिम रिपोर्ट

इस अन्तिम रिपोर्ट में, आयोग ने प्रतिक्रियाओं के बारे में चर्चा की है और साक्षी पहचान संरक्षण तथा साक्षी सुरक्षा कार्यक्रमों दोनों के बारे में अपनी सिफारिशें दी हैं । जहां तक साक्षी की पहचान के संरक्षण का संबंध है, आयोग ने अनुलग्नक - I के रूप में प्रारूप विधेयक संलग्न किया । आयोग ने साक्षी सुरक्षा कार्यक्रमों के बारे कोई प्रारूप विधेयक नहीं दिया है । परामर्शीपत्र (अगस्त, 2004) अनुलग्नक - II के रूप में संलग्न किया गया है ।

I. साक्षी पहचान संरक्षण

हम साक्षी की पहचान के संरक्षण के विषय पर अन्तिम रिपोर्ट के भाग-एक में अपने दृष्टिकोण का संक्षेप में निर्देश करेंगे ।

हमारे देश में अभियुक्त को किसी दांडिक न्यायालय में खुलेआम सुनवाई किए जाने का अधिकार प्राप्त है और अपनी उपस्थिति में न्यायालय में साक्षी की खुलेआम परीक्षा का भी अधिकार प्राप्त है । परन्तु, अभियुक्त के ये अधिकार पूर्ण नहीं हैं और निष्पक्ष न्याय के हितों को ध्यान में रखते हुए और यह सुनिश्चित करने के लिए कि पीड़ित और साक्षी निर्भय होकर बयान दे सकें, अभियुकत के इन अधिकारों को एक न्यायोचित सीमा तक सीमित किया जा सकता है क्योंकि अभियुक्त की अपनी उपस्थिति में खुलेआम सुनवाई का उसका अधिकार पूर्ण नहीं है इसलिए विधि द्वारा अभियुक्त के उक्त अधिकार और ऐसी निष्पक्ष न्याय व्यवस्था के बीच एक संतुलन बनाए रखे

जाने की आवश्यकता है जिसमें पीड़ित और साक्षी अपने तथा अपने निकट संबंधियों की जान-माल को किसी खतरे के बिना निर्भय होकर बयान दे सकें ।

साक्षियों की तीन श्रेणियां है : (i) पीड़ित साक्षी, जिनके बारे में अभियुक्त को जानकारी है ; (ii) पीड़ित साक्षी, जिन्हें अभियुक्त नहीं जानता है (उदाहरण के लिए अभियुक्त द्वारा अंधाधुंध गोलीबारी किए जाने के मामले में) ; और (iii) ऐसे साक्षी जिनकी अभियुक्त को कोई पहचान नहीं है । श्रेणी (i) के मामले में मानसिक आघात से संरक्षण दिलाए जाने की आवश्यकता है और श्रेणी (ii) तथा श्रेणी (iii) के मामले में पहचान के प्रकटन को संरक्षण दिए जाने की आवश्यकता है ।

उपर्युक्त श्रेणी (i) में, क्योंकि अभियुक्त पीड़ित व्यक्ति को जनता है इसलिए पहचान को कोई संरक्षण देने की आवश्यकता नहीं है परन्तु फिर भी पीड़ित व्यक्ति यह चाहेगा कि न्यायालय में उसकी परीक्षा पृथक रूप मे न कराई जाए और यह अभियुक्त की तत्काल उपस्थिति में भी न हो क्योंकि यदि वह (स्त्री अथवा पुरूष) अभियुक्त की उपस्थिति में बयान देगा तो उसे अत्यधिक मानसिक आघात पहुंचेगा और साक्षी के लिए निर्भय होकर और किसी संत्रास के बिना बयान दे पाना कठिन कार्य होगा । परन्तु श्रेणी (ii) और (iii) के मामले में, जो पीड़ित और साक्षी अभियुक्त के लिए जाने पहचाने नहीं हैं उनके लिए गम्भीर समस्या है क्योंकि यदि अभियुक्त को उनकी पहचान प्रकट हो जाती है तो उनकी तथा उनके निकट संबंधियों की जान-माल के लिए खतरा होने की संभावना बन जाएगी । ऐसे व्यक्ति चाहेंगे कि दांडिक मामले के सभी स्तरों पर, अर्थात् अन्वेषण, जांच और सुनवाई, उनकी पहचान गोपनीय रखी जाए ।

इस विषय पर बहुत से देशों में विचार-विमर्श हुआ है कि अभियुक्त के अधिकार और साक्षी की पहचान को संरक्षित रखने की आवश्यकता के बीच किस प्रकार संतुलन बनाया रखा जाए । अमरीका में और कतिपय अन्य देशों में, जहां खुले न्यायालय में साक्षियों का सामना करना वास्तव में एक संवैधानिक या विधायी अधिकारी है, इस प्रकार का संतुलन रखा जाता है, उन्होंने उपयुक्त प्रक्रियाएं विकसित की हैं जो पीड़ितों और साक्षियों के हित में विहित की जा सकती हैं । इस

प्रयोजन से, परामर्शीपत्र में तथा इस रिपोर्ट में, हमने तुलनात्मक विधि का विस्तार से निर्देश किया है कि अन्य देशों में इन अधिकारों के किस प्रकार से संतुलित रखा जाता है ।

(i) अन्वेषण के स्तर पर :

हमारा मत है कि अन्वेषण के स्तर पर भी संरक्षण दिए जाने की आवश्यता है । यह कार्य अभियोजक द्वारा मजिस्ट्रेट से प्राथमिक जांच उनके अपने चैम्बर में, अर्थात् गुप्त रूप में, किए जाने का अनुरोध करके किया जा सकता है । मजिस्ट्रेट को उस सामग्री पर विचार करना होगा जो अभियोजक ने साक्षी या उसकी सम्पत्ति या उसके निकट संबंधियों या उनकी संपत्ति के लिए खतरा साबित करते हुए प्रस्तुत की है और यदि आवश्यक हो, तो मजिस्ट्रेट साक्षी की परीक्षा ले सकता है । अन्वेषण के दौरान इस स्तर पर संदिग्ध व्यक्ति को उसका पक्ष सुने जाने का अधिकार नहीं है । यदि मजिस्ट्रेट इस निष्कर्ष पर पहुंचता है कि खतरे की संभावना है तो वह पहचान को संरक्षण दे सकता है और इस संबंध में एकपक्षीय आदेश पारित कर सकता है । वास्तविक पहचान केवल मजिस्ट्रेट को ही, किसी अन्य व्यक्ति को नहीं, प्रकट होगी । इसके अतिरिक्त, न्यायालय के रिकार्ड में भी वास्तविक पहचान प्रकट नहीं की जाएगी और साक्षी को किसी छद्म नाम या वर्णमाला के किसी अक्षर से पुकारा जाएगा । मजिस्ट्रेट, आदेश पारित करते समय विधेयक की धारा 5(6) में दिए गए विभिन्न मामलों को ध्यान में रखेगा । केवल अन्वेषण की अविध के दौरान ही ऐसा अनामिक आदेश पारित किया जा सकेगा ।

(ii) जांच के दौरान और सुनवाई में साक्ष्य अभिलिखित करने से पूर्व :

मजिस्ट्रेट या सेशन न्यायालय के समक्ष जांच में (सुनवाई आरम्भ होने से पूर्व) अभियोजक या साक्षी को नए सिरे से आवेदन करना होगा और यह तब भी आवश्यक है जबकि कतिपय साक्षियों को अन्वेषण के दौरान अनामता की अनुमति दे दी गई हो और नई पहचान दे दी गई हो । मजिस्ट्रेट अथवा न्यायाधीश को अनामत की मंजूरी के लिए नया प्राथमिक आदेश पारित करना होगा। इसका कारण यह है कि अन्वेषण के स्तर से भिन्न जांच अथवा सुनवाई पूर्व पहचान संरक्षण के मामले में ऐसा संरक्षण केवल अभियुक्त को न्यायोचित अवसर प्रदान करने के पश्चात् ही दिया

जा सकता है । हमने एक प्रक्रिया विकसित की है जिसमें मजिस्ट्रेट या सेशन न्यायाधीश के समक्ष जांच के दौरान, सुनवाई में साक्ष अभिलिखित किए जाने से पूर्व, मजिस्ट्रेट या न्यायाधीश उस सामग्री पर विचार करेगा जो अभियोजक या साक्षी ने अपने या अपने संबंधियों के लिए जान और माल के खतरे के बारे में प्रस्तुत की है और यदि आवश्यक हो तो वे साक्षी का पक्ष सुन भी सकेंगे ।

यह सभी कार्यवाही बंद कमरे में होगी और अभियुक्त/उसका वकील उपस्थित नहीं होंगे । तथापि, मजिस्ट्रेट या न्यायाधीश को अभियुक्त या उसके वकील के पक्ष को अलग से सुनना होगा और साक्षी को कथित खतरे से संबंधित सामग्री उनको प्रकट करनी होगी परन्तु ऐसा कोई तथ्य प्रकट नहीं करना होगा जिससे अभियुक्त या उसके वकील को साक्षी की वास्तविक पहचान हो सके । इससे, हमने बताया है, विधि की वह आवश्यकता पूरी हो सकेगी कि अभियुक्त तथा साक्षी के अधिकारों के बीच संतुलन रखा जाए । यदि जांच के दौरान, मजिस्ट्रेट या न्यायाधीश किसी प्राथमिक आदेश द्वारा पहचान संरक्षण की स्वीकृति प्रदान कर देतें है तब यह न केवल जांच, सुनवाई की अवधि में अपितु बाद के स्तरों पर अपील अथवा पुनरीक्षा के लिए और मामला अन्तिम रूप से निर्णित हो जाने के पश्चात् भी प्रवृत रहेगा । कार्यवाहियों के रिकार्ड में साक्षी की वास्तविक पहचान का या किसी ऐसे तथ्य का निर्देश नहीं होगा जिससे कि पहचान का पता लगाया जा सके ।

(iii) <u>सेशन न्यायालय में मामले की सुनवाई के दौरान साक्ष्य का अभिलिखित किया जाना : टू-वे क्लोज़ड सर्किट टेलीविजन ;</u>

अगला स्तर, सेशन न्यायालय में सुनवाई का अन्तिम चरण है । साक्षी, यदि मजिस्ट्रेट या न्यायाधीश द्वारा अनामता की स्वीकृति दी जा चुकी है, जैसाकि ऊपर बताया गया है, अनामता के लिए फिर से आवेदन करने की आवश्यकता नहीं होगी ।

सुनवाई के दौरान साक्ष्य के संबंध में टू-वे क्लोजड सर्किट टेलीविजन या वीडियो लिंक और टू-वे ऑडियो लिंक का प्रस्ताव किया गया है और ये साथ-साथ के कमरों में लगाए जाएंगे ।

सौभाग्य से, महाराष्ट्र राज्य बनाम डा0 प्रफुल्ल बी देसाई, 2003(4) एस सी सी 601 और साक्षी, 2004(6) स्केल 15, मामलों में उच्चतम न्यायालय के निर्णय के पश्चात् वीडियो लिंक द्वारा इस प्रकार का साक्ष्य ग्राह्य होगा ।

सेशन न्यायालय में मुकदमे की सुनवाई बहुत ही विस्तृत प्रक्रिया के अधीन संचालित होगी जो अध्याय नौ और दस में और धारा 12, धारा 13 और रिपोर्ट के साथ संलग्न किए गए विधेयक की अनुसूची-I और अनुसूची-II विहित की जाएगी । उपर्युक्त बताई गई इस प्रक्रिया के लिए टू-वे क्लोजड सर्किट टेलीविजन या विडियो लिंक और टू-वे ऑडियो प्रणाली के प्रयोग किए जाने की आवश्यकता हे । परन्तु फिर भी दो पृथक-पृथक प्रक्रियाएं हैं । (क) अनुसूची-I, अध्याय नौ और धारा 12 के अन्तर्गत ऐसे मामले आते हैं । जिनमें पीड़ित/साक्षी अभियुक्त के लिए अज्ञात हैं और जिन्हें पहचान के संरक्षण की आवश्यकता है और (ख) अनुसूची-II, अध्याय-दस धारा 13 के अन्तर्गत वे मामले आते हैं जिनमे अभियुक्त पीड़ितों को जानता है और उन्हें मानसिक आघात से बचाए जाने की आवश्यकता है ।

(क) जहां तक ऐसे पीड़ितों और साक्षियों का संबंध है जो अभियुक्त के लिए अज्ञात हैं और जिनकी पहचान को संरक्षित रखे जाने की आवश्यकता है उनके संबंध में अनुसूची-I के साथ धारा 12 में विहित क्रिया निम्नलिखित है :

एक कमरे में (जिसे हम (क) कह सकेंगे) पीठासीन न्यायाधीश, कोर्ट मास्टर, आशुलिपिक, लोक अभियोजक, संकटग्रस्त साक्षी तथा तकनीकी कर्मचारी (जो न्यायालय के कर्मचारी होंगे) उपस्थित रहेंगे ।

दूसरे कमरे में केवल,(जिसे हम (ख) कह सकेंगे) अभियुक्त, उसका वकील तथा प्रणाली का संचालन करने वाले तकनीकी कर्मचारी उपस्थित रह सकेंगे ।

दोनों कमरों के बीच टू-वे ऑडियो लिंक के साथ टू-वे क्लोजड सर्किट टेलीविजन या वीडियो लिंक द्वारा सम्पर्क स्थापित किया जाएगा ।

संकटग्रस्त साक्षी (अर्थात् अभियुक्त के लिए अज्ञात पीड़ित या साक्षी) की परीक्षा सीधे अभियोजक द्वारा कमरा सं0 'क' में की जाएगी । साक्षी अपने कमरे में वीडियो स्क्रीन पर अभियुक्त की पहचान कर सकेगा पर कमरा सं0 'क' में लगा कैमरा, जहां साक्षी उपस्थित है, साक्षी पर केन्द्रित नहीं किया जाएगा इसलिए उसका चित्र कमरा सं0 'ख' में उपस्थित अभियुक्त को दर्शनीय नहीं होगा ।

कमरा सं0 'क' में उपस्थित साक्षी की कमरा सं0 'ख' में उपस्थित अभियुक्त या उसके वकील द्वारा (टू-वे वीडियो-ऑडियो प्रणाली) दुई दृश्य-श्रव्य प्रणाली के माध्यम से प्रतिपरीक्षा की जाएगी ।

(ख) जहां तक अभियुक्त को ज्ञात ऐसे पीड़ित का संबंध है जिसकी केवल मानसिक आघात से सुरक्षा की जानी है, उसके संबंध में प्रक्रिया धारा 13 और अनुसूची-II में दी गई है ।

कमरा 'क' में, पीठासीन न्यायाधीश, कोर्ट मास्टर, आशुलिपिक, अभियुक्त और तकनीकी कर्मचारी उपस्थित रहेंगे ।

कमरा 'ख' में, पीड़ित व्यक्ति, लोक अभियोजक और अभियुक्त का वकील तथा तकनीकी कर्मचारी उपस्थित रहेंगे । जब पीड़ित व्यक्ति अभियुक्त की पहचान करेगा केवल तभी कमरा 'क' में लगाया गया कैमरा अभियुक्त पर केन्द्रित किया जाएगा उसके पश्चात् अभियुक्त का चित्र कमरा 'ख' में स्क्रीन पर दिखाई नहीं दे सकेगा ।

कमरा सं0 'ख' में अभियोजक/बचाव पक्ष के वकील द्वारा साक्षी की परीक्षा या प्रतिपरीक्षा की जाएगी ।

कमरा 'ख' से न्यायाधीश और अभियुक्त कमरा 'क' में उपस्थित साक्षी को और उसकी की जा रही परीक्षा को देख सकेंगे ।

(iv) प्रवर्तन

हमने यह उपबंध किया है कि अधिनियम निम्नलिखित के लिए प्रवर्तनीय होगा -

(क) अभियुक्त को ज्ञात पीड़ित व्यक्ति सेशन न्यायालय की सुनवाई में इस अधिनियम के प्रवर्तन की तिथि को जिसके कथन को अभिलिखित किया जाना आरम्भ नहीं हुआ है ; और

(ख) संकटग्रस्त साक्षी (अर्थात् पीड़ित साक्षी सहित) मजिस्ट्रेट के समक्ष अन्वेषण में जांच के दौरान जिसकी पहचान संदिग्ध व्यक्ति या अभियुक्त को प्रकट नहीं की गई है या इस अधिनियम के प्रवर्तन की तारीख को सेशन न्यायालय में मुकदमे की सुनवाई में उसका कथन अभिलिखित नहीं किया गया है ।

(II) साक्षी सुरक्षा कार्यक्रम :

जहां तक साक्षी सुरक्षा कार्यक्रमों का संबंध है, हमने अन्तिम रिपोर्ट के भाग - दो में अपनी सिफारिशें दी हैं । हमने इस विषय पर विधेयक की व्यवस्था नहीं की है क्योंकि वित्तपोषण का प्रश्न अत्यन्त महत्वपूर्ण है । हमने यह सिफारिश की है कि केन्द्र और राज्य सरकारों को खर्चे का वहन बराबर-बराबर करना चाहिए ।

सुरक्षा साक्षी कार्यक्रमों में न्यायालय से बाहर सुरक्षा का निर्देश है । लोक अभियोजक के कहने पर या मजिस्ट्रेट द्वारा अपने चेम्बर में एकपक्षीय जांच करके साक्षी को एक नई पहचान दी जा सकती है । उसके जीवन को खतरे की संभावना के मामले में, यदि आवश्यक हो, उसे एक नई पहचान दी जा सकेगी और अभियुक्त के विरूद्ध सुनवाई पूरी होने तक, उसे उसके आश्रितों सहित अन्यत्र किसी स्थान पर बसाया जा सकता है । सभी व्यक्तियों के अनुरक्षण पर होने वाले व्यय का वहन जिला विधिक सहायता प्राधिकरण के माध्यम से राज्य विधिक सहायता प्राधिकरण द्वारा किया जाना चाहिए । साक्षी को एक समझौता ज्ञापन पर हस्ताक्षर करने होंगे जिसमें राज्य तथा साक्षी दोनों के दायित्वों का विवरण दिया जाएगा । कार्यक्रम के लिए स्वीकृत हो जाने पर, साक्षी को अभिसाक्ष्य देना होगा और राज्य का दायित्व होगा कि वह न्यायालय से बाहर साक्षी को अतिरिक्त सुरक्षा

प्रदान करे । साक्षी द्वारा समझौता ज्ञापन के उल्लंघन का परिणाम यह होगा कि साक्षी को कार्यक्रम से बाहर कर दिया जाएगा ।

हमने कतिपय जटिल समस्याओं के बारे में भी विचार किया है जहां साक्षी को मुकदमा दायर करना है या अपना बचाव करना है और किसी अन्य सिविल या दांडिक मामले में अपनी पहचान प्रकट किए बिना साक्षी होना है ।

अधिनियम के अधीन, हमने अधिनियम के उपबंधों का उल्लंघन करने और संरक्षित साक्षी की पहचान प्रकट करने वालों के लिए दंड का उपबंध किया है ।

अपनी सिफारिशों में, हमने साक्षी पहचान संरक्षण और साक्षी सुरक्षा कार्यक्रमों के लिए एक विस्तृत रूपरेखा दी है । यहां हमें इस विषय के बारे में सचेत रहना होगा कि यह विषय उस विधि से भिन्न है जो अब प्रतिकूल हो जाने वाले साक्षियों की समस्या के समाधान के लिए अधिनियमित किया जा रहा है । हमने इस रिपोर्ट में पूर्णतया भिन्न सिफारिश की है और यह अन्वेषण के दौरान और न्यायालय में साक्षी की पहचान के संरक्षण और न्यायालय से बाहर साक्षी की सुरक्षा कार्यक्रमों से संबंधित है ।

हम आशा करते है कि साक्षी पहचान संरक्षण के विषय पर विधेयक अधिनियमित किया जाएगा । हमें यह भी आशा है कि साक्षी सुरक्षा कार्यक्रमों को (जिसके बारे में हमने कोई प्रारूप विधेयक नहीं दिया है) हमारी सिफारिशों के अनुकूल कार्यान्वित किया जाएगा और इन कार्यक्रमों के लिए केन्द्र तथा राज्य सरकारें पर्याप्त निधियां उपलब्ध कराएंगी ।

सादर,

भवदीय,
ह0
(एम0 जगन्नाथ राव)

श्री एच.आर. भारद्वाज,
विधि और न्याय मंत्री,
भारत सरकार,
शास्त्री भवन,
नई दिल्ली ।

विषय-सूची

अध्याय सं0	विषय	पृष्ठ सं0
एक	प्रस्तावना	14
	भाग- एक - साक्षी की पहचान का संरक्षण	
दो	अभियुक्त का निष्पक्ष सार्वजिनक विचारण का अधिकार पूर्ण नहीं है	22
तीन	भारत में विशिष्ट विधियों के अधीन पीड़ित और साक्षी की पहचान के संरक्षण से संबंधित कतिपय विषय	34
चार	परामर्शीपत्र के अध्याय-आठ में दी गई प्रश्नावली पर प्रतिक्रियाएं	47
पांच	पीड़ित पहचान संरक्षण का विस्तार सेशन न्यायालय द्वारा विचारण किए जाने वाले गम्भीर अपराधों के सामान्य मामलों के लिए किए जाने की आवश्यकता	75
छः	पीड़ितों तथा साक्षियों की सुरक्षा के लिए दांडिक न्यायालयों की अंतर्निहित शक्तियां और भारत की स्थिति	86
सात	भारत में - (i) अन्वेषण के दौरान (ii) जांच में (iii) विचारण के दौरान - साक्षियों की अनामता के बारे मे निर्णय करने की प्रक्रिया	98
आठ	स्तर- जिस पर साक्षी की पहचान के संरक्षण की आवश्यकता है - अन्वेषण, विचारणपूर्व या विचारण और विचारण के पश्चात्	107
नौ	सेशन न्यायालय में विचारण के दौरान पीड़ित और साक्षी की परीक्षा के लिए टू-वे क्लोज्ड सर्किट टेलीविजन	116
दस	प्रश्नावली पर प्राप्त प्रतिक्रियाओं और साक्षी अनामता के प्रश्न पर की गई सिफारिशों के बारे में विचार-विमर्श	131

भाग-दो - साक्षी सुरक्षा कार्यक्रम

ग्यारह	परामर्शी-पत्र और प्रतिक्रियाएं	159
बारह	प्रश्नावली - प्रतिक्रियाओं पर चर्चा - सिफारिशें	164
अनुलग्नक-I	साक्षी (पहचान) संरक्षण विधेयक, 2006	203
अनुलग्नक-II	परामर्शी-पत्र (2004)	(भाग-दो) 221

अध्याय - एक

प्रस्तावना

परामर्शीपत्र

विधि आयोग ने 'साक्षी पहचान संरक्षण और साक्षी सुरक्षा कार्यक्रमों' के विषय, एन.एच.आर.सी. बनाम गुजरात राज्य : 2003(9) स्केल 329, पी.यू.सी.एल बनाम भारत संघ : 2003(10) स्केल 967, ज़ाहिरा हबीबुल्ला एच. शेख तथा अन्य बनाम गुजरात राज्य : 2004(4) एस सी सी 158 और साक्षी बनाम भारत संघ : 2004(6) स्केल 15 मामलों में उच्चतम न्यायालय की इस टिप्पणी को ध्यान में रखते हुए कि इस विषय में कानून बनाए जाने की आवश्यकता है, स्वयं ही चुनी है । अभी हाल ही में ज़ाहिरा हबीबुल्ला एच. शेख बनाम गुजरात : 2006(3) स्केल 104, मामले में उच्चतम न्यायालय ने यही विचार व्यक्त किया है । उपर्युक्त सभी मामलों में न्यायालय ने कहा है कि हमारे न्यायालय, महत्वपूर्ण आपराधिक मामलों में जो कुछ घटित हो रहा है उसको ध्यान में रखते हुए अब समय आ गया है कि साक्षी पहचान संरक्षण और साक्षी सुरक्षा कार्यक्रमों के विषय पर कानून बनाया जाए ।

भारत के विधि आयोग ने 'साक्षी पहचान संरक्षण और साक्षी सुरक्षा कार्यक्रमों' के विषय पर अगस्त, 2004 में एक परामर्शीपत्र प्रकाशित कराया । परामर्शीपत्र के प्रकाशन के पश्चात् यूनाइटेड किंगडम से प्रकाशित होने वाली 'क्रिमिनल लॉ रिव्यू' नामक एक प्रमुख विधिक पत्रिका के फरवरी, 2005 के अंक में (पृष्ठ 167) 'लॉ रिफॉर्म' शीर्षक के अन्तर्गत परामर्शीपत्र का निम्नलिखित पुनर्विलोकन किया गया :

"भारत के आयोग ने 'साक्षी पहचान संरक्षण और साक्षी सुरक्षा कार्यक्रम' शीर्षक से एक महत्वपूर्ण परामर्शीपत्र प्रकाशित कराया है । जैसाकि शीर्षक से ही ज्ञात हो जाता है कि पत्र में साक्षी सुरक्षा की आवश्यकता के दो महत्वपूर्ण पहलूओं के लिया गया है । प्रथम पहलू इस प्रश्न से संबंधित है कि आपराधिक सुनवाईयों में अनाम साक्ष्य देने के लिए साक्षियों के लिए क्या कोई उपबंध किए जाने चाहिए और किस सीमा तक उपबंध किए जाने चाहिए । विस्तृत शोध इस पत्र का एक उल्लेखनीय पहलू है । पत्र के अध्याय-छः में साक्षी संरक्षण

तथा अनामता विषय का तुलनात्मक अध्ययन अन्तर्विष्ट है जिसमें सामान्य विधि के अधिकारक्षेत्र के अतिरिक्त, युगोस्लाविया और रूवान्डा के अन्तर्राष्ट्रीय दांडिक अधिकरणों में अपनायी नई प्रक्रियाएं दी गई हैं तथा यूरोपीय मानवाधिकार न्यायालय के न्यायशास्त्र की भी समीक्षा की गई है ।"

परामर्शीपत्र में साक्षी सुरक्षा से संबंधित दूसरा महत्वपूर्ण पहलू साक्षी के शारीरिक और मानसिक आघात से और साक्षियों के कल्याण के विभिन्न पहलूओं, जिनमें दांडिक प्रक्रिया के सभी स्तरों पर साक्षियों को शारीरिक सुरक्षा प्रदान करने पर ध्यान देने की आवश्यकता से संबंधित है । पत्र के अध्याय-सात में विभिन्न विधिक अधिकारिताओं में चल रहे साक्षी संरक्षण कार्यक्रमों की विस्तृत तुलनात्मक समीक्षा की गई है । पत्र में दांडिक न्याय विधि सुधार दस्तावेजों में तुलनात्मक अध्ययन के परम्परागत क्षेत्र, जो प्रमुख कॉमन लॉ अधिकारिताओं में व्यवहारों तक सीमित है, से परे जाकर किया गया अध्ययन अन्तर्विष्ट है । आस्ट्रेलिया, साऊथ अफ्रीका, यूनाइटेड स्टेटस् की सांविधिक पद्धतियों के अतिरिक्त फ्रांस, नीदरलैण्ड, जर्मनी, पुर्तगाल और इटली सहित महाद्वीपीय अधिकारिताओं में अपनाई जा रही पद्धतियों को भी अध्ययन में समाविष्ट किया गया है । पत्र के संपूर्ण पाठ और सारांश को आयोग की वैबसाइट "http://lawcommissionofindia.nic.in" पर देखा जा सकता है।

कॉमनवेल्थ लॉ बुलेटिन (2004) (खण्ड 30) (पृष्ठ 262-272) में परामर्शीपत्र का निर्देश किया गया है और परमर्शीपत्र के सारांश का और पत्र के अध्याय-आठ में अन्तर्विष्ट प्रश्नावली के प्रश्नों का उद्धरण दिया गया है ।

<u>परामर्शीपत्र पर प्रतिक्रियाएं</u>

विधि आयोग ने सरकारों, पुलिस अधिकारियों, न्यायपालिका, बार, गैर सरकारी संगठनों आदि के विचार प्राप्त करने की दृष्टि से परामर्शीपत्र परिचालित किया था । पत्र के अध्याय-आठ में एक प्रश्नावली दी गई है जो 'क' और 'ख' दो भागों में विभाजित है । भाग 'क' साक्षी की अनामता से संबंधित है और भाग 'ख' साक्षी सुरक्षा कार्यक्रमों के बारे में है ।

आयोग ने दो गोष्ठियां, 9 अक्टूबर, 2004 को नई दिल्ली में और 22 जनवरी, 2005 को हैदराबाद में आयोजित कीं जिनमें बड़ी संख्या में उच्च न्यायालयों के न्यायाधीशों, वकीलों, पुलिस अधिकारियों, लोक अभियोजकों, न्यायिक अधिकारियों (मजिस्ट्रेट और सेशन न्यायाधीश) ने भाग लिया । दिल्ली में गोष्ठी का उद्घाटन भारत सरकार के विधि और न्याय मंत्री श्री एच.आर. भारद्वाज द्वारा किया गया था ।

आयोग को बड़ी संख्या में प्रतिक्रियाएं प्राप्त हुई हैं । सब मिलाकर लगभग 50 प्रतिक्रियाएं प्राप्त हुई जिनमें से 12 राज्य सरकारों से और 12 पुलिस महानिदेशकों/पुलिस महानिरीक्षकों से, 3 उच्च न्यायालयों के न्यायाधीशों से और 3 अन्तर्राष्ट्रीय तथा अन्य संगठनों से और 2 अधीनस्थ न्यायालयों के न्यायाधीशों से प्राप्त हुई और शेष 20 अन्य न्यायविदों, वकीलों, लोक अभियोजकों तथा अन्य व्यक्तियों से प्राप्त हुईं ।

परामर्शीपत्र के अध्यायों का सारांश

यहां हम परामर्शीपत्र के अध्यायों के संक्षिप्त सारांश का निर्देश करेंगे । अध्याय-एक में हमने उच्चतम न्यायालय के उपर्युक्त निर्णयों का तथा अन्य मामलों में दिए गए निर्णयों का विशेष रूप से एन.एच.आर.सी बनाम गुजरात राज्य, 2003(9) स्केल 529 और जाहिरा 2004(4) स्केल 377 मामलों में की गई टिप्पणी का विस्तार से निर्देश किया है । दूसरे मामले में न्यायालय ने कहा है(पृष्ठ 395 पर) :

> " साक्षियों, पीड़ितों या सूचनादाताओं को तोड़ना निसिद्ध करने के लिए तत्काल विधायी उपाय करना आज की अनिवार्य आवश्यकता हो गई है ।"

आगे यह भी कहा है(पृष्ठ 399) :

> " साक्षियों के पलट जाने के बढ़ते हुए मामलों की चिन्ताजनक स्थिति के संदर्भ में तत्काल साक्षी सुरक्षा कार्यक्रम बनाए जाना अनिवार्य हो गया है ।"

उच्चतम न्यायालय द्वारा जाहिरा हबीबुल्ला शेख बनाम गुजरात : 2006(3) स्केल 104, मामले में भी इसी प्रकार के विचार व्यक्त किए गए थे। उच्चतम न्यायालय ने साक्षी बनाम भारत संघ : 2004(6) स्केल 15, मामले में स्क्रीनिंग और वीडियो-कांफ्रेंसिंग तकनीकियों का निर्देश करने के पश्चात दोहराया (पृष्ठ 35):

> " हमें आशा और विश्वास है कि संसद याचिकादाता द्वारा उठाए गए मुद्दों पर गम्भीर रूप से विचार करेगी और विषय की संवेदनशीलता को देखते हुए शीघ्र ही उपयुक्त विधान बनाएगी ।"

अध्याय-एक में उच्चतम न्यायालय की उपर्युक्त टिप्पणियों का निर्देश करने के पश्चात् योग ने अध्याय दो में खुले न्यायालय में सार्वजनिक विचारण और साक्षियों की प्रतिपरीक्षा के अधिकार के संबंध में भारत की दंड विधियों में विद्यमान उपबंधों का उल्लेख किया है । इस संबंध में आयोग ने दंड प्रक्रिया संहिता, 1973 के उपबंधों का निर्देश किया है जिसमें खुल विचारण का उपबंध किया गया है । दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 207 में पुलिस रिपोर्ट तथा अन्य दस्तावेजों की प्रतियां उपलब्ध कराए जाने का उपबंध है, धारा 208 में पुलिस रिपोर्ट के अलावा अन्यथा संस्थित किए गए मामालों में अभिकथनों और अन्य दस्तावेजों की प्रतियां उपलब्ध कराए जाने का और धारा 273 में अभियुक्त की उपस्थिति में साक्ष्य लिए जाने का उपबंध है । धारा 200 और धारा 202 में मजिस्ट्रेट से यह अपेक्षा की गई है कि वह परिवादी और साक्षियों की शपथ दिलाकर परीक्षा करेगा । हमने विधि के इन नियमों के कतिपय अपवादों का भी निर्देश किया है । संहिता में विद्यमान ये सभी उपबंध अभियुक्ता के लिए निष्पक्ष विचारण सुनिश्चित कराते हैं ।

अध्याय-दो में आयोग ने दंड प्रक्रिया संहिता, 1973 के कतिपय विशिष्ट उपबंधों का भी निर्देश किया है जिनके अनुसार बंद कमे में कार्यवाहियों के लिए अनुमति दी गई है - देखें धारा 327(2) जिसमें भारतीय दंड संहिता, 1860 की धारा 376 के अन्तर्गत बलात्संग के आशय के विचारण और संहिता की धारा 376क से धारा 376 के अधीन अन्य प्रकार के यौन अपराधों के संबंध में विचारण के लिए इस प्रकार की प्रक्रिया अपनाए जाने का उपबंध है । हमने दंड संहिता की धारा 228क का भी निर्देश किया है जिसमें ऐसे व्यक्ति के लिए कारावास और जुर्माने का उपबंध किया गया है जो किसी ऐसे व्यक्ति का नाम या कोई ऐसी सामग्री मुद्रित और प्रकाशित करता है जिससे उस व्यक्ति की पहचान प्रकट होती है जिसे विरूद्ध बलात्संग का आरोप है अथवा बलात्संग

उसके अध्याय-पांच में ऐसे मामलों की निर्णयजन्य विधि के बारे में सर्वेक्षण किया गया है । हम इन मामलों का फिर से विस्तार से निर्देश करना नही चाहते । परन्तु हमने श्रीमती नीलम कटारा बनाम भारत संघ (क्रिम.डब्ल्यू.पी.247/2000) तारीख 14.10.2003 मामले में दिल्ली उच्च न्यायालय के निर्णय का निर्देश किया है जिसमें कतिपय मार्गनिर्देश दिए गए हैं ।

तत्पश्चात, अयोग ने उच्चतम न्यायालय के इस दृष्टिकोण का निर्देश किया है कि जहां साक्षी पहचान संरक्षित रखी जाती है वहां खुले विचारण के सिद्धान्त का उल्लंघन नहीं होता है ।

परामर्शीपत्र के अध्याय-छः में ब्रिटेन, आस्ट्रेलिया, न्यूजीलैण्ड, कनाडा, अमरीकन और यूरोपीय मानवाधिकार आयोग की विधियों और निर्णयों का तथा भूतपूर्व यूगोस्लाविया के लिए अन्तर्राष्ट्रीय दांडिक अधिकरण के नियमों और निर्णयों तथा रूवान्डा के लिए इसी प्रकार के अधिकरण के नियमों का निर्देश करते हुए एक बहुत ही विस्तृत तुलनात्मक विधि विश्लेषण किया गया है । इन विशिष्ट अधिकरणों के नियमों की विस्तार से जांच की गई है ।

इसके पश्चात्, अध्याय-सात में आयोग ने आस्ट्रेलिया (विक्टोरिया, नेशनल कैपिटल टैरिटरी, क्वीन्सलैण्ड), साऊथ अफ्रीका, हांगकांग, कनाडा, पुर्तगाल, फिलीपिन्स, अमरीका, फ्रांस, चैकोस्लोवाकिया, कोरिया गणराज्य, जापान, नीदरलैण्ड, जर्मनी और इटली में साक्षी सुरक्षा कार्यक्रमों का निर्देश किया है ।

अन्त में, अध्याय-आठ में आयोग ने दो भागों 'क' और 'ख' में एक प्रश्नावली प्रस्तुत की है, एक भाग साक्षी पहचान संरक्षण से और दूसरा साक्षी सुरक्षा कार्यक्रमों से संबंधित है ।

अन्तिम रिपोर्ट

इस रिपोर्ट का भाग-एक (अध्याय- दो से अध्याय-दस) साक्षी पहचान संरक्षण से संबंधित है और भाग-दो (अध्याय-ग्यारह से अध्याय- तेरह) साक्षी सुरक्षा कार्यक्रमों से । साक्षी पहचान संरक्षण के विषय पर एक विधेयक संलग्न किया गया है । जहां तक साक्षी सुरक्षा कार्यक्रमों का संबंध है, हमने अपनी सिफारिशें अध्याय-आठ में दी हैं ।

साक्षी पहचान संरक्षण

इस रिपोर्ट में हम सब सामग्रियों का उल्लेख नहीं करना चाहते जिनका निर्देश परामर्शीपत्र में किया गया है । परामर्शीपत्र में जो कुछ रह गया है हमारा विचार उसका सारांश विभिन्न स्थलों पर देने का और जहां साक्षी पहचान सुरक्षा की मांग की गई है और उसे मंजूर किया गया है वहां दांडिक न्यायशास्त्र के कतिपय महत्वपूर्ण सिद्धान्तों और प्रक्रियात्मक विवरण पर विचार-विमर्श करने का है ।

साक्षी पहचान संरक्षण पर चर्चा भाग-एक के अध्याय-दो से अध्याय- दस तक में की गई है।

हम साक्षी पहचान संरक्षण के बारे में एक प्रारूप विधेयक इस रिपोर्ट के साथ संलग्न कर रहे हैं ।

साक्षी सुरक्षा कार्यक्रम :

यह विषय रिपोर्ट के भाग-दो के अध्याय-ग्यारह से अध्याय-तेरह के अन्तर्गत आता है ।

जहां तक साक्षी सुरक्षा कार्यक्रमों का संबंध है, हमने कोई विधेयक नहीं दिया है परन्तु हम अपनी सिफारिशें दे रहे हैं । क्योंकि वित्तपोषण का मामला महत्वपूर्ण है, हमने साक्षी सुरक्षा कार्यक्रमों से संबंधित उपबंध विधेयक में नहीं दिए हैं । भारत सरकार और राज्य सरकारें इन सिफारिशों पर विचार करेंगी और साक्षी सुरक्षा कार्यक्रमों के संबंध में उपयुक्त प्रशासनिक और विधायी उपाय करेंगी ।

इस रिपोर्ट के अध्याय-तेरह में, जहां तक साक्षी सुरक्षा कार्यक्रमों का संबंध है, प्रश्नावली की विभिन्न मदों का निर्देश करेंगे और तत्पश्चात् इस विषय पर अपनी सिफारिशें देंगे ।

परामर्शीपत्र इस रिपोर्ट के साथ संलग्न किया गया है (अनुलग्नक-दो)

भाग- एक

साक्षी की पहचान का संरक्षण

अध्याय-दो

अभियुक्त का निष्पक्ष सार्वजिनक विचारण का अधिकार पूर्ण नहीं है

लोकतांत्रिक संविधानों तथा विधि के शासन द्वारा शासित अधिकांश देशों में, आज स्थिति यह है कि अभियुक्त की उपस्थिति में मामले का खुला सार्वजनिक विचारण किए जाने का अधिकार मौलिक अधिकार है परन्तु यह परिपूर्ण नहीं है । यह बात हमारे परामर्शीपत्र में निर्दिष्ट विभिन्न देशों की विधिक स्थिति के सर्वेक्षण से स्पष्ट हो जाती है ।

आई.सी.सी.पी.आर.

सिविल तथा राजनैतिक अधिकारों की अन्तर्राष्ट्रीय प्रसंविदा(आई.सी.सी.पी.आर.), भारत भी जिसका एक सदस्य है, के अनुच्छेद 14(1) में सार्वजनिक विचार के अधिकार का विशिष्ट उल्लेख किया गया है । आई.सी.सी.पी.आर. में अभियुक्त के सार्वजनिक, खुले और निष्पक्ष विचार के अधिकार का उल्लेख किया गया है और इसमें यह भी बताया गया है कि इस अधिकार को किस प्रकार से निर्बन्धित किया जा सकता है । आई.सी.सी.पी.आर. में स्वीकृत अधिकारों का निर्बंधन यह दर्शाता है कि बहुत से प्रतियोगी अधिकारों को संतुलित किए जाने की आवश्यकता है । इस प्रकार के संतुलनकारी उपबंधों को कतिपय देशों के संविधानों में समाविष्ट किया गया है या संबंधित संहिता अथवा दंड प्रक्रिया के नियमों में विस्तार से वर्णित किया गया है ।

आई.सी.सी.पी.आर. के अनुच्छेद 14 का पाठ निम्नलिखित है :-

"अनुच्छेद 14

1. न्यायालयों तथा अधिकरणों के समक्ष सभी व्यक्ति समान होंगे । किसी व्यक्ति के विरूद्ध किसी दांडिक आरोप के विनिश्चय में, या न्यायालय में किसी मुकदमें में उसके अधिकार और दायित्वों के मामले में, प्रत्येक व्यक्ति को विधि द्वारा स्थापित सक्षम और निष्पक्ष अधिकरण द्वारा निष्पक्ष और सार्वजनिक सुनवाई का अधिकार प्राप्त होगा ।"

तथापि, इसी अनुच्छेद अर्थात् 14(1) में निर्बंधनों का भी निर्देश किया गया है और कहा गया है :-

"नैतिकता, सामाजिक शान्ति और लोकतांत्रिक देश में राष्ट्रीय सुरक्षा के कारणों से विचारण की समस्त प्रक्रिया से या उसके किसी भाग से प्रेस और जनसाधारण को दूर रखा जा सकता है, या जब पक्षकारों के निजी जीवन के हित में ऐसा करना अपेक्षित हो, या जहां प्रचार से न्याय के हित को क्षति पहुंचती हो वहां विशिष्ट परिस्थितयों में न्यायालय के मतानुसार जिस सीमा तक अत्यन्त आवश्यक हो ; परन्तु किसी दांडिक मामले में या विधि के लिए लाए गए किसी वाद में दिए गए निर्णय, ऐसे मामलों को छोड़कर जहां किशोरों के हित में अन्यथा अपेक्षित हो या कार्यवाहियां विवाह संबंधी विवादों से संबंधित हैं या बालकों से संबंधित हों, सार्वजनिक किए जाएंगे ।"

इसके साथ-साथ, आई.सी.सी.पी.आर. के अनुच्छेद 14(3) में कतिपय न्यूनतम गारंटियों का निर्देश किया गया है ।

"उस व्यक्ति के विरूद्ध किसी आपराधिक आरोप के विनिश्चय में पूर्णतया समानता रखते हुए,-

(क) ....

(ख) ....

(ग) ....

(घ) विचारण उसकी उपस्थिति में किया जाएगा और उसे व्यैक्तिक रूप में या उसकी पसंद के विधिक सहायक के माध्यम से अपनी रखा करने का अधिकार होगा .....

(ङ) उसके विरूद्ध साक्षियों की परीक्षा करना या परीक्षा की गई और ऐसी ही परिस्थितियों के अधीन उसके विरूद्ध के साक्षियों के लिए थी, उसके पक्ष के साक्षियों की उपस्थिति प्राप्त करना और उनकी परीक्षा करना ;

(च) ...."

जहां तक अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता और सूचना के अधिकार का संबंध है, आई.सी.सी.पी.आर. के अनुच्छेद 19 में कहा गया है :-

"अनुच्छेद 19

1. ....

2. प्रत्येक व्यक्ति को अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता का अधिकार होगा ; इस अधिकार में किसी भी स्तर या श्रेणी का ध्यान रखे बिना, मौखिक, लिखित में या मुद्रित रूप में, कला के रूप में या अपनी इच्छा के अन्य किसी माध्यम से सभी प्रकार की सुचना और विचार की मांग करना, प्राप्त करना या देना भी शामिल होंगे ।" (बल दिया गया)

परन्तु अनुच्छेद 19 के खंड (3) निर्बंधनों की अनुज्ञा दी गई है,-

"जो अन्य व्यक्तियों के अधिकारों और ख्याति का आदर करने के प्रयोजन से या राष्ट्रीय सुरक्षा की संरक्षा और सामाजिक शान्ति बनाए रखने या जनता के स्वास्थय और नैतिक आदर्शों की दृष्टि से आवश्यक है ।"

इस प्रकार, आई.सी.सी.पी.आर के उपबंधों में यह अपेक्षा की गई है कि अभियुक्त मामले का विचारण निष्पक्ष, खुला और सार्वजनिक होना चाहिए और उसमें यह घोषण भी की गई है कि अभियुक्त को यह अधिकार है कि विचारण उसकी उपस्थिति में हो और उसके विरूद्ध साक्षियों की परीक्षा उसकी उपस्थिति में की जाए या की गई है" । नागरिकों को जनता और प्रेस को जानने का और जो कुछ वे जानते हैं उसे प्रकाशित करने अधिकार है परन्तु यह अधिकार अन्य व्यक्तियों के अधिकारों और ख्याति का आद करने के हित में या राष्ट्रीय सुरक्षा के संरक्षण या जनता के स्वास्थ्य और नैतिक आदर्शों की सुरक्षा को ध्यान में रखते हुए निर्बंधनों के अध्यधीन है । उपर्युक्त अधिकारों के संरक्षण के प्रयोजन से या जहां निजी जीवन के हित में ऐसा अपेक्षित हो वहां, विशिष्ट परिस्थितियों में जहां प्रचार से न्याय के हित को क्षति पहुंचने की संभवना हो, न्यायालय के मतानुसार जिस सीमा तक अत्यन्त आवश्यक हो, प्रेस और जनता को जानकारी दिए जाने से वंचित रखा जा सकेगा ।

यूरोपीयन कन्वेंशन

मानवाधिकारों और मौलिक स्वतंत्रता के संरक्षण के विषय पर यूरोपीय कन्वेंशन के अनुच्छेद 6 में भी 'निष्पक्ष और सार्वजनिक सुनवाई' के लिए कहा गया है । परन्तु यह भी कहा गया है कि नैतिक आदर्शों, सार्वजनिक शान्ति या लोकतांत्रिक देश में राष्ट्रीय सुरक्षा के हित में, या जहां किशोरों के हितों में या पक्षकारों के निजी जीवन की सुरक्षा के लिए आवश्यक हो, या विशिष्ट परिस्थितियों में, जहां प्रचार से न्याय के हित को क्षति पहुंचने की संभावना हो, न्यायालय के मतानुसार जिस सीमा तक अत्यन्त आवश्यक हो, प्रेस और जनसाधारण को मामले के विषय में जानकारी से वंचित रखा जा सकेगा । (बल दिया गया)

ब्रिटेन

ब्रिटेन में 'खुले न्याय' का सिद्धन्त दशाब्दियों पूर्व अपनाया गया था परन्तु यह भी स्वीकार किया गया था परन्तु यह भी स्वीकार किया गया था कि यह पूर्ण नहीं है । यह स्कॉट बनाम स्कॉट : ए सी 417 मामले में विस्काऊंट हॉलडेन एल सी द्वारा अभिनिर्धारित किया गया था और अपवाद के निम्नलिखित रूप में दर्शाया गया है :-

> "अपवाद किसी अन्य अध्यारोही सिद्धान्त की क्रियाशीलता पर आधारित होना चाहिए जिसमें अपवाद का क्षेत्र परिभाषित किया गया हो और न्यायाधीश के अपने विवेकाधिकार के लिए कोई सीमा न रखी गई हो ।"

क्राऊन कोर्ट नियम (नियम 27), शासकीय गुप्त बात अधिनियम, 1920 की धारा 8(4), बाल तथा युवा व्यक्ति अधिनियम, 1933 की धारा 47(2), न्यायालय अवमानना अधिनिमय, 1981 की धारा 4(2) और धारा 11 में खुले न्याय के सिद्धान्त के लिए कतिपय संविधिक अपवादों का निर्देश किया गया है । इंग्लिश न्यायलयों ने लैवलर मैगनीजन (1979 ए सी 44) मामले में और आर बनाम मर्फी (1989) (परामर्शीपत्र का पैरा 6.2.3 और 6.2.10 देंखे) मामले में 'निहत शक्ति' का सिद्धान्त विकसित किया है ।

अमरीका

अमरीका में, छटे संशोधन में गारंटी दी गई है कि "सभी आपराधिक अभियोजनों में अभियुक्त को त्वरित और सार्वजनिक विचारण ..... का अधिकार होगा, और वह अपने विरूद्ध साक्षियों का सामना करेगा ....."। साथ ही, पहले संशोधन में भाषण और प्रेस की स्वतंत्रता का अधिकार, जिसमें सूचना का अधिकार भी शामिल है, सुनिश्चित किया गया है । यद्यपि, उच्चतम न्यायालय के कतिपय पूर्वतर निर्णयों में सामना करने का अधिकार पूर्ण माना गया था परन्तु

न्यायालयः ए आई आर 1997 एस सी 95) । यह अभिनिर्धारित किया गया है कि विचारण सार्वजनिक होना चाहिए । विनीत नारायण बनाम भारत संघः ए आई आर 1998 एस सी 889 ।

इसके अतिरिक्त, सार्वजनिक विचारण का अधिकार 'स्वतंत्रता और अभिव्यक्ति' के अधिकार पर आधारित है जो भारतीय संविधान के अनुच्छेद 19(1) (क) में अन्तर्विष्ट है जिसकी व्याख्या में प्रेस की स्वतंत्रता (एक्सप्रेस न्यूजपेपर्स बनाम भारत संघः ए आई आर 1958 एस सी 578) और जनता का जानने और प्रकाशित करने का अधिकार भी सम्मिलित है (दिनेश त्रिवेदी बनाम भारत संघ : 1997(4) एस सी सी 306) ।

संविधान के अनुच्छेद 22 में यह गारंटी दी गई है कि अभियुक्त को अपने मनपसंद के वकील से परामर्श करने और अपना बचाव कराने का अधिकार है ।

(ख) दंड प्रक्रिया संहिता 1973 :

दंड प्रक्रिया संहिता, 1973 में उपर्युक्त आई.सी.सी.पी.आर. के कतिपय उपबंध, हमारे देश की विधि में खुले सार्वजनिक विचारण के संबंध में, समाविष्ट किए गए हैं ।

वास्तव में, दंड प्रक्रिया संहिता, 1898 में भी इस प्रकार के उपबंध थे और ऐसे ही उपबंध अब 1973 की संहिता में शामिल कर लिए गए हैं ।

हम यह दर्शाने के लिए दंड प्रक्रिया संहिता, 1973 के कतिपय महत्वपूर्ण उपबंधों का निर्देश करेंगें जहां अभियुक्त को अपनी उपस्थिति में खुले सार्वजनिक विचारण का अधिकार प्राप्त है वहीं यह अधिकार पूर्ण नहीं है ।

(i) धारा 273 में विहित किया है कि साक्ष्य अभियुक्त की उपस्थिति में लिया जाना चाहिए। तथापि, यह स्पष्ट है कि अधिकार पूर्ण नहीं है । धारा 273 का पाठ निम्नलिखित है :

"धारा 273. साक्ष्य का अभियुक्त की उपस्थिति में लिया जाना :

अभिव्यक्त रूप से जैसा उपबंधित है उसके सिवाय, विचारण या अन्य कार्यवाही के अनुक्रम में लिया गया सब साक्ष्य अभियुक्त की उपस्थिति में या जब उसे वैयक्तिक हाजिरी से अभिमुक्त कर दिया गया है तब उसके प्लीडर की उपस्थिति में लिया जाएगा ।

स्पष्टीकरण - इस धारा में अभियुक्त के अन्तर्गत ऐसा व्यक्ति भी है जिसकी बाबत अध्याय-8 के अधीन कोई कार्यवाही इस संहिता के अधीन प्रारम्भ की जा चुकी है ।"

(ii) दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 327 का शीर्षक है : 'न्यायालय का खुला होना' । जहां तक यह वर्तमान संदर्भ में संगत है, इसका पाठ निम्नलिखित है :

"धारा 327 : न्यायालय का खुला होना (1) वह स्थान जिसमें कोई दंड न्यायालय किसी अपराध की जांच या विचारण के प्रयोजन से बैठता है, खुला न्यायालय समझा जाएगा जिसमें जनता साधारणतः प्रवेश कर सकेगी जहां तक कि सुविधपूर्वक वो उसमें समा सके" ।

परन्तु खुले विचारण का यह अधिकार पूर्ण नहीं है । इसमें बहुत से अपवाद हैं । कतिपय अपवाद नीचे दिए जा रहे हैं ।

(क) धारा 377 की उपधारा (1) के परन्तुक के अधीन निम्नलिखित कहा गया है :

"परन्तु यदि पीठासीन न्यायाधीश या मजिस्ट्रेट ठीक समझता है तो वह किसी विशिष्ट मामले की जांच या विचारण के किसी प्रक्रम में आदेश दे सकेगा कि जनसाधारण या कोई विशेष व्यक्ति उस कमरे में या भवन में, जो द्वारा उपयोग में लाया जा रहा है, न तो प्रवेश करेगा, न होगा और न रहेगा "।

(ख) धारा 327 की उपधारा (2), उपधारा (1) के उपबंधों के अपवादों (यौन अपराधों) के बारे में है इसमें यह उपबंध किया गया है कि भारतीय दंड संहिता, 1980, (धारा 376, 376क, 376ख, 376ग, 376घ) के अधीन बलात्संग और अन्य यौन अपराधों के मामले की जांच या विचारण बंद कमरे में किया जाएगा और ऐसी जांच या विचारण में न्यायालय किसी व्यक्ति को उस कमरे या भवन में, जो न्यायालय द्वारा उपयोग में लाया जा रहा है, प्रवेश करने, होन या रहने की अनुज्ञा दे सकेगा ।

(ग) धारा 327 की उपधारा (2) में निर्दिष्ट बंद कमरे की कार्यवाहियों के संबंध में किसी व्यक्ति द्वारा किसी बात को न्यायालय की पूर्व अनुज्ञा के बिना मुद्रित या प्रकाशित करना विधि सम्मत नहीं होगा ।

(घ) संहिता के अधीन बलात्संग के पीड़ित की पहचान के कतिपय प्रकाशन दंडनीय होंगे :

भारतीय दंड संहिता, 1860 की धारा 228क में बलात्संग पीड़ित की पहचान प्रकाशित करने के लिए दंड का उपबंध किया गया है ।

(ङ) साक्षी बनाम भारत संघ : 2004(6) स्केल 15, मामले में उच्चतम न्यायलय ने अभिनिर्धारित किया है कि जहां पीड़ित के साक्ष्य के रिकार्ड करने के दौरान वीडियो स्क्रीन का प्रयोग किया जाता है वहां धारा 273 के उपबंधों की की गई इस आशय की अपेक्षा पूरी हुई समझी जाएगी कि साक्ष्य अभियुक्त की उपस्थिति में रिकार्ड किया जाएगा ।

(च) संहिता की धारा 299 में भी कतिपय अपवाद दिए गए हैं । इस धारा का शीर्षक है 'अभियुक्त की अनुपस्थिति साक्ष्य का अभिलेख' । इसके अन्तर्गत ऐसे मामले आते हैं जहां अभियुक्त या तो फरार हो गया है या उसके तुरन्त गिरफ्तार किए जाने की कोई संभावना नहीं है ।

(iii) धारा 173(5) में कहा गया है कि जब धारा 173 के अधीन पुलिस की रिपोर्ट न्यायालय में फाइल की जाती है तब पुलिस अधिकारी मजिस्ट्रेट को रिपोर्ट के साथ भेजेगा -

(क) वे सभी दस्तावेज या उनके सुसंगत उद्धरण, जिन पर निर्भर करने का अभियोजन का विचार है और जो उससे भिन्न हैं जिन्हें अन्वेषण के दौरान मजिस्ट्रेट कोपहले ही भेज दिया गया है।

(ख) उन सभी वादियों के जिनकी साक्षियों के रूप में परीक्षा करने का अभियोजन का विचार है, धारा 161 के अधीन अभिलिखित कथन ।

परन्तु धारा 173(6) के अधीन एक अपवाद है।

दंड प्रक्रिया संहिता, 1973 की धारा 173(6) के अधीन भी, जो अन्वेषण के पूरा होने पर पुलिस रिपोर्ट का निर्देश करती है(चार्जशीट), कतिपय अपवाद जिन्हें संविधिक मान्यता प्राप्त है । उपधारा (6) का पाठ निम्नलिखित है :

"धारा 173(6) : यदि पुलिस अधिकारी की यह राय है कि ऐसे किसी कथन (धारा 161 के अधीन किया गया कथन) का कोई भाग कार्यवाही की विषय-वस्तु से सुसंगत नहीं है या उसे अभियुक्त को प्रकट करना न्याय के हित में आवश्यक नहीं है और लोकहित असमीचीन है तो वह कथन के उस भाग को उपदर्शित करेगा और अभियुक्त को दी जानी वाली प्रतिलिपि में उस भाग को निकाल देने के लिए निवेदन करते हुए और ऐसा निवेदन करने के अपने कारणों का कथन करते हुए एक नोट मजिस्ट्रेट को भेजेगा ।"

(iv) संहिता की धारा 317 के अधीन कतिपय मामलों में, जहां न्यायाधीश या मजिस्ट्रेट का उन कारणों से जो अभिलिखित किए जाएंगे, समाधान हो जाता है कि न्याय के हित में न्यायालय के समक्ष अभियुक्त की वैयक्तिक हाजिरी आवश्यक नही है या अभियुक्त न्यायालय की कार्यवाही में बार-बार विघ्न डालता है, वहां जांच और अभियुक्त की अनुपस्थिति में किए जा सकेंगे ।

(v) संहिता में साक्षियों की परीक्षा और प्रतिपरीक्षा के लिए प्रक्रिया विनिर्दिष्ट की गई है । संहिता की धरा 231(2) में यह उपबंध किया गया है कि सेशन न्यायालय में विचारण में अभियोजन पक्ष अपना साक्ष्य नियत की गई तारीख को दे सकेगा प्रतिरक्षा पक्ष प्रतिपरीक्षा कर सकेगा या प्रतिपरीक्षा के बाद की कोई अन्य तारीख नियत की जा सकती है । धारा 242(2) पुलिस की रिपोर्ट पर संस्थित किए गए मामले में अभियुक्त को प्रतिपरीक्षा और मजिस्ट्रेट द्वारा वारंट प्रक्रिया के अधीन विचारण किए जाने की अनुज्ञा देती है । धारा 246(4) में पुलिस रिपोर्ट से अन्यथा आधार पर संस्थित किए गए वादों में मजिस्ट्रेट द्वारा जारी किए गए वारंट के मामलों के विचारण में अभियोजन साक्षी की प्रतिपरीक्षा का उपबंध किया गया है । परन्तु प्रफुल देसाई : 2003(4) एस सी सी 601, के मामले में उच्चतम न्यायालय के निर्णय के अनुसार अब साक्षियों की परीक्षा वीडियो कांफ्रेंस द्वारा की जा सकेगी ।

सारांश

इस प्रकार, दंड प्रक्रिया संहिता, 1973 के उपर्युक्त उपबंध यह दर्शाते हैं कि न तो खुले सार्वजनिक विचारण का अधिकार पूर्ण है और न ही अभियुक्त की उपस्थिति में अभियोजन साक्षियों की परीक्षा का अधिकार । जैसाकि ऊपर दर्शाया गया है इनके बहुत से अपवाद हैं ।

हमारे देश में कुछ अन्य विशेष विधियां प्रवर्तन में हैं जिनमें पीड़ित व्यक्ति के निष्पक्ष विचारण के अधिकार के विरूद्ध खुल सार्वजनिक विचारण के अभियुक्त के अधिकार के बारे में भी अपवादों का प्रावधान किया गया है । राज्य का हित भी निष्पक्ष न्याय व्यवस्था में है । राज्य के हित की अपेक्षा है कि पीड़ित और साक्षी निर्भय होकर और किसी प्रकार के अभित्रास के बिना अभिसाक्ष्य दें और न्यायाधीश को इस उद्देश्य की प्राप्ति के लिए पर्याप्त शक्तियां दी जांए । यह अध्यारोही सिद्धान्त है जिसका निर्देश विस्काऊंट हाल्डेन ने स्कॉट बनाम स्कॉट :(1913) ऐ सी 417 मामले में किया है ।

आतंकवादियों के मामलों के विचारण या विधि विरूद्ध क्रियाकलापों संबंधी विशिष्ट विधियों के विषय में भारतीय संसद ने पहले ही कुछ विशेष प्रक्रियाएं बनाई हैं जो एक सन्तुलकारी अधिनियम में दी गई हैं । हम उनका निर्देश आगामी अध्याय (अध्याय - तीन) में करेंगे ।

अध्याय-तीन

भारत में विशिष्ट विधियों के अधीन पीड़ित और साक्षी की पहचान के संरक्षण से संबंधित कतिपय विषय

सर्वप्रथम, 1985 में, विधानमंडल ने कतिपय विशिष्ट विधियों में 'साक्षी पहचान' को संरक्षण का सिद्धान्त पुरःस्थापित करना उपयुक्त समझा था और यह सिद्धान्त आतंकवादी क्रियाकलाप निवारण विधियों से आरम्भ हुआ। अब हम उन विधियों का निर्देश करेंगे ।

कतिपय विशिष्ट विधियां : साक्षी की पहचान को संरक्षण

(i) आतंकवादी और विध्वंसक क्रियाकलाप (निवारण) अधिनियम, 1985 (इस बीच निरसित किया गया) में पहली बार साक्षी अनामता का प्रारंभ हुआ ।

वर्ष 1985 में, संसद ने आतंकवादी क्रियाकलापों से निपटने के लिए 'टाडा' अधिनियमित किया और संसद ने सही रूप में यह महसूस किया कि जब तक पीड़ितो और साक्षियों को पर्याप्त संरक्षण नहीं दिया जाता तब तक इस प्रकार के कष्टकारी संकट से निपटना संभव नहीं है। इस अधिनियम की धारा 13 में साक्षी की पहचान के संरक्षण के लिए एक प्रक्रिया अधिकथित की गई है। इसका पाठ निम्नलिखित है :

> "धारा 13. (1) संहिता में किसी बात के होते हुए भी, अभिहित न्यायालय के समक्ष सभी कार्यवाहियां बंद कमरे में की जाएंगी।
>
> परन्तु यह कि जहां लोक अभियोजक इस प्रकार आवेदन करता है वहां कोई कार्यवाही या उसका भाग खुले न्यायालय में किया जा सकेगा।

(2) अभिहित न्यायालय अपने समक्ष किसी कार्यवाही में किसी साक्षी द्वारा या किसी साक्षी के संबंध में लोक अभियोजक द्वारा आवेदन किए जाने पर या स्वप्रेरणा से साक्षी की पहचान और उसका पता गोपनीय रखने के लिए ऐसे उपाय कर सकेगा जो वह ठीक समझे।

(3) विशिष्टतया और उपधारा (3) के उपबंधों की व्यापकता पर प्रतिकूल प्रभाव डाले बिना, उन उपायों के अन्तर्गत जो अभिहित न्यायालय उस उपधारा के अधीन कर सकेगा, निम्नलिखित उपाय हैं :

(क) किसी ऐसे स्थान में कार्यवाहियां करना जिसे अभिहित न्यायालय द्वारा विनिश्चित किया जाएगा ;

(ख) अपने आदेशों या निर्णयों में या मामले के किसी अभिलेख में, जो जनता की पहुंच में है, साक्षियों के नाम और पते का उल्लेख करने से बचना;

(ग) यह सुनिश्चित करनेके लिए कि साक्षियों की पहचान और पते प्रकट न हो जाएं, काई निदेश जारी करना ;

(4) कोई व्यक्ति, हो उपधारा (3) के अधीन जारी किए गए किसी निदेश का उल्लंघन करेगा, कारावास से, जिसकी अवधि एक वर्ष तक की जा सकेगी, और जुर्माने से, जो एक हजार रूपए तक का हो सकेगा, दंडनीय होगा ।" (बल दिया गया)

(ii) आतंकवादी और विध्वंसक क्रियाकलाप (निवारण) अधिनियम, 1987 (टाडा 1987) शर्तों क अधीन साक्षी की अनामता जारी है

1985 के अधिनियम के स्थान पर कुछ परिवर्तनों के साथ 1987 का अधिनियम लाया गया । हम धारा से, अर्थात् धारा 16 में उद्धृत करना नहीं चाहते परन्तु केवल किए गए परिवर्तनों का निर्देश करना चाहेंगे।

1987 के अधिनियम की धारा 16 के उपबंध 'टाडा' की धारा 13 के समान ही थे परन्तु उनमें थोडा सा परिवर्तन किया गया । नए अधिनियम की धारा 16 में आतंकवादी क्रियाकलापों के संबंध में विचारण के सभी मामलों में, अभिहित न्यायालय के समक्ष कार्यवाहियां बंद कमरे में किया जाना, आज्ञापक नहीं है । ऐसा करना, जहां परिस्थितयों के अनुसार अपेक्षित हो, न्यायालय को विवेकाधिकार पर छोडा गया है। इसके साथ ही धारा 16(3)(घ) में न्यायालय को लोकहित में इस आशय का निदेश देने की शक्ति प्रदान की गई है कि ऐसे किसी न्यायालय के समक्ष लंबित सभी या किन्हीं कार्यवाहियों को किसी भी रीति में प्रकाशित नहीं किया जाएगा।

करतार सिंह बनाम पंजाब राज्य :1994(3) एस सी सी 569 मामले में, धारा 16 की वैधता को चुनौती दी गई परन्तु उसे वैध ठहराया गया ।

(iii) आतंकवाद निवारण अधिनियम, 2002
शर्तों के साथ साक्षी की अनामता जारी रखी गई (इस बीच 21.9.2004 से निरसित किया गया)

'पोटा' 2002 द्वारा 'टाडा' 1987 का निरसन कर दिया गया । 'पोटा' में धारा 30 कार्यवाहियों को बंद कमरे में किया जाना और साक्षी की पहचान को संरक्षण देने के विषय से संबंधित है। इस अधिनियम में भी न्यायालय की शक्तियों के बारे में कुछ और परिवर्तन किए गए हैं। धारा 30 का पाठ निम्नलिखित है :

" धारा 30. (1) संहिता में किसी बात के होते हुए भी, यदि विशेष न्यायालय ऐसी वांछा करता है तो इस अधिनियम के अधीन कार्यवाहियां, लेखबद्ध किए जाने वाले कारणों से, बंद कमरे में की जा सकेंगी।

(2) विशेष न्यायालय, अपने समक्ष किसी कार्यवाही में किसी साक्षी या ऐसे साक्षी के संबंध में लोक अभियोजक द्वारा आवेदन किए जाने पर या स्वप्रेरणा से, अपना यह समाधान हो जाने पर कि ऐसे साक्षी का जीवन खतरे में है, लेखबद्ध किए जाने वाले कारणों से ऐसे साक्षी की पहचान और उसका पता गोपनीय रखने के लिए ऐसे उपाय कर सकेगा जो वह ठीक समझे ।

(3) विशिष्टया और उपधारा (2) के उपबंधों की व्यापकता पर प्रतिकूल प्रभाव डाले बिना, उन उपायों के अन्तर्गत, जो विशेष न्यायालय उस उपधारा के अधीन कर सकेगा, निम्नलिखित हैं --

(क) किसी ऐसे स्थान में कार्रवाई करना जो विशेष न्यायालय द्वारा विनिश्चित किया जाए;

(ख) अपने आदेशों या निर्णयों में अथवा मामले के ऐसे किसी अभिलेख में, जो जनता की पहुंच में है, साक्षियों के नाम और पते का उल्लेख करने से बचना;

(ग) साक्षियों की पहचान और उनके पते प्रकट न होने देने को सुनिश्चित करने के लिए को ई निदेश जारी करना;

(घ) ऐसा विनिश्चय करना कि यह आदेश करना लोक हित में कि ऐसे किसी न्यायालय के समक्ष लम्बित सभी या किन्हीं कार्यवाहियों को किसी भी रीति में प्रकाशित नहीं किया जाएगा ।

(4) कोई व्यक्ति, जो उपधारा (3) के अधीन किए गए किसी विनिश्चय या जारी किए गए निदेश का उल्लंघन करता है, कारावास से, जिसकी अवधि एक वर्ष तक की हो सकेगी और जुर्माने से जो एक हजार रूपए तक का हो सकेगा, दंडनीय होगा ।"

'पोटा' 2002 में किए गए परिवर्तन जो उपधारा (1) और उपधारा (2) में अन्तर्विष्ट हैं, निम्नलिखित हैं :

(i) न्यायालय को कार्यवाहियां बंद कमरे में करने के लिए और इस निष्कर्ष पर पहुंचने के लिए कि ऐसे साक्षी का जीवन खतरे में है, कारण लेखबद्ध करने होंगे।

(ii) उपधारा (3) में इस आशय का एक अतिरिक्त खंड (घ) जोड़ा गया कि 'लोकहित' में भी न्यायालय की कार्यवाहियों का प्रकाशन नहीं किया जा सकेगा।

धारा 30 के उपबंधों की विधि मान्यता का पीयूसीएल बनाम भारत संघ: 2003(10) स्केल 967 मामले में समर्थन किया गया।

हमने करतार सिंह और पीयूसीएल के मामलों के बारे में परामर्शी-पत्र के पैरा 5.9 और 5.16 में विस्तार से चर्चा की है।

'पोटा' को आतंकवाद निवारण (निसरन) अधिनियम, 2004 द्वारा 21.9.2004 से निरसित कर दिया गया है।

(iv) विधिविरूद्ध क्रियाकलाप (निवारण) संशोधन अधिनियम, 2004 (21.9.2004 से संशोधित)

अगस्त, 2004 में हमारे परामर्शी-पत्र के प्रकाशन के बाद 'पोटा' का निरसन किया गया और विधिविरूद्ध क्रियाकलाप (निवारण) अधिनियम, 1967 का संशोधन किया गया जो 21.9.2004 से प्रभावी हुआ ।

यह अधिनियम विधिविरूद्ध क्रियाकलापों के लिए और आतंकवादी कार्यों के लिए लागू होता है। अधिनियम की धारा 2(च) में विधिविरूद्ध क्रियाकलापों को निम्नलिखित रूप में परिभाषित किया गया है :

"2(च) किसी व्यष्टिक या संगम के संबंध में, 'विधिविरूद्ध क्रियाकलाप' से अभिप्रेत है ऐसे व्यष्टिक या संगम द्वारा की गई कोई कार्रवाई (चाहे किसी कार्य द्वारा या शब्दों द्वारा, चाहे बोलने या लिखने द्वारा, या चिन्हों या स्पष्ट अभिनय द्वारा अथवा अन्यथा द्वारा करना) -

(i) आशयित, या किसी दावे का समर्थन करता है, किसी भी आधार पर मोडता है चाहे जो भी हो, भारत के राज्यक्षेत्र के किसी भाग का अध्यर्पण करता है अथवा संघ से भारत के रज्यक्षेत्री को विलग करता है, अथवा जो किसी व्यष्टिक या व्यष्टिकों के समूह को ऐसे अध्यर्पण या विलग करने के लिए उकसाता है;

(ii) जो आक्षेपों को अस्वीकार करता है, भारत की राज्यक्षेत्रीय प्रभुसत्ता और अखंडता को विध्वस्त करता है या विध्वस्त किए जाने के लिए आशयित है;

(iii) जो भारत के विरूद्ध द्रोह करता है या किए जाने के लिए आशयित है।"

धारा 2(त) में 'आतंकवादी कार्य' को परिभाषित किया गया है और यह कहा गया है कि इसका अर्थ वही है जो धारा 15 में दिया गया है। धारा 15 में 'आतंकवादी कार्य' को परिभाषित किया गया है और यह 'पोटा' की धारा 3 में अन्तर्विष्ट परिभाषा की शब्दशः पुरनावृत्ति है और केवल तीन स्थानों पर 'या किसी अन्य देश' शब्द और जोडे गए हैं ।

उपर्युक्त अधिनियम की धारा 44(1) से (4) का शीर्षक 'साक्षी का संरक्षण' है और इसकी भाषा 'पोटा',2002 की धारा 30(1) से (4) के समान ही हैं । अतः हम इसे दोहराना नहीं चाहते । स्पष्टतः उच्चतम न्यायलय द्वारा पीयूसीएल मामले के निर्णय में दिए गए कारणों से धारा 44 के उपबंध विधिमान्य समझे जाने चाहिए।

(v) किशोर न्याय (बालकों की देखरेख और संरक्षण)अधिनियम, 2000- किशोर की पहचान को संरक्षण

किशोर न्याय (बालकों की देखरेख और संरक्षण)अधिनियम, 2000 की धारा 21 में इस अधिनियम के अधीन किसी कार्यवाही में अंतर्ग्रस्त किशोर के नाम आदि के प्रकाशन को प्रतिबंधित किया गया है । धारा 21 का पाठ निम्नलिखित है :

"धारा 21 : (1) किसी समाचार पत्र, पत्रिका या समाचार पृष्ठ या दृश्य माध्यम से इस अधिनियम के अधीन विधि का उल्लंघन करने वाले किशोर क बारे में किसी जांच की किसी रिपोर्ट में किशोर का नाम, पता या विद्यालय या अन्य विशिष्टियां, जिनसे किशों का पहचाना जाना प्रकल्पित हो, प्रकट नहीं की जाएगी और न ही किशोर का कोई चित्र ही प्रकशासित किया जाएगा।"

परन्तु जांच करने वाला प्राधिकारी ऐसा प्रकटन ऐसे कारणों से जो लेखबद्ध किए जाएंगे तब अनुज्ञात कर सकेगा जब ऐसा प्रकटन उसकी राय में किशोर के हित में है।

(vi) यौन अपराध और पीड़ित 'स्क्रीनिंग'

विधि आयोग (2002) की 172वीं रिपोर्ट में स्क्रीनिंग प्रक्रिया स्वीकार की गई है :

हमने विधि आयोग की इस रिपोर्ट के बारे में परामर्शी-पत्र के पैरा 4.5 में विस्तार से निर्देश किया है।

साक्षी बनाम भारत संघ मामले में उच्चतम न्यायालय द्वारा किए गए निर्देश के अनुसरण में विधि आयोग ने बलात्संग विधियों के पुनरीक्षण का विषय (172वी रिपोर्ट 2000) अध्ययन करने के लिए लिया था। अध्ययन के दौरान गैर सरकारी संगठन साक्षी द्वारा विधि आयोग से यह आग्रह किया गया कि वीडियो टेप साक्षात्कार और क्लोज्ड सर्किट टेलीविजन के उपयोग को यौन अपराधों के पीड़ितों का, विशेषकर बालकों और अल्पवयस्कों का, साक्ष्य लेने के समय अनुज्ञा दी जानी चाहिए । यह आग्रह किया गया था कि ऐसे मामलों की विचारण प्रक्रिया में निम्नलिखित सम्मिलित किए जाने चाहिए :

(i) बालक के कथन के समर्थन में बालक के कथन के लिए वीडियो टेप साक्षात्कार के उपयोग की अनुज्ञा दी जानी चाहिए ;

(ii) बालक को क्लोज्ड सर्किट टेलीविजन के माध्यम से या स्क्रीन के पीछे से साक्ष्य देने की अनुमति होनी चाहिए ताकि जिन कार्यों के बारे में शिकायत की गई है उनका पूर्ण और स्पष्ट विवरण प्राप्त किया जा सके ;

(iii) न्यायाधीश द्वारा की जानी वाली अल्पवयस्को की प्रतिपरीक्षा लिखित प्रश्नों पर आधारित होनी चाहिए जो अल्पवयस्क के साक्ष्य को देखकर प्रतिरक्षा द्वारा प्रस्तुत किए जाएंगे ;

(iv) जब कभी किसी बालक का साक्ष्य देना अपेक्षित हो, तब, जब बालक चाहे, पर्याप्त अन्तराल दिया जाना चाहिए।

विधि आयोग ने इन सुझावों पर विचार किया परन्तु इन्हें स्वीकार नहीं किया। आयोग ने दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 273 का निर्देश किया जिसमें कहा गया है कि "अभिव्यक्त रूप से जैसा उपबंधित है उसके सिवाय, विचारण या अन्य कार्यवाही के अनुक्रम में लिया गया साक्ष्य अभियुक्त की उपास्थिति या जब उस वैयक्तिक हाजिरी से अभिमुक्त कर दिया गया है, तब उसक प्लीडर की उपस्थिति में लिया जाएगा"। आयोग ने पीड़ित और अभियुक्त के एक स्क्रीन लगाए जाने पर सहमति व्यक्त की थी । आयोग ने धारा 273 के लिए निम्नलिखित परन्तुक का भी सुझाव दिया :

"परन्तु यह कि जहां सोलह वर्ष से अल्पायु वाले किसी व्यक्ति का साक्ष्य, जो यौन प्रहार या किसी यौन अपराध का कथित पीड़ित है, अभिलिखित किया जाए तब, न्यायालय, अभियुक्त का प्रतिपरीक्षा का अधिकार सुनिश्चित करते हुए, यह सुनिश्चित करेन के लिए उपयुक्त उपाय करेगा कि ऐसा व्यक्ति अभियुक्त के सामने न आने पाए।"

(viii) पीड़ित और साक्षी स्क्रीनिंग : साक्षी बनाम भारत संघ : 2004(6) स्केल 15 :

उच्चतम न्यायालय के समक्ष 172वीं रिपोर्ट प्रस्तुत किए जाने के पश्चात्, न्यायालय ने साक्षी बनाम भारत संघ : 2004(6) स्केल 15, मामले में अपना निर्णय पारित किया।

उच्चतम न्यायालय ने साक्षी बनाम भारत संघ : 2004(6) स्केल 15, मामले में, कोई सांविधि न होने की स्थिति में यौन अपराधों तथा अन्य विचारणों के लिए वीडियो कांफ्रेंसिंग और लिखित प्रश्नों के सुझाव को स्वीकार कर लिया।

साक्षी द्वारा विधि आयोग को दिए गए सुझावों में से न्यायालय ने तीन सुझावों को स्वीकार कर लिया, अर्थात्-

(i) वीडियो कांफ्रेंसिंग प्रक्रिया ; और

(ii) साक्षियों से पूछे जाने के लिए उन्हें लिखित प्रश्न दिया जाना ;

(iii) साक्ष्य लेखबद्ध करते समय पर्याप्त अन्तराल दिया जाना ।

ये सुझाव विधि आयोग द्वारा अपनी रिपोर्ट में सुझाए गए स्क्रीनिंग प्रणाली के सुझाव के अतिरिक्त थे।

26.5.2004 को साक्षी के मामले में उच्चतम न्यायालय द्वारा निर्णय दिए जाने तक, न्यायालय ने एक अन्य मामले, महाराष्ट्र राज्य बनाम डा.प्रफुल बी. देसाई : 2003 (4) एस सी सी 60, (जो चिकित्सा उपेक्षा के आरोपों से संबंधित था) वीडियो कांफ्रेंसिंग द्वारा एक विदेशी चिकित्सा विशेषज्ञ का साक्ष्य लेखबद्ध करने की अनुज्ञा दी थी। उस मामले में, उच्चतम न्यायालय ने मैरीलैण्ड बनाम क्रेग : (1990) 497 यूएस 836, (यूएस सुप्रीम कोर्ट द्वारा निर्णीत) मामले का अनुसरण किया।

साक्षी के मामले में, उच्चतम न्यायलय ने प्रफुल बी देसाई मामले का अनुसरण करे हुए यह स्वीकार किया कि वीडियो कांफ्रेंस द्वारा दिया गया साक्ष्य धारा 273 की अपेक्षाओं के अनुकूल समझा जाना चाहिए जिसमें कहा गया है कि विचारण या अन्य कार्यवाहियों के अनुक्रम में सभी साक्ष्य "अभियुक्त की हाजिरी" में लिए जाएंगे, और इसका यह अर्थ भी नहीं है कि अभियुक्त सासक्षी को पूरी तरह देख सके। उच्च न्यायालय ने साक्षी के मामले में निम्नलिखित विचार व्यक्त किया (पृष्ठ 34) :

"दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 273 में केवल इतनी अपेक्षा की गई है कि साक्ष्य अभियुक्त की हाजिरी में लिया जाना चाहिए। तथापि, धारा में यह नहीं कहा गया है कि अभियुकत पीड़ित या साक्षी को पूरी तरह देख सके। धारा 273 के उपबंधों को ध्यान में रखते हुए वीडियो कांफ्रेंसिंग प्रणाली से साक्ष्य का लेखबद्ध किया जाना, न्यायालय के महाराष्ट्र राज्य बनाम डा.प्रफुल देसाई : 2003(4) एस सी सी 601 मामल में दिए गए हाल ही के निर्णय में अनुज्ञेय अभिनिर्धारित किया गया है।"

उच्चतम न्यायालय ने यह बताने के पश्चात् कि पीड़ित और साक्षियों को निर्विघ्न रूप से साक्ष्य देने की या स्क्रीन लगाए जा कर साक्ष्य देने की अनुमति होनी चाहिए, अपने निदेशों मे निम्नलिखित निदेश भी दिए (पृष्ठ 35) :

"बाल यौन उत्पीडन या बलात्संग का विचारण करने में -

(i) किसी स्क्रीन या ऐसी ही कोई अन्य व्यवस्था की जानी चाहिए जहां पीड़ित या साक्षी (जो पीड़ित के मसन ही असुरक्षित हो सकेगा) अभियुक्त को सशरीर या उसका चेहरा न देख सके ;

ii) अभियुक्त की ओर से प्रतिपरीक्षा में पूछ जाने वाजे प्रश्न, जहां तक वे सीधे घटना से संबंधित हैं, न्यायालय के पीठासीन अधिकारी को लिखित में दिए जाने चाहिए जो उन्हें पीड़ित या साक्षी से ऐसी भाषा में पूछ सकेगा जो स्पष्ट होगी और परेशान करने वाली नहीं होगी ;

(iii) बाल उत्पीडन या बलात्संग के पीड़ित को, न्यायालय में साक्ष्य देने के समय, जब कभी अपेक्षा की जाए, पर्याप्त अन्तराल दिए जाने चाहिए।"

साक्षी के मामले में, उच्चतम न्यायालय द्वारा दिए गए उपर्युक्त निदेशें से यह देखा जा सकेगा कि विधि आयोग द्वारा दिए गए स्क्रीनिंग के सुझाव के अतिरिक्त वीडियो कांफ्रेंसिंग और लिखित प्रश्न स्वीकार किए गए थे। यह अभिनिर्धारित किया गया कि इन प्रक्रियाओं से धारा 273 के उपबंधों का उल्लंघन नहीं होता है जिनमें यह अपेक्षा की गई है कि विचारण अभियुक्त की उपस्थिति में होना चाहिए।

सारांश

स्थिति के संक्षिप्त विवरण से यह देखा जा सकेगा कि दांडिक विचारण के विभिन्न पहलु हैं, अर्थात् अभियुक्त के लाभार्थ खुले विचारण का अधिकार और जनता को विचारण की कार्यवाहियों के संचालन के बारे में जानने का अधिकार है, और अभियुक्त को अधिकार है कि विचारण उसकी उपस्थिति में किया जाना चाहिए। परन्तु ये अधिकार परिपूर्ण नहीं हैं।

इनके विरूद्ध, यौन अपराधों के पीडितों को गोपनीयता अधिकार है, मीडिया या अन्य के द्वारा जिसका उल्लंघन किया जाना दंडनीय है। जब पुलिस न्यायालय में आरोप-पत्र फाइल करती है तब साक्षियों की पहचान गोपनीय रखने के लिए उपबंध विद्यमान हैं। आतंकवादियो के मामलों के विचारण के लिए विशिष्ट विधियां है जिनमें ऐसे साक्षियों की पहचान को संरक्षण देने के लिए उपबंध किए गए हैं जिनकी पहचान विचारण तथा जांच के दौरान गोपनीय रखी जानी चाहिए।

इसके साथ ही, विधि आयोग की सिफारिशें है कि यौन अपराधों के मामलों में पीड़ित (जब पीड़ित साक्ष्य देगा) और अभियुक्त एक पर्दा लगाया जा सकेगा ताकि पीड़ित साक्ष्य देते समय अधिक स्वतंत्र और निर्विघ्न रहे। अन्त में, उच्चतम न्यायालय ने साक्षी के मामले में अपने निर्णय में वीडियो कांफ्रेंसिंग (एक वीडियो सार्किट प्रणाली) तथा पीड़ित और साक्षियों को प्रश्नों की सूची देने जैसे उपायों को स्वीकार करके प्रक्रिया का विस्तार कर दिया है और न्यायालय ने यह भी कहा है कि इन प्रक्रियाओं से अपनी उपस्थिति में खुले विचारण के अभियुक्त के अधिकार के सिद्धान्त का उल्लंघन नहीं होता है।

उपर्युक्त विशेष अपराधों को छोडकर, जहां तक साक्षी की सुरक्षा और पीड़ित की पहचान को संरक्षण देने संबंधी विधि का संबंध है, उसके अन्तर्गत अभी तक ऐसे गंभीर अपराध नहीं आते हैं जहां साक्षियों ति उनके निकट संबंधियों को जान-माल का खतरा है। अभी तक ऐसा संरक्षण केवल आतंकवादी तथा यौन अपराधों आदि के विशिष्ट मामलों के लिए ही सीमित है। प्रश्न यह है कि ऐसा संरक्षण अन्य गंभीर अपराधों में जांच तथा विचारण के लिए भी दिया जाना चाहिए। वास्तव में, गंभीर अपराधों के अन्य प्रकार के मामलों में साक्षी की पहचान को संरक्षण देना परामर्शी-पत्र के साथ संलग्न प्रश्नावली के प्रश्न 3 का एक भाग था।

गंभीर अपराधों के अन्य मामलों में साक्षियों की पहचान को संरक्षण देने के प्रश्न पर विचार करने से पूर्व, हम परामर्शी-पत्र के साथ संलग्न प्रश्नावली में दिए गए प्रश्नों पर प्राप्त विभिन्न प्रतिक्रियाओं का निर्देश करेंगे।

अध्याय-चार

परामर्शीपत्र के अध्याय-आठ में दी गई प्रश्नावली पर प्रतिक्रियाएं

महत्वपूर्ण प्रश्नों पर चर्चा आरम्भ करने से पूर्व, प्रश्नावली पर प्राप्त हुई प्रतिक्रियाओं का विश्लेषण करना आवश्यक है ।

परामर्शीपत्र पर प्रतिक्रियाएं

साक्षी की अनामता और साक्षी सुरक्षा कार्यक्रमों का विषय दांडिक न्याय प्रणाली में सम्यक् प्रक्रियाओं के प्रक्रियात्मक पहलूओं से संबंधित है । इसलिए, विधि आयोग ने दांडिक न्याय प्रणाली से संबंध रखने वाले सभी महत्वपूर्ण पक्षों से उनके विचार और सुझाव प्राप्त करना आवश्यक समझा है । सुसंगत प्रश्नों पर सभी महत्वपूर्ण अभिकरणों और व्यक्तियों से प्रतिक्रियाएं प्राप्त करने के उद्देश्य से आयोग ने अगस्त, 2004 में एक विस्तृत परामर्शीपत्र, उसके सारांश और प्रश्नावली सहित, परिचालित किया और यह संघ सरकार, सभी राज्यों के पुलिस महानिदेशकों, उच्चतम न्यायालय और उच्च न्यायालयों के न्यायाधीशों, बार एसोसिएशनों, केन्द्र तथा राज्यों के मानवाधिकार आयोग को भेजा गया था । परामर्शीपत्र विधि आयोग की वैबसाइट पर भी दिया गया था ।

परामर्शीपत्र को न केवल देश में अपितु देश के बाहर से भी व्यापक मान्यता प्राप्त हुई । विभिन्न गोष्ठियों में व्यक्त किए गए विचारों के अतिरिक्त, आयोग को लिखित में 52 प्रतिक्रियाएं प्राप्त हुई हैं । प्रत्यार्थियों में, 11 राज्य सरकारों से, 1 राज्य विधि आयोग से, 12 पुलिस महानिदेश/महानिरीक्षकों से, 3 उच्च न्यायालयों के न्यायाधीशों से और 2 अधीनसथ न्यायालयों के न्यायाधीशां से, 3 अन्तर्राष्ट्रीय तथा अन्य संगठनों से और शेष 20 न्यायविदों, अधिवक्ताओं, लोक अभियोजकों तथा अन्य विधिवेत्ताओं से प्राप्त हुईं । 40 से अधिक प्रत्यार्थियों ने प्रश्नावली पर अपने उत्तर भेंजे हैं । जबकि शेष ने सामान्य रूप में अपने विचार/सुझाव व्यक्त किए हैं । प्रत्यार्थियों द्वारा दिए गए प्रत्येक प्रश्न के उत्तरों पर नीचे चर्चा की जाएगी ।

(प्रश्न 1) क्या किसी दांडिक मामले में साक्षी की अनामता, अन्वेषण, जांच और विचारण के सभी तीनों स्तरों पर और अपील के स्तर पर भी रखी जानी चाहिए?

जैसाकि हम सभी जानते हैं, दांडिक मामले अन्वेषण, जांच और विचारण - तीनों स्तरों से गुजरते हैं । विचारण पूरा हो जाने पर न्यायालय आदेश/निर्णय पारित करता हैं और उसके पश्चात् अपील/पुनरीक्षा की स्थिति आरम्भ होती है । यदि किसी साक्षी के संबंध में अनामता रखे जाने की आवश्यकता है तब प्रश्न यह उठता है कि क्या यह उपर्युक्त सभी स्तरों पर बनाई रखी जानी चाहिए या क्या यह किसी विशेष स्तर तक सीमित रहनी चाहिए?

अधिकांश प्रत्यर्थियों ने (43 में से 36 ने) यह मत व्यक्त किया है कि अनामता अपील के स्तर सहित सभी तीनों स्तरों पर बनाए रखी जानी चाहिए । इतना ही नही, तीन प्रत्यर्थियों का तो यह विचार था कि अनामता सदैव बनाए रखी जानी चाहिए अर्थात् मामले के अन्तिम रूप से निर्णीत हो जाने के पश्चात् भी । तथापि, कुछ प्रत्यर्थियों ने यह सुझाव दिया है कि अनामता केवल अपवाद स्वरूप मामलों में ही रखी जानी चाहिए ।

बम्बई उच्च न्यायालय के न्यायमूर्ति अनूप वी.मोहता ने यह विचार अभिव्यक्त किया है कि साक्षी की अनामता केवल विचारण स्तर तक अपेक्षित है और अपीलीय स्तर पर अनामता बनाए रखे जाने की कोई आवश्यकता नहीं है । हैदराबाद के एक लोक अभियोजक ने भी इसी प्रकार का विचार व्यक्त किया है ।

जज एडवोकेट जनरल ब्रांच से लैफ्टी. कर्नल एस.के. अग्रवाल ने यह विचार व्यक्त किया है कि अनामता केवल अन्वेषण और जांच के दौरान तथा सुपुर्दगी कार्यवाहियों, यदि कोई हो, के स्तर पर रखी जानी चाहिए । परन्तु एक बार विचारण आरम्भ हो जाने पर अनामता को प्रभावी रूप से अक्षुण नहीं रखा जा सकता । हैदराबाद से एक अधिवक्ता ने भी इसी प्रकार का विचार व्यक्त किया है ।

तमिलनाडू के अधिवक्ता ने यह विचार अभिव्यक्त किया है कि अनामता केवल अन्वेषण के स्तर पर ही रखी जा सकती है इसके पश्चात् अनामता बनाए रखने से स्वतंत्र और निष्पक्ष विचारण प्रभावित होगा । इसके विपरीत, महाराष्ट्र के एक अधिवक्ता का विचार है कि अनामता जांच तथा विचारण और अपील के स्तर पर बनाए रखी जा सकती है परन्तु अन्वेषण के दौरान अनामता नहीं रहनी चाहिए अन्यथा पुलिस को अनावश्यक शक्तियां प्राप्त हो जाएंगी ।

महाराष्ट्र के एक अन्य अधिवक्ता ने, जो महाराष्ट्र विधि आयोग के सदस्य भी हैं, यह विचार व्यक्त किया है कि भारत की सामाजिक और आपराधिक न्यायिक संरचना को देखते हुए मामले के किसी भी स्तर पर अनामता बनाए रखना व्यवहार में संभव नहीं होगा ।

(प्रश्न- 2) क्या आपके विचार में अनामता दांडिक मामलों तक ही सीमित रखी जानी चाहिए या इसे सिविल मामलों के लिए भी रखा जाना चाहिए? क्या यह प्रतिरक्षा साक्षियों को भी उपलब्ध होनी चाहिए जैसाकि अन्य देशों की कतिपय विधियों में उपबंधित है ?

कुछ देशों में, अभियोजन साक्षियों के अतिरिक्त, प्रतिपक्ष साक्षी भी अनामता के लिए आवेदन कर सकते हैं । इसी प्रकार, कतिपय परिस्थितियों में, सिविल मामलों में भी साक्षियों को अनामता के लिए आवेदन करने का अधिकार प्राप्त है । अब प्रश्न यह उठता है कि क्या भारत में भी प्रतिरक्षा साक्षियों को और सिविल मामलों के साक्षियों को भी अनामता के लिए आवेदन करने की अनुमति होनी चाहिए?

प्रतिरक्षा साक्षियों को तथा सिविल मामलों में भी साक्षियों के लिए अनामता की अनुमति होने के विषय पर प्रत्यर्थियों के बीच मतभेद हैं ।

41 प्रतिक्रियाओं में से 24 इस पक्ष में हैं कि प्रतिरक्षा साक्षियों को भी अनामता दी जानी चाहिए जबकि 17 प्रत्यर्थियों ने इस विचार का विरोध किया है । जिन 24 प्रत्यर्थियों ने इस विचार का समर्थन किया है उनमें 6 राज्य सरकारें से, 7 अन्य वरिष्ठ पुलिस अधिकारी (पुलिस

महानिदेशक/महानिरीक्षक), 3 न्यायाधीश और 8 अन्य हैं । 17 प्रत्यर्थियों में, जिन्होंने प्रतिरक्षा साक्षियों को अनामता दिए जाने का समर्थन नहीं किया है, 4 राज्य सरकारों से, 4 वरिष्ठ पुलिस अधिकारी तथा 9 अन्य हैं ।

सिविल मामलों में साक्षियों के अनामता दिए जाने के संबंध में 41 में से 10 प्रत्यर्थियों ने इसका समर्थन किया और 22 ने सिविल मामलों में साक्षियों को अनामता दिए जाने के विचार का विरोध किया है । 19 प्रत्यर्थियों में से, जिन्होंने प्रस्ताव का समर्थन किया है, 5 राज्य सरकारों से, 5 वरिष्ठ पुलिस अधिकारी और 2 न्यायाधीश तथा 7 अन्य व्यक्ति हैं । उन 23 प्रत्यर्थियों में, जिन्होंने प्रस्ताव का समर्थन नहीं किया है, 5 राज्य सरकारों से, 6 वरिष्ठ पुलिस अधिकारी, 1 न्यायाधीश और शेष 13 अन्य हैं।

(प्रश्न-3) क्या आतंकवादी और विध्वंसकारी क्रियाकलाप(निवारण) अधिनियम, 1987 की धारा 16 की उपधारा (3) और आतंकवाद निवारण अधिनियम, 2002 की धारा 30 के उपबंध, जो न्यायालय को -

अपने आदेशों, निर्णयों या जनता की पहुंच तक के किसी भी अभिलेख में साक्षियों के नाम और पतों को उल्लिखित न किए जाने का,

यह सुनिश्चित करने के लिए निदेश देने की कि साक्षियों की पहचान और पते प्रकट नहीं किए जाएंगे ; या

ऐसे निदेश देने की कि न्यायालय के समक्ष लम्बित कार्यवाहियों को किसी भी रूप में प्रकाशित नहीं किया जाएगा,-

आदेश पारित करने की अनुज्ञा देते हैं क्या वे ऐसे मामलों के लिए भी लागू होने चाहिए जिनमें गम्भीर अपराध अन्तर्ग्रस्त हैं और जहां न्यायालय का समाधान है कि ऐसी सामग्री विद्यमान है जिससे प्रथम दृष्टया साक्षी और उसके संबंधियों को उनकी जान और माल का खतरा है?

'टाडा',1987 की धारा 16 और 'पोटा', 2002 की धारा 30 के उपबंध न्यायालय को साक्षी की अनामता बनाए रखने और न्यायालय की कार्यवाहियों के प्रकाशन का निषेध करने का आदेश पारित करने की अनुज्ञा देते हैं । यद्यपि, उन दोनों अधिनियमितियों का निरसन किया जा

चुका है, विधि विरूद्ध क्रियाकलाप (निवारण) अधिनियम, 1967 में, 2004 में किए गए संशोधनों में धारा 44 द्वारा, इसी प्रकार के उपबंध किए गए हैं ।

अब प्रश्न यह है कि क्या ऐसे ही उपबंध गम्भीर अपराधों के मामलों के लिए भी, जहां ऐसा करना आवश्यक हो, लागू होंगे ?

सभी प्रतिक्रियाओं में, (एक को छोड़कर) यह मत व्यक्त किया गया है कि 'टाडा',1987 की धारा 16 और 'पोटा', 2002 जैसे समान उपबंध उन मामलों के लिए भी लागू होने चाहिए जिनमें गम्भीर अपराध अन्तर्ग्रस्त हैं, जहां साक्षी और उसके संबंधियों को जान, माल का खतरा है । तथापि, डी.आई.जी. पुलिस मुख्यालय, मध्य प्रदेश ने इस प्रकार के उपबंध का समर्थन नहीं किया है। उसने अपने उत्तर के समर्थन में कोई कारण नहीं दिया है ।

(प्रश्न-4) क्या आप इस बात से सहमत हैं कि यौन अपराधों के पीड़ितों और बाल दुर्व्यवहारों के संरक्षण के लिए बंद कमरे में कार्यवाही और दंड प्रक्रिया संहिता, 1973 की धारा 327 के अधीन ऐसी कार्यवाहियों को प्रकाशित करने पर प्रतिबंध जैसे वर्तमान सुरक्षोपाय पर्याप्त हैं और क्या आप उनके संरक्षण के लिए कोई अन्य सुझाव देते हैं?

1973 की दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 327 न्यायालय को यौन अपराधों का बंद कमरे में करने का अधिकार देती है । न्यायालय ऐसे मामलों से संबंधित किसी सामग्री के प्रकाशन को प्रतिबंधित करने का भी आदेश दे सकता है । प्रश्न यह है कि क्या ये तथा अन्य वर्तमान सुरक्षोपाय यौन अपराधों और बालकों के साथ कुकृत्यों को रोकने के लिए पर्याप्त हैं?

इस प्रश्न पर कि क्या यौन अपराधों की पीड़ितों और बालकों के साथ दुर्व्यवहारों को रोकने के लिए वर्तमान सुरक्षोपाय पर्याप्त हैं अथवा नहीं विचारों में मतभेद हैं । 42 प्रत्यर्थियों में से 22 का विचार है कि वर्तमान सुरक्षोपाय पर्याप्त हैं । इनमें से 5 प्रत्यर्थी राज्य सरकारों से, 3 न्यायाधीशों से, 5 वरिष्ठ पुलिस अधिकारी और शेष 9 अन्य हैं । शेष प्रत्यर्थी (20) या तो वर्तमान सुरक्षोपायों से

संतुष्ट नहीं हैं या उन्होंने यौन अपराधों के पीड़ितों की दशा में सुधार करने के लिए ओर सुझाव दिए हैं । इन 20 प्रत्यर्थियों में, 5 राज्य सरकारों से, 6 वरिष्ठ पुलिस अधिकारी और शेष 9 अन्य हैं ।

झारखंड राज्य सरकार ने यौन अपराधों और बाल दुर्व्यवहार जैसे पीड़ितों की स्थिति में सुधार करने के लिए, पीड़ितों को उनकी अनामता बनाए रखना, उन्हें पर्याप्त पुलिस सुरक्षा उपलब्ध कराना, उन्हें उनके निवास स्थान से अन्यत्र किसी सुरक्षित स्थान पर स्थानांतरित करना, ऐसे व्यक्तियों के साक्षात्कार के लिए वीडियो टेप की अनुमति देना, क्लोजड सर्किट टेलीविजन के न्यायालय में साक्ष्य लेना, पीड़ित और अभियुक्त के बीच एक स्क्रीन का लगाया जाना, अभियुक्त द्वारा दिए गए प्रश्नों के उत्तरों के आधार पर पीठासीन अधिकारी द्वारा प्रतिपरीक्षा किया जाना, अभियुक्त द्वारा पीड़ित या उसके संबंधियों को धमकी या अभित्रास दिए जाने को अपराध घोषित किया जाना जो सात वर्ष तक के कारावास से दंडनीय हो, इन पीड़ितों को संरक्षण देने के प्रयोजन से समुचित व्यवस्था सहित एक निदेशालय का गठन करना जैसे उपाय करने का सुझाव दिया है ।

उड़ीसा राज्य सरकार ने यह सुझाव दिया है कि साक्षी बनाम भारत संघ (2004)6 स्केल 15 मामले में उच्चतम न्यायालय की टिप्पणियों और निदेशों को इन पीड़ितों की सुरक्षा के विचार से ध्यान में रखा जाना चाहिए और दंड प्रक्रिया संहिता, 1973 की धारा 273 में उपयुक्त संशोधन किया जाना चाहिए ।

राष्ट्रीय राजधानी राज्यक्षेत्र, दिल्ली सरकार ने सुझाव दिया है कि अभियोक्त्रि को अभियुक्त तथा उसके वकील की दृष्टि से बचाया जाना चाहिए, प्रश्नों को न्यायमूर्ति के समक्ष प्रस्तुत किया जाना चाहिए जो बाद में अभियोक्त्रि से प्रश्न पूछ सकेगा और कथन अभियोक्त्रि की भाषा में ही अभिलिखित किया जाना चाहिए ।

बिहार राज्य सरकार का विचार है कि ऐसे मामलों में विचारण न्यायाधीश तथा अभियोजन और प्रतिरक्षा के महिला वकील होने चाहिए ताकि पीड़ित सुविधापूर्वक अपनी बात कह सके क्योंकि पीड़ित घटनाक्रम को सुविधापूर्वक बता सकेगी, इसलिए वह प्रतिपरीक्षा को बलात्संग से भी बुरा नहीं समझेगी ।

मणिपुर राज्य सरकार ने यह सुझाव दिया है कि वर्तमान सुरक्षोपायों के साथ-साथ ऐसी प्रत्येक कार्यवाही में साक्षी की अनामता और साक्षी सुरक्षा कार्यक्रमों को भी अपनाया जाना चाहिए ।

मणिपुर के पुलिस महानिदेशक ने सुझाव दिया है कि साक्षी के मामले में उच्चतम न्यायालय द्वारा दिए गए निदेशों को दंड प्रक्रिया संहिता में समाविष्ट किया जाना चाहिए ।

हरियाणा राज्य के पुलिस महानिदेशक ने यह सुझाव दिया है कि यौन अपराध के पीड़ितों को राज्य के व्यय पर मनोवैज्ञानिक उपचार उपलब्ध कराया जाना चाहिए ताकि वे मानसिक तथा शारीरिक रूप से स्वस्थ रह सकें ।

एक अधिवक्ता ने, जो महाराष्ट्र राज्य विधि आयोग के सदस्य भी है, यह सुझाव दिया है कि ऐसे मामले के अन्वेषण स्तर पर न्यायिक पर्यवेक्षण रखा जाना चाहिए ताकि दोषी को दंड दिया जा सके । कोसोवो नामक देश में इस प्रकार की विधि विद्यमान है ।

विधि सलाहकार/लोक अभियोजक और आन्ध्र प्रदेश के आसूचना विभाग का भी यह विचार है कि साक्षी के मामले में उच्चतम न्यायालय द्वारा दिए गए निदेशों को दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 327 में समाविष्ट किया जाना चाहिए ।

साऊथ एशिया रीजनल इनिशिएटीव/ इक्वीटी सपोर्ट प्रोग्राम नामक एक संगठन ने पीड़ित/साक्षी सुरक्षा प्रोटोकॉल का एक प्रारूप भेजा है जो एक विशेषज्ञ द्वारा तैयार किया गया है ।

(प्रश्न-5) क्या पुलिस कमीश्नर या पुलिस अधीक्षक द्वारा साक्षी या उसके संबंधियों को जान-माल का खतरा प्रमाणित करके अनामता के लिए अनुरोध करना पर्याप्त होगा या ऐसा विनिश्चय कि साक्षी या उसक संबंधियों को जान-माल का खतरा है, न्यायाधीश द्वारा उसके समक्ष प्रस्तुत किए गए साक्ष्य के आधार पर किया जाना चाहिए?

साक्षी को अनामता केवल तभी दी जा सकती है जब उसको या उसके संबंधियों को उनकी जान-माल का खतरा हो । अब प्रश्न यह है कि क्या पुलिस कमीश्नर या पुलिस अधीक्षक द्वारा खतरे का अधिप्रमाणित किया जाना पर्याप्त समझा जाना चाहिए या ऐसा निर्णय न्यायाधीश द्वारा उसके समक्ष प्रस्तुत की गई सामग्री के आधार पर किया जाना चाहिए?

इस प्रश्न पर भी मतैक्य नहीं है । 10 प्रत्यर्थियों (3 न्यायाधीश, 6 राज्य सरकारें, 3 पुलिस अधिकारी तथा 7 अन्य) का यह विचार है कि इस प्रश्न का निर्णय स्वयं न्यायाधीश द्वारा उसके समक्ष प्रस्तुत की गई सामग्री के आधार पर किया जाना चाहिए, जबकि 17 प्रत्यर्थियों (6 पुलिस अधिकारी, 2 राज्य सरकार और 9 अन्य) का विचार है कि वरिष्ठ पुलिस अधिकारियों द्वारा दिया गया प्रमाण-पत्र ही पर्याप्त होगा ।

तीन प्रत्यर्थियों (संघ राज्य क्षेत्र लक्षद्वीप, पुलिस महानिदेशक, गुजरात तथा एक अधिवक्ता) का विचार है कि न्यायाधीश तथा पुलिस अधिकारी दोनों के द्वारा ही इस प्रश्न पर निर्णय किया जा सकता है ।

इसके विपरीत, दो प्रत्यर्थियों (पंजाब राज्य सरकार और एक अधिवक्ता) का विचार है कि यह प्रश्न एक स्वतंत्र समिति को सौंपा जाना चाहिए और न तो न्यायाधीश द्वारा और न ही पुलिस अधिकारियों द्वारा इसका निर्णय किया जाना चाहिए ।

(प्रश्न-6) क्या न्यायाधीश द्वारा इस प्रश्न की कोई प्राथमिक जांच की जानी चाहिए कि क्या साक्षी का वह मामला अनामता मंजूर कए जाने के लिए उपयुक्त है अथवा नहीं? क्या इस प्रकार की प्राथमिक जांच में साक्षी की पहचान और पता गोपनीय रखा जाएगा? क्या अभियुक्त और उसके

वकील का साक्षी या उसके संबंधियों को उनके जान-माल के खतरे के प्रश्न के स्तर सुने जाने चाहिए या क्या यह बंद कमरे में एकपक्षीय जांच होनी चाहिए? क्या अभियुक्त/प्रतिरक्षा के वकील को, विशेषकर, जहां प्राथमिक जांच में पहचान और पता प्रकट न किया जाए, कोई अवसर देने से कोई उपयोगी प्रयोजन सिद्ध हो सकेगा?

जैसाकि ऊपर बताया जा चुका है, किसी साक्षी को अनामता तभी दी जा सकती है जब उसको या उसके संबंधियों को जान-माल का खतरा हो । अनामता की आवश्यकता और इस प्रकार खतरा होना सुनिश्चित करने के लिए प्रश्न यह है कि क्या न्यायाधीश द्वारा प्राथमिक जांच की जानी चाहिए? और यदि ऐसा है तो क्या अभियुक्त या उसके वकील का पक्ष सुना जाना चाहिए या क्या यह बंद कमरे में एकपक्षीय जांच होनी चाहिए?

आयोग को इस प्रश्न पर प्राप्त हुई 40 प्रतिक्रियाओं में से 24 प्रत्यर्थियों का (7 वरिष्ठ पुलिस अधिकारी, 5 राज्य सरकार, 3 न्यायाधीश और 9 अन्य) विचार है कि न्यायाधीश द्वारा प्राथमिक जांच की जानी चाहिए । मणिपुर और मेघालय राज्य सरकारों और मणिपुर तथा पंजाब के पुलिस महानिदेशकों का विचार है कि इस प्रकार की प्राथमिक जांच केवल अपवाद स्वरूप मालों के लिए ही आवश्यक होगी, सभी मामलों के लिए नहीं । पंजाब तथा उड़ीसा की राज्य सरकारों का मत है कि ऐसी प्राथमिक जांच पुलिस अधिकारियों द्वारा की जानी चाहिए न्यायाधीश द्वारा नहीं ।

तथापि, 10 प्रत्यर्थियों ने (झारखंड राज्य सरकार, गुजरात राज्य के पुलिस महानिदेशक तथा 8 अन्य) कहा है कि वे ऐसी प्राथमिक जांच के पक्ष में नहीं हैं ।

जो इस प्रकार की प्राथमिक जांच के पक्षधर हैं उनमें से अधिकांश प्रत्यर्थियों का विचार है कि ऐसी जांच में, साक्षी की पहचान गोपनीय रखी जानी चाहिए और जांच बंद कमरे में एकपक्षीय होनी चाहिए।

(प्रश्न-7) क्या उक्त प्राथमिक जांच में साक्षी द्वारा न्यायाधीश का समाधान किया जाना चाहिए कि उसको तथा उसके संबंधियों को जान-माल का गंभीर खतरा है या क्या इतना ही दर्शाना पर्याप्त होगा कि इस प्रकार के खतरे की आशंका है? क्या मात्र उसके स्वयं के कहने पर खतरे का प्रश्न अभियुक्त को साक्षी की वैयक्तिक उपस्थिति में खुले विचारण के अधिकार से वंचित रखने के लिए पर्याप्त है?

प्रश्न यह है कि क्या प्राथमिक जांच में (प्रश्न-6 में वर्णित) साक्षी को न्यायाधीश का इस विषय में समाधान करना चाहिए कि उसके तथा उसके संबंधियों के जीवन और सम्पत्ति को खतरा विद्यमान है अथवा क्या साक्षी को खतरे की आशंका दर्शाना ही पर्याप्त होगा?

कुल मिलाकर, इस प्रश्न पर 32 प्रतिक्रियाएं प्राप्त हुई हैं । इनमें से 20 (7 वरिष्ठ पुलिस अधिकारी, 5 राज्य सरकारें, 1 न्यायाधीश और 7 अन्य) प्रत्यर्थियों का विचार है कि उक्त प्राथमिक जांच में, साक्षी को अपने तथा अपने संबंधियों की जान-माल के खतरे के बारे में न्यायाधीश का समाधान करना चाहिए । अनामता की मांग करने के लिए खतरे की आशंका दर्शाना पर्याप्त नहीं होगा।

12 प्रत्यर्थियों (1 पुलिस अधिकारी, 4 राज्य सरकारें, 2 न्यायाधीश तथा 5 अन्य) ने यह विचार व्यक्त किया है कि साक्षी से अपने तथा अपने संबंधियों की जान-माल को खतरे की आशंका दर्शाने की अपेक्षा की जाएगी । ऐसा वास्तविक खतरा विद्यमान होने के बारे में न्यायाधीश का समाधान करने की आवश्यकता नहीं है ।

7 प्रत्यर्थियों ने इस प्रश्न पर कोई प्रतिक्रिया नहीं दी है क्योंकि वे इस प्रकार की प्राथमिक जांच के पक्ष में नहीं हैं ।

(प्रश्न-8) क्या दंड प्रक्रिया संहिता, 1973 की धारा 207 और 208 के अधीन जब अभियुक्त को प्रतिलिपियां/दस्तावेज उपलब्ध कराए जाते हैं, उसके पूर्व परिवादी या अभियोजन पक्ष को साक्षी की पहचान और पता प्रकट न किए जाने के लिए विचारण न्यायाधीश के समक्ष आवेदन किए जाने की आवश्यकता है?

दंड प्रक्रिया संहिता, 1973 की धारा 207 और 208 के अनुसार मजिस्ट्रेट अभियुक्त को पुलिस रिपोर्ट तथा अन्य दस्तावेजों, शिकायत तथा साक्षियों के कथन की प्रतियां निःशुल्क उपलब्ध कराएगा । इन दस्तावेजों में अवश्य ही साक्षियों के नाम और पते होते हैं । और यदि अभियुक्त को एक बार इन दस्तावेजों की प्रतियां प्राप्त हो जाती हैं, तब उसे निश्चित ही यह पता चल जाएगा कि साक्षी कौन-कौन हैं । ऐसी स्थिति में, अनामता के आदेश से कोई लाभ नहीं होगा । इस संबंध में, प्रश्न यह है कि क्या अभियोजन पक्ष या परिवादी को साक्षियों की पहचान प्रकट न करने के लिए, दस्तावेजों की प्रतियां अभियुक्त को उपलब्ध कराए जाने से पूर्व, आवेदन करना आवश्यक होगा?

सभी प्रत्यर्थियों ने, एक अधिवक्ता के सिवाय,यह मत अभिव्यक्त किया हे कि दंड प्रक्रिया संहिता, 1973 की धारा 207 और धारा 208 के अधीन अभियुक्त को दस्तावेजों की प्रतियां उपलब्ध कराए जाने से पूर्व साक्षी की पहचान प्रकट न करने के लिए परिवादी या अभियोजन पक्ष को विचारण न्यायाधीश के समक्ष आवेदन करना होगा ।

(प्रश्न-2) क्या न्यायालय को, यदि वह अनामता का अनुरोध स्वीकार कर लेता है, इस आशय का निदेश देना होगा कि अभियुक्त को दिए जाने वाले दस्तावेजों में साक्षी की पहचान और पते का निर्देश नहीं किया जाएगा और क्या न्यायालय को इस आशय का निदेश देना चाहिए कि पहचान और पते से संबंधित मूल दस्तावेज सुरक्षित अभिरक्षा में रखे जाएं और आगे ऐसा निदेश भी देना चाहिए कि न्यायालय की कार्यवाहियों में साक्षी का नाम और पता नहीं दर्शाया जाएगा?

दस्तावेजों में, जो अभियुक्त को दिए जाने अपेक्षित हैं, साक्षी का नाम और पता अन्तर्विष्ट है। यदि न्यायालय अनामता के निवेदन को स्वीकार करता है तो, यह आवश्यक है कि उक्त दस्तावेजों में उनके नाम और पते नहीं दर्शाए जाने चाहिए, अन्यथा अनामता का प्रयोजन विफल हो जाएगा। इस प्रयोजन के लिए न्यायालय का आदेश अपेक्षित होगा। इसके अतिरिक्त, मूल दस्तावेजों, जिनमें साक्षी की पहचान अन्तर्विष्ट है, का सुरक्षित अभिरक्षा में रखा जाना अपेक्षित है।

सभी प्रत्यर्थियों का, एक वकील को छोडकर, यह मत था कि यदि न्यायालय अनामता के लिए निवेदन स्वीकार करता है तो, उये यह निदेश देना चाहिए कि अभियुक्त को उपलब्ध कराए जाने वाले दस्तावेजों में साक्षी की पहचान नहीं दर्शायी जानी चाहिए। इसके अतिरिक्त, न्यायालय को यह भी निदेश देना चाहिए कि साक्षियों की पहचान वाले मूल दस्तावेज सुरक्षित अभिरक्षा में रखे जाए। इसके अलावा, न्यायालय का यह भी सुनिश्चित करना चाहिए कि न्यायालय कार्यवाहियों में ऐसे साक्षी की पहचान नहीं दर्शायी जानी जाए।

(प्रश्न 10) विचारण पर, यदि न्यायाधीश का साक्षी को खतरे के बारे में समाधान हो जाता है तो, क्या साक्षी के कथन ऐसी रीति में अभिलिखित किए जाने चाहिए कि साक्षी और अभियुक्त एक दूसरे को न देख सकें और केवल न्यायाधीश, अभियोजक और प्रतिरक्षा काउंसेल को (दो कैमरों का उपयोग करके) देखना चाहिए? क्या साक्षी, जो वीडियो स्क्रीन पर दिखाया जाता है, केवल न्यायाधीश, अभियोजक और प्रतिरक्षा काउंसेल को दिखना चाहिए?

दंड प्रक्रिया संहिता, 1973 की धारा 273 के अनुसार, विचारण अभियुक्त की उपस्थिति में होना चाहिए । जब किसी साक्षी अनामता की मंजूरी दे दी जाती है और उससे अभियुक्त की उपस्थिति में साक्ष्य देने के लिए कहा जाता है तब अभियुक्त को साक्षी की पहचान के बारे में जानकारी हो जाएगी । इसलिए, यह आवश्यक है कि ऐसे मामलों में साक्षी का कथन इस प्रकार से अभिकथित किया जाए कि साक्षी और अभियुक्त एक दूसरे को न देख सकें । इस प्रयोजन से या तो स्क्रीन लगाया जा सकता है या वीडियो कांफ्रेंसिंग सुविधा का अनुसरण किया जा सकता है ।

कुछ को छोड़कर, लगभग सभी प्रत्यर्थियों ने इस प्रश्न के प्रस्तावों का समर्थन किया है ।

आन्ध्र प्रदेश उच्च न्यायालय के एक न्यायाधीश ने कहा है हमारा देश निर्धन है और बंद कमरों तथा वीडियो स्क्रीन जैसी आधुनिक सुविधाएं ऐसे प्रत्येक मामले में उपलब्ध नहीं कराई जा सकतीं जहां साक्षी अपने जीवन के लिए खतरा बताता है । उसने आगे कहा है कि भारतीय परिस्थितियों में अभी ऐसा समय नहीं आया है जहां साक्षी वीडियो स्क्रीन पर केवल न्यायाधीश, अभियोजक या प्रतिरक्षा के वकील को ही दिखाई दे ।

एक अधिवक्ता, जो महाराष्ट्र विधि आयोग के सदस्य भी है, ने कहा है कि साक्षी के कथन को अभियुक्त की अनुपस्थिति में या वीडियो स्क्रीन के माध्यम से अभिलिखित किया जाना भारत में व्यवहार्य नहीं है और वर्तमान प्रणाली जारी रखी जानी चाहिए । तथापि, कतिपय परिस्थितियों में, विचारण के लिए ऐसा स्थान निश्चित किया जाना चाहिए जहां साक्षी को उसकी जान-माल का खतरा कम हो । कतिपय परिस्थितियों में, साक्षी का कथन केवल प्रतिरक्षा वकील की उपस्थिति में अभिलिखित किया जा सकता है और अभियुक्त को वहां उपस्थित रहने की अनुमति नहीं होगी ।

हैदराबाद के एक अन्य अधिवक्ता ने कहा है कि विचारण के समय, साक्षी और अभियुक्त एक दूसरे को दिखने चाहिए अन्यथा दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 273 का उल्लंघन होगा ।

(प्रश्न-11) वर्तमान संदर्भ में, क्या साक्षी को किसी अन्य कमरे से या भिन्न स्थान से साक्ष्य देना चाहिए और क्या यह सुनिश्चित करने के लिए वहां कोई अन्य न्यायिक अधिकारी भी होना चाहिए कि साक्षी अपना साक्ष्य देने के लिए स्वतंत्र है?

साक्षी की पहचान छिपाने के उद्देश्य से, उसे भिन्न कमरे या स्थान से साक्ष्य देने के लिए कहा जा सकेगा जहां अभियुक्त उपस्थित नहीं होगा । वीडियो कांफ्रेंसिंग के माध्यम से ऐसा किया जा सकेगा । ऐसी परिस्थिति में, यह भी आवश्यक है कि साक्षी स्वतंत्रपूर्वक साक्ष्य दे सके । यह सुनिश्चित करने के लिए जिस कमरे या स्थान से साक्षी साक्ष्य दे रहा है वहां दूसरा न्यायिक अधिकारी उपस्थित रहेगा । इस प्रकार का उपबंध पुर्तगाल की विधि में है । विधि सं. 93/99, 14 जुलाई, 1999 ।

26 प्रत्यर्थियों (41 में से) ने इस प्रस्ताव का स्वागत किया है कि साक्षी किसी अन्य कमरे से या अन्य स्थान से साक्ष्य दे और उस कमरे में दूसरा न्यायिक अधिकारी यह सुनिश्चित कराने के लिए उपस्थित रहेगा कि साक्ष्य देते समय साक्षी स्वतंत्र है । इन 26 प्रत्यर्थियों में 8 राज्य सरकारों से, 6 पुलिस अधिकारी, 2 न्यायाधीश तथा 10 अन्य है ।

5 प्रत्यर्थियों (आन्ध्र प्रदेश उच्च न्यायालय का एक न्यायाधीश, मणिपुर राज्य सरकार, पुलिस महानिरीक्षक सिक्किम और 2 अधिवक्ता) का यह विचार है कि साक्षी को एक भिन्न कमरे से साक्ष्य देना चाहिए परन्तु उस कमरे में दूसरे न्यायिक अधिकारी की आवश्यकता नहीं है ।

पुलिस महानिदेशक, मणिपुर का मत है कि या तो एक स्क्रीन की व्यवस्था की जाए अथवा ऐसी व्यवस्था की जाए कि साक्षी अभियुक्त का शरीर या चेहरा न देख पाए ताकि साक्षी समस्त घटना के बारे स्वतंत्र वातावरण में किसी अवरोध या भय के बिना साक्ष्य दे सके ।

असम के पुलिस महानिरीक्षक का मत है कि न्यायाधीश न्यायालय के बजाय अपने चैम्बर में साक्षी का कथन अभिलिखित कर सकेगा ।

तथापि, 7 प्रत्यर्थी (बिहार और मेघालय की राज्य सरकारें, मीजोरम के पुलिस महानिदेशक तथा 4 अन्य) इस प्रस्ताव के बिल्कुल ही पक्ष में नहीं है । तथापि बिहार राज्य सरकार ने अपनी प्रतिक्रिया में कहा है कि यह प्रस्ताव अव्यवहार्य है । उसने कहा है कि न्यायिक अधिकारियों की पहले ही अत्यधिक कमी है । यह एक जटिल और खर्चीला कार्य है ।

(प्रश्न-12) क्या ऐसे विचारणों में जनता तथा मीडिया को, प्रकाशन का निषेध करते हुए, प्रवेश करने की अनुमति होनी चाहिए? इस शर्त का उल्लंघन करने के लिए क्या दंड दिया जाना चाहिए?

दंड प्रक्रिया संहिता, 1973 की धारा 327(1) के अनुसार, सभी आपराधिक विचारण खुले न्यायालय में होने चाहिए, जहां कोई भी व्यक्ति उस कमरे या भवन में जा सकेगा जहां विचारण चल रहा होगा । परन्तु इस उपधारा के नीचे दिया गया परन्तुक मजिस्ट्रेट या न्यायाधीश को सामान्य जनता का या किसी व्यक्ति का विचारण स्थल पर प्रवेश निषिद्ध करने की शक्तियां प्रदान करता है । अब प्रश्न यह है कि ऐसे विचारणों में जहां साक्षी को अनामता की अनुमति दे दी गई है जनता को या मीडिया को प्रवेश की अनुमति होनी चाहिए या क्या इनका प्रवेश निषिद्ध किया जाना चाहिए? एक अन्य प्रश्न यह है कि यदि मीडिया और जनता को अनुमति दी जाती है तब क्या न्यायालय की कार्यवाहियों के प्रकाशन का निषेध किया जाना चाहिए?

40 प्रतिक्रियाओं में से 28 (7 राज्य सरकारें, 3 न्यायाधीश, 7 वरिष्ठ पुलिस अधिकारी तथा 11 अन्य) का मत है कि उन मामलों में जहां साक्षी को अनामता की अनुमति दे दी जाती है, वहां विचारण के दौरान जनता तथा मीडिया की उपस्थिति के लिए अनुमति नहीं होनी चाहिए ।

शेष 12 (3 राज्य सरकारें, 3 पुलिस अधिकारी और 6 अन्य) का अभिमत है कि ऐसे विचारणों में मीडिया तथा जनता को उपस्थित की अनुमति होनी चाहिए । तथापि, राष्ट्रीय राजधानी क्षेत्र दिल्ली सरकार ने यह विचार व्यक्त किया है कि ऐसे विचारणों में कैमरा ले जाने की अनुमति नहीं होनी चाहिए । बिहार राज्य सरकार का विचार है कि केवल जनता के लिए अनुमति होनी चाहिए, मीडिया के लिए नहीं । न्यायालय की कार्यवाहियों के प्रकाशन का निषेध किए जाने के बारे में, सभी प्रत्यर्थियों का यह विचार है कि न्यायालय की कार्यवाहियों का प्रकाशन निषिद्ध होना चाहिए ।

अधिकांश प्रत्यर्थियों का यह विचार है कि इस शर्त के उल्लंघन के लिए कठोर दंड की व्यवस्था होनी चाहिए । दंड किता हो, क्या हो इस बारे में मतैक्य नहीं है । प्रत्येक प्रत्यर्थी ने दंड की मात्रा के लिए पृथक-पृथक सुझाव दिए हैं ।

(प्रश्न-13) क्या ऐसे प्रत्येक मामले में जहां साक्षी को संरक्षण दिया जाना है या दिए जाने की संभावना है वहां न्यायालय को प्राथमिक सुनवाई तथा विचारण स्तर दोनों के लिए स्वतंत्र रूप में अपनी सहायता के लिए कए न्याय-मित्र नियुक्त किया जाना चाहिए?

यह प्रश्न ऐसे मामले में, जहां साक्षी को संरक्षण दिया जाना है या दिए जाने की संभावना है, न्याय-मित्र की नियुक्ति से संबंधित है । यहां प्रश्न यह है कि क्या न्याय-मित्र प्रत्येक मामले में नियुक्त किया जाना चाहिए अथवा नहीं?

39 प्रत्यर्थियों में से लगभग 23 (3 राज्य सरकारें, 8 वरिष्ठ पुलिस अधिकारी, 12 अन्य) ने यह मत व्यक्त किया है कि जहां प्रत्येक मामले में न्याय-मित्र नियुक्त किया जाना चाहिए ताकि वह प्राथमिक सुनवाई तथा विचारण दोनों ही स्तरों पर स्वतंत्र रूप से न्यायालय की सहायता कर सके ।

7 प्रत्यार्थियों (4 राज्य सरकारें, 2 अन्य तथा उच्च न्यायालय के एक न्यायाधीश) ने यह सुझाव दिया है कि न्याय-मित्र अपवाद स्वरूप मामले में ही नियुक्त किया जा सकता है सभी मामलों में नहीं ।

तथापि, 9 प्रतिक्रियाओं (3 राज्य सरकारों से, 1 पुलिस अधिकारी, 2 न्यायाधीश तथा 3 अन्य) में यह कहा गया है कि किसी भी मामले में न्याय-मित्र नियुक्त करने की आवश्यकता नहीं है ।

(प्रश्न-14). क्या ऐसे मामलों में वीडियो लिंक के माध्यम से साक्ष्य अभिलिखित करते समय साक्षी के चेहरे और आवाज को विकृत करने की पद्धति का अनुसरण किया जाना चाहिए?

कुछ देशों में, उदाहरण के लिए पुर्तगाल में, ऐसा उपबंध किया गया है कि जहां साक्ष्य वीडियो लिंक द्वारा अभिलिखित किया जाए, साक्षी के चेहरे की पहचान और आवाज को विकृत किया जा सकेगा ताकि पहचान गोपनीय रखी जा सके । क्या हमारे देश में भी ऐसा उपबंध किए जाने की आवश्यकता है ?

26 प्रत्यर्थियों ने इस विचार का समर्थन किया है कि वीडियो लिंक के माध्यम से साक्ष्य अभिलिखित करते समय साक्षी के चेहरे और आवाज को विकृत किया जाना चाहिए। इन 26 प्रतिक्रियाओं में से 5 राज्य सरकारों से, 9 वरिष्ठ पुलिस अधिकारियों से, 2 न्यायाधीशों से तथा 10 अन्य व्यक्तियों से प्राप्त हुई हैं । राष्ट्रीय राजधानी क्षेत्र दिल्ली सरकार ने प्रस्ताव से सहमति व्यक्त करते हुए यह सुझाव दिया है कि यह कार्य विशेषज्ञों की उपस्थिति में किया जाना चाहिए और विशेषज्ञों को साक्षियों के रूप में उद्धृत किया जाना चाहिए । संबंधित न्यायाधीश को साक्ष्य देने वाले साक्षी की उपस्थिति सत्यापित करनी चाहिए । 'साक्षी' नामक एक गैर सरकारी संगठन ने यह विचार व्यक्त किया है कि यह महत्वपूर्ण है कि पीड़ित/साक्षी विचारण के दौरान अभियुक्त व्यक्तियों की प्रभावी रूप से पहचान कर सकें । पहचान के पश्चात्, शेष परिसाक्ष्य, पीड़ित/साक्षी अभियुक्त व्यक्तियों में स्क्रीन किए जाने चाहिए । चेहरे/आवज को विकृत किया जाना प्रत्येक मामले का आधार देखते हुए न्यायाधीश के विवेकाधिकार से निर्णीत किया जाना चाहिए ।

बिहार राज्य सरकार का विचार है कि चेहरे की आकृति और आवाज को विकृत करने की पद्धति ऐसे सभी मामलों में, जहां साक्ष्य वीडियो लिंक द्वारा अभिलिखित किया जाए, व्यवहार्य नहीं भी हो सकती है । ऐसी पद्धति का अनुसरण बहुत कम मामलों में किया जाना चाहिए ।

त्रिपुरा राज्य सरकार का भी यह विचार है कि ऐसी पद्धति गम्भीर अपराधों के अपवाद स्वरूप मामलों में ही किया जाना चाहिए ।

तथापि, 13 प्रत्यर्थियों (3 राज्य सरकारें, उच्च न्यायालय के एक न्यायाधीश, 1 पुलिस अधिकारी तथा 8 अन्य) ने यह विचार व्यक्त किया है कि साक्षी के चेहरे की आकृति और आवाज को विकृत करने की पद्धति का अनुसरण नहीं किया जाना चाहिए ।

(प्रश्न-15). क्या साक्षी की पहचान और पता जांच तथा विचारण पर्यन्त (या विचारण के पश्चात् भी) और निर्णय होने तक न्यायालय की सभी कार्यवाहियों में गोपनीय रखे जाने चाहिए या क्या इन्हें साक्षी की परीक्षा की परीक्षा आरम्भ होने के समय पर ही प्रकट कर दिया जाना चाहिए ? यदि साक्ष्य के आरम्भ होने पर ऐसा किया जाए तब, यदि एक सुनवाई में साक्ष्य पूरा नहीं हो पाता है तब क्या अगली सुनवाई की तारीख तक साक्षी को धमकी दिए जाने की स्थिति नहीं आएगी ?

यहां प्रश्न यह है कि साक्षी की पहचान और पता किस स्तर तक गोपनीय रखा जाना चाहिए? क्या यह निर्णय होने तक गोपनीय रखा जाना चाहिए या न्यायलय में साक्षी की परीक्षा आरम्भ होने से पूर्व ही इसे प्रकट कर दिया जाना चाहिए? परन्तु यदि पहचान और पता साक्षी की परीक्षा होने से पूर्व प्रकट कर दिया जाएगा तब ऐसे मामलों में समस्या उत्पन्न हो जाएगी जिनमें परीक्षा उस तारीख विशेष को पूरी नहीं हो पाती है और साक्षी को अगली सुनवाई की तारीख तक धमकी दी जा सकेगी । इस संबंध में, पहचान किस स्तर पर प्रकट की जानी चाहिए ?

इस प्रश्न के उत्तर में, अधिकांश प्रत्यर्थियों ने (40 में से 34 ने) यह विचार व्यक्त किया है कि साक्षी की पहचान मामले के प्रत्येक चरण में गोपनीय रखी जानी चाहिए । इसे साक्षी की परीक्षा के समय प्रकट नहीं किया जाना चाहिए । इतना ही नहीं, कतिपय प्रत्यर्थियों ने यह सुझाव दिया है कि निर्णय घोषित किए जाने के बाद भी पहचान गोपनीय बनाई रखी जानी चाहिए । इन 34 प्रत्यर्थियों में से, 8 राज्य सरकारें से, 10 वरिष्ठ पुलिस अधिकारी, 2 न्यायाधीश तथा 14 अन्य हैं ।

विशेष पुलिस आयुक्त, आसूचना तथा प्रवर्तन मुख्यालय, नई दिल्ली का यह विचार है कि साक्षी की अनामता बनाए रखने के कुछ मामले तब असंगत हो जाते हैं जब न्यायालय से उसकी परीक्षा करा ली जाती है और प्रतिपरीक्षा पूरी हो जाने सहित, उसके साक्ष्य के पश्चात् उसकी पहचान प्रकट करा दी जाएगी । तथापि, कतिपय मामलों में साक्षी की स्थाई अनामता की आवश्यकता है ।

तथापि, 5 प्रत्यर्थियों ने यह विचार व्यक्त किया है कि साक्षी की पहचान न्यायालय में उसकी परीक्षा आरम्भ होने से पूर्व प्रकट कर दी जानी चाहिए । इन प्रत्यर्थियों में, 1 राज्य सरकार से, एक उच्च न्यायालय का न्यायाधीश और 3 अन्य हैं ।

(प्रश्न-16). साक्षी की परीक्षा वीडियो सम्पर्क प्रक्रिया के माध्यम से किए जाने के बजाय, क्या यह पर्याप्त नहीं होगा कि न्यायालय को एक अनुरोध करते हुए प्रश्नों की एक सूची दे दी जाए कि वे प्रश्न साक्षी से पूछे जाएं? क्या इससे निष्पक्ष और प्रभावी प्रतिपरीक्षा बाधित होगी, यदि अभियुक्त या उसके वकील को इस प्रकार एक विशिष्ट प्रश्न सूची तक सीमित कर दिया जाता है और विशिष्ट प्रश्नों के साक्षी द्वारा दिए गए उत्तरों से उत्पन्न प्रश्न पूछने का सामान्य लाभ नहीं दिया जाता ।

एक सामान्य विचारण में, प्रक्रिया यह है कि न्यायालय में साक्षी की परीक्षा के दौरान, अभियोजक और प्रतिरक्षा का वकील उत्तर प्राप्त करने के लिए साक्षी से प्रश्न पूछते हैं । परन्तु अभियुक्त और उसके वकील को साक्षी को देखने से वंचित रखने के लिए, यह सुझाव दिया जाता है कि न्यायालय से ऐसा अनुरोध करते हुए उसे प्रश्नों की एक सूची दे दी जाए कि न्यायालय साक्षी से वे प्रश्न पूछेगा । यहां प्रश्न यह उठता है कि क्या ऐसी प्रक्रिया निष्पक्ष विचारण की प्रक्रिया के

लिए सही सिद्ध होगी जिसमें प्रभावी प्रतिपरीक्षा की अपेक्षा की गई है? क्योंकि इस प्रक्रिया में, प्रतिरक्षा पक्ष साक्षी द्वारा दिए गए उत्तरों से उत्पन्न होने वाले सभी प्रश्न नहीं पूछ सकेगा ।

अधिकांश प्रत्यर्थी, न्यायालय को प्रश्नों की सूची सौंपे जाने के पक्ष में नहीं हैं । इस प्रकार की प्रक्रिया, जैसाकि प्रत्यर्थियों ने बताया है, अभियुक्त को साक्षी की प्रभावी रूप से प्रतिपरीक्षा करने के उसके अधिकार पर प्रतिकूल प्रभाव डालेगी ।

केवल 5 प्रत्यर्थियों ने (2 पुलिस अधिकारी, 1 न्यायाधीश तथा 2 अन्य) न्यायालय को प्रश्नों की सूची दिए जाने और न्यायालय द्वारा साक्षी से उन प्रश्नों के पूछे जाने के प्रस्ताव का समर्थन किया है ।

दूसरी ओर, 28 प्रत्यर्थियों ने (6 राज्य सरकार, 8 पुलिस अधिकारी, उच्च न्यायालय के 2 न्यायाधीशों तथा 12 अन्य) न्यायालय को प्रश्नों की सूची प्रस्तुत करने के प्रस्ताव का विरोध किया है ।

तथापि, 7 प्रत्यर्थियों का मत है कि ऐसी कोई प्रक्रिया, महिलाओं और बालकों या अन्य गम्भीर अपराधों जैसे कुछ ही मामलों में अपनाई जा सकती है और सामान्य मामलों में नहीं। इन 8 प्रत्यर्थियों में, 2 राज्य सरकारों से, 3 पुलिस अधिकारी और 2 अन्य हैं।

(प्रश्न-17). केवल इस कारण से कि न्यायालय ने उपर्युक्त प्राथमिक सुनवाई में अनामता मंजूर करने से इंकार कर दिया है, क्या साक्षी को बाद में भी विचारण स्तर पर अनामता या संरक्षण की मांग करने से वंचित रखा जाएगा चाहे उसके पक्ष में ऐसा आदेश करना नई परिस्थितियों में आवश्यक हो गया हो?

ऐसे मामले हो सकते हैं जहां प्राथमिक सुनवाई के समय न्यायालय के समक्ष साक्षी के लिए अनामता या संरक्षण का आदेश देने के लिए पर्याप्त सामग्री उपलब्ध न हो । परन्तु बाद में, यदि नई परिस्थितियों में अनामता या संरक्षण देना आवश्यक हो, तब प्रश्न यह उठता है कि क्या बदली हुई परिस्थितियों में साक्षी को अनामता या संरक्षण के लिए आवेदन करने की अनुमति होगी?

सभी प्रत्यर्थियों का यह विचार है कि यदि नई परिस्थितियों में आवश्यक हो तो, साक्षी को बाद में अनामता या संरक्षण के लिए आवेदन करने से वंचित नहीं किया जाना चाहिए ।

तथापि, पश्चिम बंगाल राज्य सरकार ने कहा है कि यदि साक्षी की पहचान पहले ही प्रकट हो जाती है तो बाद के स्तर पर अनामता या संरक्षण के लिए आवेदन करने का कोई लाभ नहीं होगा ।

सेना के जे.ऐ.जी. विभाग के एक लैफ्टीनेंट कर्नल का विचार है कि विचारण् में बाद के स्तर पर अनामता की मंजूरी देने से कोई प्रयोजन सिद्ध नहीं होगा, तथापि साक्षी को बाद के स्तर पर भी अनामता स्वीकृत की जा सकती है ।

(प्रश्न-18) क्या प्रतिरक्षा पक्ष को ऐसा प्रतिकार करने की अनुमति दी जा सकती है कि अभियोजन साक्षी जिसे अनामता दी जाती है, स्टॉक साक्षी है?

सामान्यतया प्रतिरक्षा पक्ष को इस प्रकार का प्रतिकार करने का अधिकार है कि विशिष्ट अभियोजन साक्षी स्टॉक साक्षी है । परन्तु जब किसी अभियोजन साक्षी के लिए अनामता की मंजूरी दे दी जाती है तब प्रतिरक्षा पक्ष ऐसे साक्षी की पहचान नहीं कर सकेगा । ऐसे मामलों में क्या प्रतिरक्षा पक्ष को ऐसा प्रतिकार करने की अनुमति होनी चाहिए कि वह अभियोजन साक्षी (जिसे अनामता दी गई है) स्टॉक साक्षी है?

इस विषय पर मिली-जुली प्रतिक्रियाएं प्राप्त हुई हैं । कुल 17 प्रत्यर्थियों ने इस प्रकार के विचार व्यक्त किए हैं कि प्रतिरक्षा पक्ष को ऐसा प्रतिकार करने की अनुमति होनी चाहिए कि जिस अभियोजन साक्षी को अनामता की मंजूरी दी गई है वह स्टॉक साक्षी है । इनमें से 5 वरिष्ठ पुलिस अधिकारी हैं, 2 राज्य सरकारें, 1 न्यायाधीश तथा 9 अन्य हैं । इसके अतिरिक्त, 4 प्रत्यर्थियों (सभी अन्य है) ने यह विचार व्यक्त किया है कि यद्यपि प्रतिरक्षा पक्ष को ऐसा प्रतिकार करने की अनुमति

होनी चाहिए कि अमुक साक्षी स्टॉक साक्षी है परन्तु यह प्रमाणित करने का भार प्रतिरक्षा पक्षपर होना चाहिए कि वह साक्षी स्टॉक साक्षी है । इसके अतिरिक्त, 3 प्रत्यर्थियों ने (1 उच्च न्यायालय का न्यायाधीश, 1 पुलिस अधिकारी और 1 राज्य सरकार) यह विचार व्यक्त किया है कि प्रतिरक्षा पक्ष को केवल तभी अनुमति दी जानी चाहिए जब किसी विशेष मामले में परिस्थितियों में प्रतिरक्षा पक्ष को इस प्रकार का प्रतिकार करना आवश्यक हो ।

15 प्रत्यर्थियों (4 पुलिस अधिकारी, 6 राज्य सरकारें, 1 न्यायाधीश तथा 6 अन्य) का यह विचार है कि प्रतिरक्षा पक्ष को ऐसा प्रतिकार करने की अनुमति नहीं होनी चाहिए कि अभियोजन साक्षी जिसे अनामता की मंजूरी दी गई है, स्टॉक साक्षी है ।

तथापि, 2 प्रत्यर्थियों (1 वरिष्ठ पुलिस अधिकार और 1 राज्य सरकार) का विचार यह है कि इस प्रश्न का निर्णय स्वयं न्यायालय द्वारा ही किया जाना चाहिए ।

(प्रश्न-19) क्या टेली-लिंक और उसका वीडियो संप्रदर्शन न्यायालय शाखा के किसी तकनीकी अधिकारी द्वारा ही किया जाना चाहिए, किसी पुलिस अधिकारी या किसी अन्य लोक सेवक द्वारा बाहर से किसी निजी ठेकेदार द्वारा नहीं किया जाना चाहिए?

जैसाकि प्रश्न संख्या 10, 11 और 14 में कहा गया है, कतिपय परिस्थितियों में साक्षी का बयान वीडियो कांफ्रेंसिंग द्वारा रिकार्ड किया जाना चाहिए । इस सेवा के लिए निश्चित ही किसी तकनीकी व्यक्ति की सेवाओं की आवश्यकता है । अब प्रश्न यह है कि क्या ये तकनीकी कर्मचारी न्यायिक शाखा से होने चाहिए या क्या वे अन्य लोक सेवक या पुलिस अधिकारी भी हो सकते हैं ? इसके अतिरिक्त, क्या ये तकनीकी कर्मचारी निजी ठेकेदार जैसे किसी बाहरी स्रोत से भी प्राप्त

किए जा सकते हैं? यह पहलू महत्वपूर्ण है क्योंकि इससे विचारण में निष्पक्षता और न्याय प्रभावित हो सकता है ।

अधिकांश प्रत्यर्थियान(28 ने) ने यह सुझाव दिया है कि टेली-लिंक और वीडियो संप्रदर्शन केवल न्यायिक शाखा के तकनीकी अधिकारी द्वारा किया जाना चाहिए, किसी पुलिस अधिकारी या लोक सेवक द्वारा नहीं । इन 28 प्रतिक्रियाओं में से 8 पुलिस अधिकारी, 6 राज्य सरकारें, 3 न्यायाधीश और 11 अन्य हैं ।

दो राज्य सरकारें तथा एक अन्य व्यक्ति ने यह विचार व्यक्त किया है कि ये तकनीकी कर्मचारी या तो न्यायिक शाखा से हो सकते हैं या अन्य लोक सेवक भी । तथापि, दो अन्य राज्य सरकारों का विचार है कि तकनीकी कर्मचारी न्यायपालिका के नियंत्रणाधीन होने चाहिए ।

एक पुलिस अधिकारी ने कहा है कि टेली-लिंक और वीडियो संप्रदर्शन इस प्रकार से किया जाना चाहिए कि साक्षी की पहचान उजागर न हो, संचालनकर्ता चाहे जो भी हो । तीन अन्य व्यक्तियों ने भी यह विचार व्यक्त किया है कि यह कार्य किसी के द्वारा भी किया जा सकता है ।

2 पुलिस अधिकारियों तथा 2 अन्य व्यक्तियों ने केवल इतना ही कहा है कि यह कार्य तकनीकी व्यक्तियों द्वारा किया जाना चाहिए ।

(प्रश्न-20) क्या ये तकनीकी कर्मचारी एक राज्य में एक ही स्थान पर होने चाहिए और वहां से संबंधित न्यायालय में, जब कभी अनुरोध प्राप्त हो, भेजे जाने चाहिए क्योंकि जिले के प्रत्येक न्यायालय में न्यायालय समूह के लिए ऐसी सुविधा की व्यवस्था करना संभव नहीं है ?

जैसाकि ऊपर बताया गया है कि टेली-लिंक और वीडियो संप्रदर्शन के लिए तकनीकी कर्मचारियों की आवश्यता होगी । प्रत्येक राज्य में अनेक जिले और खंड होते हैं और प्रत्येक जिले या खंड में बहुत से न्यायालय हो सकते हैं। क्योंकि प्रत्येक न्यायालय या न्यायालयों के समूह के

लिए पृथक-पृथक रूप से तकनीकी कर्मचारी रख पाना संभव नहीं हो सकेगा, इसलिए, यह सुझाव दिया गया है कि इन तकनीकी कर्मचारियों को राज्य में किसी एक स्थान पर केन्द्रित रखा जा सकता है और उन्हें वहां से उस न्यायालय में, जहां से अनुरोध प्राप्त हो, भेजा जा सकता है ।

पचास प्रतिशत प्रत्यर्थियों (22 ने) ने इस सुझाव का समर्थन किया है कि इन तकनीकी कर्मचारियों को प्रत्येक राज्य में किसी एक स्थान पर नियुक्त रखा जा सकता है । इनमें 6 राज्य सरकारें, 8 पुलिस अधिकारी, 2 न्यायाधीश तथा 6 अन्य हैं ।

15 प्रत्यर्थियों का विचार है कि ये तकनीकी कर्मचारी जिला/खंड मुख्यालय पर उपलब्ध होने चाहिए । इनमें से भी 3 का विचार है कि प्रत्येक न्यायालय या न्यायालयों के एक समूह के लिए पृथक-पृथक रूप से तकनीकी कर्मचारी उपलब्ध होने चाहिए । इन 15 प्रत्यर्थियों मे, 4 राज्य सरकारें, 2 पुलिस अधिकारी, 1 न्यायाधीश और 8 अन्य हैं ।

एक पुलिस अधिकारी ने यह सुझाव दिया है कि राज्य का उच्च न्यायालय यह निर्णय करेगा कि इन तकनीकी कर्मचारियों को किस केन्द्र पर रखा जाए ।

2 अधिवक्ताओं ने यह विचार रखा है कि ऐसे न्यायिक अधिकारियों को नियुक्त किए जाने की आवश्यकता है जो प्रौद्योगिकी में या प्रशिक्षण देने में विशेषज्ञ हों ।

(प्रश्न-21) क्या प्राथमिक जांच के प्रयोजन से साक्षी की अनामता को आदेश सेशन न्यायालय द्वारा ही पारित किया जाना चाहिए, उसके अधीनस्थ किसी अन्य न्यायालय द्वारा नहीं ?

यह प्रश्न इस विषय के बारे में है कि साक्षी की अनामता के आदेश पारित करने की शक्ति किस न्यायालय के पास होनी चाहए । क्या केवल सेशन न्यायालय को ही यह शक्ति प्राप्त होनी चाहिए और क्या सेशन न्यायालय के अधीन ?

कुल 24 प्रत्यर्थियों (5 राज्य सरकारें, 6 पुलिस अधिकारी, 1 न्यायाधीश तथा 12 अन्य) ने इस पक्ष का समर्थन किया है कि साक्षी की अनामता के बारे में आदेश पारित करने की शक्ति केवल सेशन न्यायालय को ही होनी चाहिए और सेशन न्यायालय के अधीनस्थ किसी भी न्यायालय को ऐसी शक्ति प्राप्त नहीं होनी चाहिए ।

तथापि, 15 प्रत्यर्थियों (4 राज्य सरकारें, 5 पुलिस अधिकारी, 2 न्यायाधीश तथा 4 अन्य) ने इस प्रस्ताव का समर्थन नहीं किया है कि केवल सेशन न्यायालय को साक्षी की अनामता का आदेश पारित करने की शक्ति प्राप्त होनी चाहिए । इनमें से 9 प्रत्यर्थियों का यह विचार है कि संबंधित विचारण न्यायालय को साक्षी अनामता का आदेश पारित करने की शक्ति प्राप्त होनी चाहिए । शेष 6 प्रत्यर्थियों का विचार है कि प्रत्येक न्यायालय को इस प्रकार की शक्ति प्राप्त होनी चाहिए ।

पंजाब राज्य सरकार ने यह विचार व्यक्त किया है कि इस प्रश्न का निर्णय एक स्वतंत्र अधिकरण द्वारा किया जाना चाहिए । अन्य दो प्रत्यर्थियों ने यह सुझाव दिया है कि सेशन न्यायाधीश के परामर्श से वरिष्ठ पुलिस अधिकारी को इस प्रकार की शक्ति प्राप्त होनी चाहिए ।

(प्रश्न-22) क्या साक्षी को अनामता के आदेश के विरूद्ध विधि में उच्च न्यायालय में अपील किए जाने का उपबंध होना चाहिए और आदेश की तामील किए जाने की तारीख से एक महीन की समय सीमा के भीतर अपील पर निर्णय हो जाना चाहिए?

यह प्रश्न इस विषय से संबंधित है कि क्या साक्षी को अनामता मंजूर किए जाने के आदेश के विरूद्ध उच्च न्यायालय में अपील किए जाने का विधि में उपबंध होना चाहिए ? इसके साथ-साथ क्या अपील के निपटान के लिए एक महीने की समय सीमा निर्धारित की जानी चाहिए ?

अधिकांश प्रत्यर्थियों (28 ने) ने उच्च न्यायालय को इस प्रकार का अधिकार दिए जाने और अपील को एक महीन के भीतर निपटाए जाने के प्रस्ताव का समर्थन किया है । इनमें से पांच राज्य सरकारें, आठ पुलिस अधिकारी, दो न्यायाधीश तथा तेरह अन्य व्यक्ति हैं । तथापि, उच्च न्यायालय के एक न्यायाधीश तथा एक अधिवक्ता ने यह विचार व्यक्त किया है कि अपील के बजाए पुनरीक्षण का अधिकार होना चाहिए ।

14 प्रत्यर्थियों (5 राज्य सरकारें, 3 पुलिस अधिकारी, 1 न्यायाधीश और 5 अन्य व्यक्तियों) ने अपील का अधिकार दिए जाने का विरोध किया है ।

(प्रश्न-23) कोई अन्य सुझाव, जो उपर्युक्त परामर्शीपत्र में अन्तर्विष्ट नहीं है?

प्रत्यर्थियों से साक्षी अनामता के बारे में उनसे ऐसे प्रश्नों पर भी सुझाव मांगे गए थे जो प्रश्नावली में अन्तर्विष्ट नहीं थे । बहुत से प्रत्यर्थियों ने अपने सुझाव भेजे हैं । कतिपय महत्वपूर्ण सुझाव/विचारों का उल्लेख नीचे किया जा रहा है ।

बम्बई उच्च न्यायालय के न्यायमूर्ति अनूप वी. मोहता ने कहा है कि दंड प्रक्रिया संहिता, 1973 में इस प्रकार की प्रक्रिया का उपबंध किया गया है कि अभियोजन प्रतिरक्षा के आवेदन पर न्यायाधीश/मजिस्ट्रेट किसी साक्षी को उसके उपस्थित होने, कोई दस्तावेज या कोई वस्तु पेश करने का निदेश देते हुए सम्मन जारी कर सकेगा । न्यायमूर्ति मोहटा के अनुसार जिन साक्षियों को सम्मन जारी किए जाने हैं उनकी सूची विचारण आरम्भ होने से पूर्व गोपनीय रूप से प्रस्तुत की जानी चाहिए । यदि इस प्रकार सूची खुले रूप में जारी की जाएगी तो अनामता मंजूर करने का प्रयोजन ही नष्ट हो जाएगा । न्यायाधीश/मजिस्ट्रेट अनामता के प्रश्न पर विचार करने के पश्चात् साक्षी को

निर्धारित तारीख को न्यायालय में उपस्थित होन का निदेश देते हुए गोपनीय रूप में सम्मन जारी कर सकेगा । उन्होंने कहा है कि यदि हम साक्षी को अभित्रस और/या धमकी से बचाना चाहते हैं तो साक्षियों की सूची प्रस्तुत किए जाने के प्राथमिक स्तर पर सावधानी बरतनी होगी । उन्होंने आगे कहा है कि साक्षियों की सूची या साक्षियों के नाम अभियुक्त को विचारण की निर्धारित तारीख को ही बताए जाएंगे ।

न्यायमूर्ति मोहता का यह भी विचार है कि यदि किसी साक्षी को अनामता मंजूर करने का मामला बनता है तो दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 161 या धारा 164 के अधीन उसका कथन मजिस्ट्रेट की उपस्थिति में अभिलिखित किया जा सकेगा और उसे गोपनीय रखा जा सकेगा । इस प्रकार का कथन विचारण आरम्भ होने से ठीक पहले खोला या प्रकट किया जाएगा ।

आन्ध्र प्रदेश उच्च न्यायालय के न्यायमूर्ति एस.आर.के. प्रसाद ने कहा है कि विधि में प्रत्येक उस परिस्थिति को ध्यान में नहीं रखाजा सकता जो अनामता का आवेदन करने के लिए उत्पन्न होती है । यह सदैव न्यायालय के विवेकाधिकार पर छोड़ा जाना चाहिए । उन्होंने आगे यह भी कहा है कि कार्यक्रम को कार्यान्वित करने से पूर्व, आधारभूत सुविधाएं तथा जुटाए जाना आवश्यक है । केवल विधान पारित कर देने से से ही आवश्यक परिणाम प्राप्त नहीं हो सकेंगे ।

उड़ीसा राज्य सरकार ने आने विधि विभाग के माध्यम से यह विचार व्यक्त किया है कि अनामता के बारे में कोई ऐसा सामान्य उपबंध नहीं होना चाहिए जिसमें सात वर्ष से अधिक का दंड हो, ऐसे अपराध प्रस्तावित विधि के अधिकार क्षेत्र में आएंगे । नशीले पदार्थों, निर्वाचनों, तस्करी आदि के मामलों के लिए भी, जहां समुदाय का हित अन्तर्ग्रस्त है, अनामत या संरक्षण का उपबंध होना

चाहिए । आगे यह भी कहा गया है कि उच्चतम न्यायालय ने पोटा की धारा 30 को विधिमान्य ठहराया है क्योंकि यह एक विशेष अधिनियम है ।

पंजाब के पुलिस महानिदेशक ने यह सुझाव दिया है कि उन मामलों में जहां साक्षियों को अनामता या संरक्षण दिया गया है वहां यह सुनिश्चित कराया जाना चाहिए कि उनके कथन उसी तारीख को अभिलिखित कर लिए जाएंगे जिस तारीख को उन्हें बुलाया गया है और कोई स्थगन मंजूर नहीं किया जाना चाहिए क्योंकि बार-बार के स्थगन से किसी स्तर पर साक्षी की पहचान प्रकट हो जाएगी ।

गुजरात राज्य के पुलिस महानिदेशक और पुलिस महानिरीक्षक का विचार है कि जहां साक्षी ऐसा महसूस करे कि राज्य द्वारा नियुक्त अभियोजन के वकली द्वारा उसके धर्म, जाति या पंथ को प्रतिकूल दृष्टि से देखा जाएगा या राज्य द्वारा नियुक्त किए गए अभियोजन के वकील की विश्वसनीयता के बारे में संदेह हो तथा जहां राज्य में किसी धर्म विशेष में विश्वास रखने वाली सरकार हो, वहां साक्षी को अपना वकील लाने का अधिकार होना चाहिए जिसका व्यय सरकार को वहन करना होगा और उस प्रयोजन के लिए धनराशि न्यायपालिका के अधिकार क्षेत्र में होनी चाहिए ।

साऊथ एशिया रीजनल इनीशिएटिव/इक्वीटी सपोर्ट प्रोग्राम (एन.जी.ओ.) ने भारत में महिलाओं और बालकों के अवैध व्यापार को रोकने के लिए एक पीड़ित/साक्षी प्रोटोकॉल प्रस्तुत किया है । इसके अनुसार अवैध व्यापर के पीड़ितों की अभिरक्षा/पहचान/पता तब तक प्रकट या सार्वजनिक नहीं किया जाना चाहिए जब तक कि बाल कल्याण समिति द्वारा गृह संबंधी प्रभावी अध्ययन प्रस्तुत नहीं कर दिया जाता । इसके अतिरिक्त, जाली ग्राहक की पहचान और पता भी

गोपनीय रहना चाहिए, अन्वेषण अधिकारी द्वारा उसे प्रकट नहीं किया जाना चाहिए। पीड़ित को अभियुक्त के साथ एक ही वाहन में नही ले जाया जाना चाहिए ।

औरंगाबाद (महाराष्ट्र) से एक अधिवक्ता ने यह सुझाव दिया है कि "आभ्यासिक अनाम साक्षियों" के बारे में कोई भी उपबंध किया जाना चाहिए जो अनाम साक्षी के रूप में एक ही अभियुक्त के विरूद्ध एक-दो बार साक्ष्य देने के लिए आगे आता है, या जहां उक्त साक्षी एक ही पुलिस स्टेशन की ओर से बार-बार साक्ष्य देने के लिए आता है उसे "आभ्यासिक अनाम साक्षी" समझा जाना चाहिए । इन मामलों में ऐसे साक्षी से वचन लिया जाना चाहिए कि अभियुक्त के प्रति उसकी कोई दुर्भावना नहीं है या उससे कोई वैमनस्य नहीं है ।

अध्याय -पांच

पीड़ित पहचान संरक्षण का विस्तार सेशन न्यायालय द्वारा विचारण किए जाने वाले गम्भीर अपराधों के सामान्य मामलों के लिए किए जाने की आवश्यकता

प्रश्नावली के उत्तरों का निर्देश करते हुए, अब हम कतिपय महत्वपूर्ण विषयों पर विचार करेंगे ।

इस अध्याय का विषय महत्वपूर्ण है और प्रश्नावली के प्रश्न सं0 3 का भाग है ।

अध्याय-दो और अध्याय-तीन में हमने न्यायालयों में जांच और विचारण के संबंध में दंड विधि की प्रक्रियाओं के विकास की रूपरेखा प्रस्तुत की है । हमने देखा है कि जबकि खुले सार्वजनिक विचारण और अपने विरूद्ध साक्षी की परीक्षा अपनी उपस्थिति में कराए जाने के अभियुक्त के अधिकार के संबंध में कुछ सामान्य उपबंध हे परन्तु अभियुक्त के इन अधिकारों को सम्पूर्ण नहीं माना जाता है । वास्तव में, (क) यौन अपराध के पीड़ितों को प्रचार के विरूद्ध, (ख) आतंकवादी क्रियाकलापों के मामलों में पीड़ितों और साक्षियों की जांच और विचारण के दौरान उनकी पहचान को संरक्षण दिए जाने संबंधी, विशिष्ट प्रकार के विशिष्ट मामले भी सामने आ रहे हैं । यौन अपराधों के मामलों में, साक्षी के मामले में उच्चतम न्यायालय ने इस बात से सहमति व्यक्त की है कि वीडियो स्क्रीन के प्रयोग से अपनी उपस्थिति में साक्षियों की परीक्षा संबंधी अभियुक्त का अधिकार अल्प नहीं होता है ।

परन्तु इन विशिष्ट उपबंधों को छोडकर, विधानमंडल ने, भारतीय दंड संहिता, 1860 के अधीन आने वाले सेशन न्यायालय द्वारा सुने जाने वाले हत्या, दहेज के कारण होने वाली मृत्यु, बलात्संग, राज्य के विरूद्ध अपराध, अपहरण, अपगमन, आग तथा विस्फोटकों के दुष्कृत्यों, डकैती आदि जैसे गम्भीर अपराधों में साक्ष्य देने वाले साक्षियों को, जिन्हें जान-माल का उतना ही खतरा है,

जांच तथा विचारण के दौरान साक्षी की सुरक्षा और साक्षी पहचान संरक्षण की समस्याओं पर अभी तक सक्रिय रूप से विचार नही किया है ।

आज यह स्वीकार किया गया प्रतीत होता है कि पीड़ितों और साक्षियों के लिए इस प्रकार का संरक्षण अब केवल आतंकवादी या महिलाओं और शिशुओं के साथ यौन अपराधों जैसे विशेष मामलों के लिए ही सीमित नहीं रखा जा सकेगा क्योंकि हत्या, दहेज मृत्यु, बलात्संग, डकैती, अपहरण, अपगमन आदि जैसे गम्भीर अपराधें के मामलों में पीड़ितों और साक्षियों के लिए, जो जांच तथा विचारण के दौरान साक्ष्य देते हैं, गम्भीर समस्याएं हो सकती हैं ।

गम्भीर अपराध : पीड़ितों और साक्षियों की पहचान को संरक्षण की आवश्यकता।

गम्भीर अपराधों के मामलों में पीड़ितों और साक्षियों की पहचान को संरक्षण दिए जाने की आवश्यकता बहुत से देशों में महसूस की गई है और साधारण दंड संहिताओं के अधीन गम्भीर अपराधें की जांच और विचारण के दौरान संरक्षण दिए जाने के उपबंध किए गए हैं । ऐसे मामलों में धमकियां दिए जाने के कारण से साक्षियों के पक्षद्रोही हो जाने की बढ़ती हुई संख्या को देखते हुए, संरक्षण दिया जाना आवश्यक हो गया है ।

(i) परामर्शीपत्र

परामर्शीपत्र के पैरा 3.7 में हमने कहा है :

"आजकल, धमकियां दिए जाने के कारण साक्षियों का पक्षद्रोही हो जाना केवल आतंकवादी मामलों तक ही सीमित नहीं रह गया है । भारतीय दंड संहिता या अन्य विधियों के अधीन आने वाले अन्य प्रकार के अपराधों में भी इस प्रकार की घटनाएं चिन्ताजनक स्थिति तक पहुंच गई है । इसलिए, अन्य देशों के समान, ऐसे मामलों में जहां साक्षियों तथा पीड़ितों के विरूद्ध बाहुबल, राजनैतिक शक्ति, धनशक्ति या अन्य तरीकों का प्रयोग किया

तालब हाजी हुसैन बनाम मधुकर पुरूषोत्तम मोंडका : ए आई आर 1958 एस सी 374 मामले में उच्चतम न्यायालय ने यह विचार व्यक्त किया था कि साक्षी अभियोजन या प्रतिरक्षा पक्ष से किसी उत्प्रेरण या धमकी के बिना साक्ष्य देने के लिए स्वतंत्र होना चाहिए । यदि अभियुक्त के किसी आचरण से निष्पक्ष विचारण बाधित होने की संभावना है तब साक्षियों का फुसलाया जाना या डराया-धमकाया जाना या निष्पक्ष विचारण बाधित होना रोकने के लिए, न्याय का उद्देश्य प्राप्त करने के लिए उच्चतम न्यायालय को अपनी निहित शक्तियों का प्रयोग करने का अवसर है । न्यायालय ने सिद्धान्त को उच्च न्यायालय में निहित शक्तियों पर आधारित किया है । यह भी एक सामान्य मामला था जो आतंकवाद या यौन अपराधों से संबंधित नहीं था ।

यद्यपि, करतार सिंह बनाम पंजाब राज्य 1994(3) एस सी सी 569 मामला आतंकवादी विचारण (टाडा) से संबंधित है फिर भी उच्चतम न्यायालय 'साक्षियों को परेशान किए जाने के भय' के संबंध में, जिसका निवारण किए जाने के आवश्यकता है, सामान्य विचार व्यक्त किए हैं ।

स्वर्ण सिंह बनाम पंजाब राज्य : ए आई आर 2001 एस सी 2017 मामले में उच्चतम न्यायालय ने साक्षियों की दुर्दशा का वर्णन किया है जिन्हें न केवल धमकी दी गई अपितु अपंग बना दिया गया या मार डाला गया या रिश्वत दे दी गई । यह भी एक सामान्य मामला ही था ।

इसी प्रकार, यद्यपि पीयूसीएल बनाम भारत संघ 2003(10) स्केल 967 मामला आतंकवादी क्रियाकलापों से संबंधित था फिर भी पीड़ितों और साक्षियों के संरक्षण के बारे में सामान्य विचार अभिव्यक्त किए गए हैं ताकि वे निर्भय होकर साक्ष्य दे सकें ।

एनएचआरसी बनाम गुजरात राज्य 2003 (9) स्केल 329 मामले में निष्पक्ष विचारण की अवधारण स्पष्ट की गई जिसका अर्थ यह है कि विचारण न केवल अभियुक्त के लिए अपितु पीड़ित के लिए भी निष्पक्ष होना चाहिए । पीड़ित और साक्षियों की सुरक्षा बुत से मामलों में आवश्यक हो जाती है (उपर्युक्त मामला भारतीय दंड संहिता के अधीन गम्भीर अपराध से संबंधित एक मामला था)।

दिल्ली उच्च न्यायालय ने श्रीमती नीलम कटारा बनाम भारत संघ (क्रिम. डब्ल्यू पी 247, 2002) (तारीख 14.10.2003) मामले में, जो कथित हत्या से संबंधित था, साक्षी संरक्षण के लिए मार्गनिर्देश जारी किए । मार्गनिर्देशों में, अभियुक्त शब्द को निम्नलिखित रूप में परिभाषित किया गया:

"अभियुक्त से ऐसा व्यक्ति अभिप्रेत है जिस पर ऐसा अपराध करने का आरोप लगाया गया है या संदेह किया गया है जो मृत्यु दंड या आजीवन कारावास से दंडनीय है" ।

हमने परामर्शीपत्र के पैरा 5.14 में उपर्युक्त मामले में दिल्ली उच्च न्यायालय द्वारा विस्तृत रूप में अधिकथित मार्गनिर्देशों का निर्देश किया है और हम उनकी पुनरावृत्ति करना नहीं चाहते ।

यह स्पष्ट है कि दिल्ली उच्च न्यायालय ने यह महसूस किया है कि यदि अपराध इस प्रकार के हैं जिनमें मृत्यु दंड या आजीवन कारावास जैसा अधिकतम दंड दिया जा सकता है तब साक्षी का संरक्षण आवश्यक हो जाएगा।

भारतीय दंड संहिता, 1860 के अधीन गम्भीर अपराधों से संबंधित हाल ही में जाहिरा 2004(4) स्केल 373 मामले में उच्चतम न्यायालय ने साक्षियों के संरक्षण की आवश्यकता पर जोर दिया है ।

(iii) अन्य अधिकारिताओं में उपबंध जो सामान्यतया साक्षी संरक्षण से संबंधित हैं ।

(क) आई सी सी पी आर का अनुच्छेद 14(1) तथा यूरोपीय कन्वेंशन का अनुच्छेद 6(1) ऐसे मामले में निर्बंधनों की अनुज्ञा देते हैं जहां न्याय प्रशासन पर प्रतिकूल प्रभाव पडता है । इनमें विवक्षतः अपवाद स्वरूप साक्षी संरक्षण की अनुज्ञा दी गई है । हमारे विचार में उक्त संरक्षण विशिष्ट

अपराध तथा सामान्य अपराध दोनों के लिए लागू होता है परन्तु यह कि यदि न्याय प्रशासन के लिए प्रतिकूल होने का प्रमाण उपलब्ध है ।

इसका कारण खोजना दुर्लभ नहीं है । आतंकवाद और महिलाओं तथा शिशुओं के विरूद्ध यौन अपराधों के मामले में, हम समाज के एक ऐसे वर्ग के बारे में विचार कर रहे हैं जो अत्यन्त असुरक्षित है, चाहे वे पीड़ित हो अथवा साक्षी । पीड़ित और साक्षी भयभीत है या उनके तथा उनके संबंधियों के जीवन और सम्पत्ति को खतरा बना हुआ है । यह बात स्पष्ट है कि भारतीय दंड संहिता, 1860 तथा अन्य अधिनियमितियां जिनमें से कुछ का उल्लेख हम ऊपर कर चुके हैं, के अधीन गम्भीर अपराधों के मामले में पीड़ितों और साक्षियों की परिस्थितियां पूर्णतया समान होनी ही हैं । जहां विशिष्ट विधियों के अधीन कतिपय अपराधों के मामले में, पीड़ित तथा साक्षियों के लिए इस प्रकार का भय और अधिक सामान्य और स्पष्ट हो सकता है, अन्य गम्भीर अपराधों से संबंधित पीड़ितों और साक्षियों के लिए भय की समस्या कम महत्वपूर्ण नहीं है । यह बात स्पष्ट है कि यदि विशिष्ट अपराधें के मामलों में विचारण अभियुक्त तथा साक्षी/पीड़ित दोनों के लिए निष्पक्ष होना है तब भारतीय दंड संहिता, 1860 के अधीन आने वाले गम्भरी स्वरूप के सामान्य अपराधों के लिए इतना ही निष्पक्ष विचारण क्यों नहीं होना चाहिए । भय या खतरा अथवा उसकी संभावना दोनों प्रकार के मामलों के लिए एक समान है। इसलिए, अन्य बहुत से देशों में अनेकों सामान्य विधियों में पीड़ित तथा साक्षी के संरक्षण के लिए उपबंध किए गए हैं ।

(ख) सामान्य संरक्षण का सर्वोत्तम उदाहरण (न्यूजीलैण्ड साक्ष्य अधिनियम, 1908 (साक्ष्य (साक्षी अनामता) संशोधन अधिनियम, 1997 द्वारा संशोधित रूप में) है । धारा 13ख से धारा 13ञ तक में जिस संरक्षण की कल्पना की गई है वह सभी अभ्यादोपण्य अपराध के लिए लागू होता है, इसलिए, यह अपराध विशिष्ट न होकर साक्षी विशिष्ट है (धारा 13ख और धारा 13ग) । उपर्युक्त अधिनियम

की धारा 13(4) में कहा गया है कि न्यायाधीश अनामता आदेश पारित कर सकेगा यदि उसका समाधान है कि -

"(क) साक्षी या किसी अन्य व्यक्ति की सुरक्षा को खतरे की संभावना है, या यदि साक्षी की पहचान प्रकट कर दी जाती है तो, सम्पत्ति को गम्भीर क्षति पहुंचने की संभावना है; और

(ख) या

(i) ऐसा विश्वास करने का कोई कारण नहीं है कि साक्षी की पिछली दोषसिद्धियों को (जहां लागू हो) या अभियुकत के साथ या अभियुक्त के किन्ही साथियों के साथ साक्षी के संबंधों को ध्यान में रखते हुए साक्षी को सच न बोलने में कोई प्रयोजन है; या

(ii) साक्षी की पहचान प्रकट किए बिना साक्षी की विश्वसनीयता का समुचित परीक्षण किया जा सकता है; और

(ग) आदेश अभियुक्त को निष्पक्ष विचारण से वंचित नहीं करेगा ।"

(ग) इसी पद्धति पर, 1999 के पुर्तगाल के अधिनियम सं0 93 में 'साक्षी संरक्षण' का उल्लेख किया गया है और अधिनियम की धारा 16 में अपेक्षा की गई है कि यदि साक्षियों, उनके संबंधियों या उनके निकट सम्पर्क के अन्य व्यक्तियों को, उनके जीवन, शारीरिक सुरक्षा, स्वतंत्रता, बहुमूल्य सम्पत्ति को वहां गम्भीर खतरा हो जहां तारीख 22 जनवरी के मंत्रिमंडलीय आदेश15/93 की धारा 28 और दंड संहिता की धारा 169, धारा 299, धारा 300, धारा 301 के अधीन अपराधों के लिए 8 वर्ष या इससे अधिक कारावास के दंड का उपबंध है । धारा में अपेक्षा की गई है कि साक्षी विश्वसनीयता न्यायोचित संदेह से परे हो और उसका प्रमाणक महत्व हो ।

(घ) आस्ट्रेलियायी साक्ष्य अधिनियम, 1889 की धारा 2क (1)(ख) के उपबंध ऐसे विशिष्ट साक्षियों के रूप में वर्णित किया गया है जो साक्षी के रूप में मानसिक आघात से पीड़ित है या जिनको अभित्रस्त किए जाने की संभावना है या साक्षी होना हानिकर है । न्यायालय द्वारा उनके हित में, जनता तथा अभियुक्त को न्यायालय से बाहर रखने सहित, विशिष्ट प्रबंध किए जा सकते हैं । वीडियो-टेप साक्ष्य के लिए भी अनुमति दी जा सकती है ।

(ङ) अब हम सामान्यतः पीड़ित सुरक्षा और साक्षी पहचान संरक्षण के बारे में अन्य देशों में निर्णित कतिपय मामलों का निर्देश करेंगे ।

इंग्लैण्ड में, मार्कस् बनाम बेससः (1890)25 क्यू बी डी 494 मामले में न्याय प्रशासन का सामान्य सिद्धान्त अधिकथित किया गया है ।

केन बनाम ग्लास : (एन यू एल)(1985) एन एस डब्ल्यू एल क्यू 230 जे ए मैकह्यू ने कहा था कि अनामता के सिद्धान्त न केवल पुलिस के भेदियों के लिए लागू होता है अपितु उक्त सिद्धान्त पंजीकृत भेदियों से अतिरिक्त व्यक्तियों के लिए भी लागू होता है ।

विक्टोरिया (आस्ट्रेलिया) के उच्चतम न्यायालय ने जारवी तथा अन्य बनाम दी मजिस्ट्रेटस् कोर्ट ऑफ विक्टोरिया एट बर्नसविक: 1995 (1) वी आर 84 मामले में यह अभिधारित किया था कि मजिस्ट्रेट को सभी साक्षियों के पक्ष में अनामता आदेश पारित करने की शक्ति प्राप्त है और यह शक्ति केवल पुलिस अधिकारियों की पहचान प्रकट न किए जाने तक ही सीमित नहीं है । यह लागू होती है-

> "ऐसे अन्य साक्षियों के लिए जिनकी पहचान प्रकट किए जाने से उनकी व्यक्तिगत सुरक्षा को खतरा हो सकता है" ।

न्यायालय ने 4 प्रस्ताव अधिकथित किए हैं जिनमें प्रस्ताव (2) का पाठ निम्नलिखित है :

> "(2) जो नीतियां सार्वजनिक उन्मुक्ति के एक पहलू के रूप में भेदियों के संरक्षण का औचित्य ठहराती हैं वे पुलिस अधिकारियों की पहचान प्रकट न किए जाने को संरक्षण प्रदान

करने के लिए भी लागू होती हैं तथा अनामता का दावा अन्य साक्षियों द्वारा नहीं किया जा सकता है जिनकी पहचान प्रकट होने से उनकी सुरक्षा को खतरा होता है"।

सारांश तथा निष्कर्ष

इस प्रकार, जबकि विधि का यह सामान्य सिद्धान्त है कि अभियोजन साक्षियों के नाम और पते जानना अभियुक्त का अधिकार है ताकि वह इस बात की जांच कर सके कि क्या साक्षी अपराध के विषय में साक्ष्य देने के लिए सक्षम है और ताकि वह प्रतिपरीक्षा के अपने अधिकार का प्रयोग कर सके, यद्यपि यह अधिकार परिपूर्ण नही है । इसे पीड़ित तथा अन्य अभियोजन साक्षियों के अधिकारों के विरूद्ध संतुलित करना होगा ताकि वे अपने तथा अपने संबंधियों के जीवन और सम्पत्ति के खतरे से भय मुक्त होकर साक्ष्य दे सकें । ऐसे मामलों में, पीड़ित को बीच में स्क्रीन की व्यवस्था करके या वीडियो लिंक के माध्यम से साक्ष्य देने की अनुज्ञा होनी चाहिए ताकि उसे अभियुक्त का सामना न करना पडे और अभियोजन साक्षी ऐसी व्यवस्था में साक्ष्य दे सकेगा और अभियुक्त उन्हें नहीं देख सकेगा और उनकी पहचान अभियुक्त और उसके वकील को प्रकट नहें हो सकेगी । उपर्युक्त किसी भी व्यवस्था में न्यायाधीश पीड़ित या अभियोजन साक्षी को साक्ष्य देते हुए देख सकेगा ।

हम इस बात को दोहराना चाहेंगे कि आज यह स्वीकृत है कि पीड़ित और साक्षियों की सुरक्षा की आवश्यकता आतंकवादी या महिलाओं और शिशुओं के साथ यौन अपराधों तक ही सीमित होना आवश्यक नहीं है जिनके बारे में विशेष विधियां विद्यमान हैं ताकि वे बिना किसी भय के साक्ष्य दे सकेंगे और अभियोजन पक्ष के साक्षी भी निर्भय होकर साक्ष्य दे सकेंगे । इस सिद्धान्त का विस्तार सामान्यतः गम्भीर अपराधों के मामलों के लिए भी कर दिया गया है जहां न्यायालय का ऐसा समाधान हो जाता है कि पीड़ित और उनके संबंधियों को साक्षियों और उनके संबंधियों को उनकी जान-माल के खतरे की संभावना का प्रमाण है । निःसंदेह, यह भी स्वीकार किया गया है कि यह प्रक्रिया केवल आवादिक परिस्थितियों में, और न्यायालय का समाधान हो जाने पर पीड़ित और साक्षी विश्वसनीय है, अपनाई जानी चाहिए । आगे यह भी आश्वस्त किया जाना चाहिए कि न्यायाधीश अभियुक्त के अपराध का विनिश्चय करते समय अभियुक्त को केवल इस कसौटी के आधार पर नहीं तोलना चाहिए कि एक अनामता आदेश पारित किया गया है या पीड़ित को सुरक्षा प्रदान की गई है ।

जैसाकि अभियुक्त (सी ए 60/97) (1997) 15 सी आर एन जैड 148 (पृष्ठ 156) (न्यूजीलैण्ड) (सी ए), मामले में अभिधारित किया गया है, न्यायालय का समाधान होना चाहिए कि –

(1) साक्षी को गम्भीर क्षति पहुंचने का पर्याप्त जोखिम विद्यमान है;

(2) जोखिम नहीं उठाया जाना चाहिए; और

(3) जोखिम को समाप्त करने या उसे स्वीकार्य सीमा तक कम करने का कोई न्यायोचित व्यवहार्य वैकल्पिक साधन नहीं है ।

उपर्युक्त (2) और (3) में यह अपेक्षा है कि निर्धारण करते समय ..... विशिष्ट आदेश द्वारा अभियुक्त को होने वोले सम्भावित हानिकर प्रभाव को ध्यान में रखा जाना चाहिए । जब न्यायाधीश किसी दांडिक मामले में ऐसा आदेश पारित करने के लिए अपने अधिकार का उपयोग करता है तब उसे अभियुकत के लिए निष्पक्ष विचारण के अधिकार को सुसंगत समझना चाहिए। यह भी ध्यान रखना आवश्यक है कि पीड़ितों या साक्षियों को या उनके संबंधियों को तथा उनकी सम्पत्तियों को भय या खतरा पृथक-पृथक मामले पृथक-पृथक तथ्यों में प्रमाणित किया जाना चाहिए ।

हमने कहा है कि पीड़ित और साक्षी सुरक्षा ऐसे सभी मामलों मं उपलब्ध होनी चाहिए जहां अपराध गम्भीर स्वरूप के हैं । 'गम्भीर अपराधों' शब्दों से क्या अभिप्रेत है । हमारा प्रस्ताव इन्हें ऐसे मामलों के रूप में वर्णित करने का है जिनका विचारण सेशन न्यायालय द्वारा किया जाएगा। मानदंड स्पष्टतः अपराध का स्वरूप और विचारण की प्रक्रिया है ।

दंड प्रक्रिया संहिता में चार प्रकार की प्रक्रियाएं दी गई हैं । ये निम्नलिखित है :

(क) सेशन न्यायालय के समक्ष विचारण (अध्याय - अठारह)

(ख) मजिस्ट्रेटों द्वारा वारंट मामलों का विचारण (अध्याय - उन्नीस)

(ग) मजिस्ट्रेटों द्वारा सम्मन मामलों का विचारण (अध्याय - बीस)

(घ) संक्षिप्त विचारण (अध्याय - इक्कीस)

संहिता की प्रथम अनुसूची में मामलों का वर्गीकरण इस दृष्टि से किया गया है कि कौन सा मामला किस न्यायालय द्वारा विचारणीय है । दांडिक मामलों के लिए सेशन न्यायालय उच्चतम न्यायालय है । स्पष्टतः, ऐसे अपराधों से संबंधित मामले जो गम्भीर हैं उन्हें सेशन न्यायालय द्वारा विचारणीय मामलों के रूप में वर्गीकृत किया गया है ।

सेशन न्यायालय के समान स्तर के अन्य न्यायालय तथा गंभीर अपराधों की सुनवाई के लिए विशेष न्यायालय भी हो सकते हैं ।

इसलिए, हमारा विचार है कि भारतीय दंड संहिता, 1860 के अधीन या विशिष्ट विधियों के अधीन अपराधों से संबंधित सभी मामले, यदि वे केवल सेशन न्यायालयों द्वारा, सेशन न्यायालयों के समान स्तर के न्यायालयों द्वारा गम्भीर अपराधों के लिए विशेष न्यायालयों द्वारा ही विचारणीय हैं, पीड़ित और साक्षी सुरक्षा के प्रयोजन से गम्भीर मामले समझे जाने चाहिए ।

अध्याय - छः

पीड़ितों तथा साक्षियों की सुरक्षा के लिए दांडिक न्यायालयों की अंतर्निहित शक्तियां और भारत की स्थिति

अन्य महत्वपूर्ण विषयों में से एक विषय पीड़ितों और साक्षियों को पहचान संरक्षण प्रदान करने संबंधी दांडिक न्यायालय की शक्ति से संबंधित है । क्या ऐसे संरक्षण के बारे में ऐसा आदेश पारित करना न्यायालय की 'अंतर्निहित शक्ति' पर आधारित है अथवा क्या इस प्रकार की शक्ति विधि द्वारा प्रदत्त होनी चाहिए?

हम इस विषय पर निर्णयजन्य विधि का निर्देश करेंगे ।

(क) ब्रिटेन

हाऊस ऑफ लार्डस् ने अटर्नी जनरल बनाम लेबलर मैगजीन, 1979 ऐ सी 440 मामले में यह स्पष्ट किया है कि न्यायालय साक्षियों क संबंध में अनामता आदेश अपनी 'अंतर्निहित शक्तियों' के अधीन पारित कर सकता है । न्यायालय ने अभियोजन साक्षी को उसके नाम से नहीं 'कर्नल बी' कहकर संबोधित किया । यह अभिनिर्धारित किया गया कि खुले विचारण के नियम के अपवाद भी हो सकते हैं, क्योंकि नियम तथा अपवाद दोनों ही न्याय प्रशासन के हित में हैं । यद्यपि न्यायालय अनामता का आदेश उसके लिए बनाए गए किसी विधान या नियम के बिना ही पारित कर सकेगा परन्तु विधानमंडल भी इस विषय पर नियम बना सकेगा । लार्ड डिपलॉक ने कहा था (पृष्ठ 450):-

"तथापि, क्योंकि सामान्य नियम का प्रयोजन न्याय के उद्देश्य को प्राप्त करना है परन्तु जहां किन्हीं विशिष्ट कार्यवाहियों का स्परूप और परिस्थितियां इस प्रकार की हैं कि सामान्य नियम को उसके पूर्ण रूप में लागू करने से न्याय प्रशासन पर प्रतिकूल प्रभाव पडेगा या वह अव्यवहार्य हो जाएगा या उससे किसी अन्य लोक हित को क्षति पहुंचेगी जिसके संरक्षण के लिए संसद ने नियम का अल्पीकरण करने के लिए विधिक उपबंध बनाए हैं वहां सामान्य

नियम से हटकर कार्यवाही करना आवश्यक है । सांविधिक अपवादों के अतिरिक्त भी जहां न्यायालय अपने समक्ष चल रहीं कार्यवाहियों के संचाल को नियंत्रित करने के लिए अपनी 'अंतर्निहित शक्तियों' का प्रयोग करते हुए किसी भी प्रकार सामान्य नियम से हटकर कार्यवाही करता है वहां नियम से हटकर कार्यवाही करना उस सीमा तक न्यायोचित है जिस सीमा तक न्यायालय का युक्तिसंगत विश्वास है कि इस प्रकार की कार्यवाही न्याय प्रशासन के अन्तिम उद्देश्य को प्राप्त करने के लिए आवश्यक है ।" (बल दिया गया)

निर्णय के अनुक्रम में, लार्ड डिपलॉक ने टेलर बनाम अटर्नी जनरल 1975(2) एन जैड एल आर 675 मामले में न्यूजीलैण्ड के अपीलीय न्यायालय के इस आशय के निर्णय का निर्देश किया कि न्यायालय को ऐसा निदेश देते हुए कि न्यायालय से बाहर कार्यवाहियां किस सीमा तक प्रकाशित की जानी चाहिए और किस सीमा तक वही आदेश करने की अंतर्निहित शक्ति प्राप्त है ।

आर बनाम मर्फी : (1980) (परामर्शीपत्र का पैरा 6.2.10 देखें) मामले में भी न्यायालय की अन्तर्निहित शक्ति पर बल दिया गया था ।

(ख) आस्ट्रेलिया

आस्ट्रेलिया में 'अंतर्निहित शक्ति' का सिद्धान्त न्यायालयों द्वारा साक्षियों की अनामता के बारे में आदेश पारित करने का आधार प्रतीत होता है । यह बात इस तथ्य से स्पष्ट हो जाती है कि ये आदेश सांविधिक शक्तियों का उपबंध न होने की स्थिति में पारित किए गए थे । परमर्शीपत्र (पैरा 6.3.7 देखें) में, हमने आस्ट्रेलिया की स्थिति को संक्षेप में निम्नलिखित रूप में दर्शाया है :

"स्थिति का सारांश यह है कि आस्ट्रेलिया के न्यायालय इस बात से सहमत हैं कि ऐसे मामलों में जहां साक्षियों या उनके परिवारों को खतरा या क्षति पहुंचने की संभावना का प्रमाण है वहां न्यायालय को अनामता का ओदश पारित करने की 'अन्तर्निहित शक्ति' प्राप्त

है और यह प्रक्रिया आतंवाद के गम्भीर मामलों, पुलिस भेदियों या उद्यपन या पुलिस एजेंटों का प्रकटीकरण तक ही सीमित नहीं है। महत्वपूर्ण बात यह है कि साक्षी को खतरे की न्यायोचित संभावना का प्रमाण होना चाहिए । इस प्रकार की स्क्रीनिंग और अनामता की प्रक्रिया का निष्पक्ष विचारण के अभियुक्त के अधिकार के अनुरूप होना अभिनिर्धारित किया गया है । वीडियो टेप के साक्ष्य को भी ग्राह्य माना गया है।"

विक्टोरिया के उच्चतम न्यायालय ने, जारवी तथा अन्य बनाम दी मजिस्ट्रेटस् कोर्ट ऑफ विक्टोरिया एट बर्नसविक तथा अन्य : 1995(1) वी आर 84, मामले में आर बनाम दी स्टाइपेंडियरी मजिस्ट्रेट ए साऊथ पोर्ट एक्स पार्टी गिब्सन :1993(2) क्यू डी आर 687, मामले में क्वीन्सलैण्ड के निर्णय का अनुसरण करने से इंकार कर दिया था । न्यायालय ने यह अभिनिर्धारित किया था कि वह दो अज्ञात पुलिस अधिकारियों के बारे में अपनी अन्तर्निहित शक्तियों के अधीन कार्यवाहियों की सुपुर्दगी के स्तर पर अनामता का आदेश पारित कर सकता है । यह अभिनिर्धारित किया गया कि यद्यपि, तथ्यों के आधार पर विचारण न्यायालय ने ऐसा आदेश पारित नहीं किया था तो भी ऐसे आदेश पारित करना न्यायालय की अधिकारिता में था । न्यायालय का आदेश कार्यवाहियों के सुपुर्दगी स्तर तथा विचारण स्तर दोनों के लिए लागू होता था । उच्चतम न्यायालय ने यह अभिनिर्धारित किया कि यह सिद्धान्त केवल अज्ञात पुलिस अधिकारियों के लिए ही सीमित हीं था । यह -

"अन्य साक्षियों के लिए भी जिनकी पहचान प्रकट होने से उसकी व्यक्तिगत सुरक्षा को खतरा हो सकता हो, हो सकेगा "

के लिए भी लागू होता है ।

विटनैस बनाम मौसडन तथा अन्य : 2000 एन एस डब्ल्यू (सी ए) मामले में, जो अवमानना की कार्यवाही से संबंधित था, अपीलीय न्यायालय (हेडन जे ए, मैसन पी तथा प्रोस्टने जे ए)ने विचारण न्यायालय का आदेश अपास्त कर दिया और अनामता की मंजूरी दे दी तथा यह

अभिनिर्धारित किया कि खुले विचारण का अधिकार अनामता का आदेश पारित किए जाने पर न्यूनतम हस्तक्षेप के अध्यधीन है ।

(ग) न्यूजीलैण्ड

न्यूजीलैण्ड के 'बिल ऑफ राइटस्' पर लेखक पॉल रिशवर्थ और अन्य (ऑक्सफोर्ड यूनिवर्सिटी प्रेस, 2003) ने अपनी टिप्पणी में कहा है (पृष्ठ 697) :

> "परम्परागत अपेक्षा कि साक्षी न्यायालय कक्ष में अभियुक्त के सामने साक्ष्य देगा विधि द्वारा तथा सामान्य विधि में विचारण न्यायाधीश की अन्तर्निहित अधिकारिता के प्रयोग दोनों के द्वारा उपांतरित कर दी गई है ।"

परन्तु, न्यूजीलैण्ड की विधि प्रारम्भ में अन्य प्रकार की थी । न्यायालय यह दृष्टिकोण अपनाते थे कि खुले न्याय के लिए अपवादों के उपबंध करना विधानमंडल का कार्य है न्यायालयों का नहीं । अज्ञात पुलिस अधिकारियों के बारे में आर बनाम ह्यूज :1986 (एन जैड एल आर 129 (सी ए) मामले में न्यायमूर्ति रिचर्डसन ने कहा था कि कोई भी छूट 'निरूद्देश्य' (स्लिपरी स्लोप) होगी और खुला विचारण 'दुर्बल' हो जाएगा जैसाकि अमरीकी उच्च न्यायालय ने स्मिथ बनाम इलियन्स : (1968)390 यू एस 129, मामले में अभिनिर्धारित किया था । परन्तु कुक पी. तथा मैक मुलैन जे जे द्वारा दिए गए अल्पमत निर्णय में एक विपरीत दृष्टिकोण अपनाया और इसे न्यायालय की अंतर्निहित अधिकारिता पर आधारित किया ।

विधानमंडल ने अल्पमत के दृष्टिकोण को सम्मान देते हुए न्यूजीलैण्ड साक्ष्य अधिनियम, 1908 में, साक्ष्य (संशोधन) अधिनियम, 1986 की धारा 2 के द्वारा संशोधन करते हुए, धारा 13क अन्तःस्थापित की जिसके अनुसार दो प्रकार के मामलों में - पहले औषधि दुरूपयोग अधिनियम (1975) के अधीन औषधि संबंधी अपराध (अपवाद 7 और 13) और दूसरे अभ्यारोपित किए जाने

पर विचारित अपराध जहां 7 वर्ष से अधिक कारावास का दंड दिया जा सकता था - न्यायालयों को शक्तियां प्रदान की गई ।

पुलिस भेदियों से भिन्न अन्य साक्षियों के प्रश्न पर आर बनाम कॉलमैन तथा अन्य : (1990) 14 सी आर एन जैड (2002) 258 मामले में न्यायमूर्ति भार्गवनाथ ने विचारण-पूर्व निर्णय में ब्रिटेन के आर बनाम डी जे एक्स, सी सी वाई, जी जी जैड :(1990) 91 क्रि. एप्प.रैप 36 और आर बनाम वाटफोर्ड मजिस्ट्रेटस् एक्स पास्टी लेहमैन :(1993) क्रिम. एल आर 253, मामलों का अनुसरण करते हुए 1986 के संशोधन के दृष्टिकोंण का अनुसरण किया । कॉलमैन के मामले में, विचारण के समय न्यायमूर्ति राबर्टसन ने न्यायमूर्ति भार्गवनाथ का अनुसरण किया । परन्तु, उसके पश्चात् आर बनाम हाइन्स :(1997) 15 सी आर एन जैड 158, मामले में अपीलीय न्यायालय ने आर बनाम ह्यूज मामले में दिए गए अपने पहले निर्णय में कोई छूट देने से इंकार कर दिया और कहा कि यह विधानमंडल का कार्य है न्यायालयों का नहीं । न्यायमूर्ति गौल्ट तथा थोमस ने विमति व्यक्त की और यह विचार व्यक्त किया कि अनामता की मंजूरी देना न्यायालयों की अन्तर्निहित शक्ति का ही एक भाग है ।

इस बीच, न्यूजीलैण्ड के बिल ऑफ राइटस्, 1990 की धारा 25(च) में कहा गया कि प्रतिपरीक्षा का अधिकार मूल अधिकार हे । अनुच्छेद 25(च) में निर्देश है -

"अभियोजन साक्षी की परीक्षा का अधिकार और अभियोजन पक्ष के समान परिस्थितियों के अधीन प्रतिरक्षा साक्षियों की उपस्थिति और परीक्षा प्राप्त करना"

बलात्संग के एक मामले में, अपीलीय न्यायालय ने आर बनाम एल : (1994)(2) एन जैड एल आर 54, मामले में स्पष्ट किया कि प्रतिपरीक्षा का अधिकार परिपूर्ण नहीं है । बलात्संग से पीड़ित का पहला साक्ष्य अभियुक्त के विरूद्ध रखा जा सकता है ।

आर बनाम हाइन्स मामले से उत्पन्न हुई समस्या का समाधान करने के लिए सभी साक्षियों के लिए, जिनके जीवन को खतरा था, संरक्षण लागू करने के लिए साक्ष्य (साक्षी अनामता) संशोधन अधिनियम, 1997 द्वारा साक्ष्य अधिनियम, 1908 में संशोधन करते हुए विधानमंडल ने धारा 13ख से धारा 13ञ तक नई धाराएं अधिनियमित की ।

1997 में संशोधन के पश्चात् आर बनाम एटकिन्स 2000(2)एन जैड एल आर 46 (सी ए), मामले में धारा 13ख से धारा 13ञ तक पर विचार किया गया और संशोधन के उपबंधों का स्पष्टीकरण किया गया । हमने परामर्शीपत्र के पैरा 6.4.7 में इस निर्णय का विस्तारपूर्वक निर्देश किया है । न्यूजीलैण्ड में यही स्थिति है ।

(घ) कनाडा

कनाडा के न्यायालयों ने अंतर्निहित शक्ति के अधिकार के भाग के रूप में 'निर्दोषिता खतरे में' का सिद्धान्त अधिकथित किया है । कनाडा के कन्स्टीट्यूशन एक्ट, 1982 के भाग-एक में चार्टर ऑफ राइटस् एण्ड फ्रीडमस् दिया गया है । धारा 7 वैयक्तिक समग्रता का उल्लेख करती है और उसमें कहा गया है :

> "धारा 7 : वैयक्तिक समग्रता : प्रत्येक व्यक्ति को जीवन, स्वतंत्रता और व्यक्तिगत सुरक्षा का अधिकार प्राप्त है और उसे मूलभूत न्याय के सिद्धान्तों के अनुसरण के सिवाय इस अधिकार से वंचित नहीं किया जा सकता":

धारा 11(घ) में निष्पक्ष सार्वजनिक सुनवाई का उल्लेख किया गया है ।

"धारा 11 : निष्पक्ष विचारण : प्रत्येक व्यक्ति को -

(क) ....

(ख) ....

(ग) ....

(घ) निर्दोष समझा जाएगा जब तक कि वह एक स्वतंत्र और निष्पक्ष अधिकरण द्वारा निष्पक्ष सार्वजनिक सुनवाई में विधि के अनुसार दोषी साबित नहीं होता"

कनाडा के न्यायालय द्वारा आर बनाम ड्यूनेट :1994 (1) एस सी आर 469 मामले में अधिकथित किए गए सिद्धान्त फिर से न्यायालय की 'अन्तर्निहित शक्तिया' पर आधारित किए गए प्रतीत होते हैं । उच्चतम न्यायालय ने यह अभिनिर्धारित किया कि निष्पक्ष सार्वजनिक विचारण का सिद्धान्त परिपूर्ण नहीं माना गया है । अनामता की मंजूरी के लिए छूट केवल तभी अनुज्ञेय है जब क्राऊन यह दर्शाए कि पहचान प्रकट करने से सूचनादाताओं या निर्दोष व्यक्तियों या विधि प्रवर्तन अधिकारियों के हितों पर प्रतिकूल प्रभाव पडेगा और यह भी दर्शित करें कि इस प्रकार का प्रतिकूल प्रभाव अभियुक्त के हितों से भी परे होगा ।

आर बनाम खेला : 1995 (4) एस सी आर 201, मामले में, यह मामला पुलिस भेदिये की पहचान के बारे में था, अभियुक्त के लिए चार्टर की धारा 24(1) का आश्रय लिया गया । धारा 24(1) 'न्यायालय में पहुंच' के बारे में है और धारा 24(2) में कहा गया है कि जहां धारा 24(1) के अधीन कार्यवाहियों में, न्यायालय इस निष्कर्ष पर पहुंचता है कि साक्ष्य इस प्रकार से लिया गया है कि उससे चार्टर में दिए गए किन्हीं अधिकारों या स्वतंत्रताओं का अतिक्रमण हुआ है या उन्हें अस्वीकार किया गया है तब, यदि यह स्थापित कर दिया जाता है कि सभी परिस्थितियों को ध्यान में रखते हुए, कार्यवाहियों में इसका ग्रहण किया जाना न्याय प्रशासन के लिए अपकीर्तिकारी होगा, इस साक्ष्य को निकाल दिया जाएगा ।

उपर्युक्त मामलों में प्रश्न किसी मुखबिर की प्रतिपरीक्षा से इंकार कर दिए जाने से संबंधित था और प्रतिपरीक्षा के समय साक्षी ने अपनी सुरक्षा सुनिश्चित करने के लिए शिरो वस्त्र पहन लिया था । उच्चतम न्यायालय ने यह अभिनिर्धारित किया कि यदि व्यक्ति के जीवन को खतरा था तो

विचारण से ठीक पहले तक उसका नाम और पता प्रकट नहीं किया जाना चाहिए था । पहले राऊंड में जो उच्चतम न्यायालय तक गया, न्यायालय ने एक आदेश पारित किया जिसमें साक्षी की अनामता प्रकट करने का निदेश दिया गया । दूसरे राऊंड में, उच्चतम न्यायालय ने यह अभिनिर्धारित किया कि पहले आदेश को कार्यान्वित किया जाना था या क्राऊन को उच्चतम न्यायालय के पहले आदेश में उपांतरण किए जाने की मांग करनी चाहिए यदि यह कहने के लिए कि मुखबिर का जीवन खतरे में था, उसके पास नई सामग्री थी ।

आर बनाम लेइपर्ट : 1997(1) एस सी आर 281 मामले में उच्चतम न्यायालय ने यह अभिनिर्धारित किया कि अभियुक्त, जो यह स्थापित करना चाहता था कि तलाशी वारंट न्यायोचित आधारों से समर्थित नहीं था, मुखबिर की पहचान संबंधी जानकारी, यदि यह पूर्णतया अनिवार्य थी, पाने का हकदार था । अभियुक्त को यह स्थापित करना था कि 'निर्दोष के लिए खतरा था'। अन्यथा, मुखबिर की पहचान संरक्षित रखी जानी चाहिए थी क्योंकि स्वेच्छा से जानकारी देने में व्यर्थ बनाने वाली कतिपय योजनाएं निष्फल हो जाएंगी यदि मुखबिरों के लिए अनामता की स्वीकृति नहीं दी जाती । मामले के तथ्यों के आधार पर, उच्चतम न्यायालय ने अनामता की स्वीकृति दे दी क्योंकि अभियुक्त साबित नहीं कर सका कि उनकी निर्दोषिता साबित करने के लिए मुखबिर की पहचान प्रकट होना अनिवार्य था ।

आर बनाम मेनटुक : 2003(3) एस सी आर 442 मामले में उच्चतम 'न्यायालय ने समुचित' न्याय प्रशासन को गम्भीर जोखिम से बचने के लिए अज्ञात पुलिस अधिकारियों के लिए अनामता की अनुमति दे दी । तथापि, न्यायालय ने अभियुक्त के अन्वेषण प्रयुक्त संचालनात्मक विषयों के प्रकटीकरण पर प्रतिबंध लगाने से इंकार कर दिया ।

कनाडा की उपर्युक्त निर्णयजनित विधि और इस क्षेत्र में किसी विधि का न होना यह दर्शाता है कि उच्चतम न्यायालय वास्तव में स्पष्ट और दृढतापूर्वक यह स्पष्ट कर रहा था कि अनामता आदेश न्यायालय की अंतर्निहित शक्ति के अन्तर्गत पारित किया जा सकता था ।

(ङ) साऊथ अफ्रीका

साऊथ अफ्रीका में दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 153 न्यायालय के विवेकाधिकार पर बंद कमरे में कार्यवाहियों की अनुज्ञा देती है और धारा 154 दांडिक कार्यवाहियों से संबंधित कतिपय जानकारी के प्रकाशन का निषेध करेन की अनुज्ञा देती है । साऊथ अफ्रीकी विधि आयोग ने चर्चा पत्र 90(200) प्रोजैक्ट 101 प्रकाशित किया है जो तीन विषयों के बारे में है । प्रतिपरीक्षा का अधिकार साऊथ अफ्रीका में मूल अधिकार है परन्तु न्यायालयों का विचार है कि यह अधिकार न तो सामान्य विधि में और न ही सांविधिक विधि में परिपूर्ण है । एस बनाम लीपाइल : 1986(4) एस ए 187(डब्ल्यू), मामले में, न्यायालय ने साक्षियों को बंद दरवाजे के पीछे से साक्ष्य देने की अनुज्ञा प्रदान की थी । एस बनाम पासट्र्स : 1986(4) एस ए 222(डब्ल्यू), मामले में, न्यायालय ने साक्षी की पहचान को गोपनीय रखने की अनुमति प्रदान की थी क्योंकि वहां 'वास्तविक जोखिम' था । किसी सांविधि के न होने की स्थिति में, स्पष्टतः इस प्रकार के आदेश न्यायालय की अंतर्निहित शक्तियों के अधीन दिए जा रहे हैं ।

(च) अमरीका

अमरीका में, स्मिथ बनाम इलियन्स : (1968) 390 यू एस 129 मामले में न्यायमूर्ति व्हाइट के इस विमति विचार ने कि 'कोई साक्षी उसकी पहचान के बारे में प्रश्नों के उत्तर देने में छूट दिया जाना उपयुक्त है, यदि साक्षी की वैयक्तिक सुरक्षा को खतरा है', धीरे-धीरे बाद के मामलों में विधि का रूप ले लिया और ये मामले मैरीलैण्ड बनाम क्रेग : (1990) 497 यू एस 836 से प्रारम्भ हुए जहां क्लोजड सर्किट टेलीविजन के माध्यम से साक्ष्य वैध स्वीकार किया गया । यह अभिनिर्धारित

किया गया कि अभियोगी साक्षियों द्वारा प्रतिवाद न किए जाने पर या केवल ऐसे विचारण में जहां इस प्रकार के प्रतिवाद की अनुज्ञा न देना एक महत्वपूर्ण लोक नीति को अग्रसर करने के लिए आवश्यक है और केवल वहां ही जहां साक्ष्य की विश्वसनीयता के बारे में उत्तर अन्य प्रकार से प्राप्त हो गया, हो सकेगा । यह मामला बालकों के साथ कुकृत्यों और पीड़ित के साक्ष्य से संबंधित था । निश्चित ही, ऐसे आदेश अन्तर्निहित शक्तियों के अधीन ही पारित किए गए ।

(छ) यूरोपीयन कोर्ट ऑफ ह्यूमैन राइट्स

यूरोपीयन कोर्ट ऑफ ह्यूमैन राइट्स ने भी कॉस्टोवास्की (1989), विजियर (2002) और फिट्ट (2000) मामलों में यह महसूस किया था कि यदि राष्ट्रीय न्यायालय अनामता आवश्यक समझते हैं तो यूरोपीय न्यायालय हस्तक्षेप नहीं करेगा । (परामर्शीपत्र का पैरा 6.8 देखें)

सारांश

विभिन्न देशों की उपर्युक्त निर्णयजनित विधि, हमारे विचार में, स्पष्ट रूप से यह स्थापित करती है कि न्यायालय को न्याय प्रशासन हित में अनामता आदेश पारित करने की अंतर्निहित शक्ति प्राप्त है । न्यायालय या तो यह घोषित करते हैं कि वे अपनी अंतर्निहित शक्ति का प्रयोग कर रहे हैं या वे संभवतया अपनी अंतर्निहित शक्तियों के अधीन ऐसे आदेश अन्यथा पारित कर रहे हैं । यह इस बात पर आधारित था कि न्यायालय को अपनी कार्यवाहियां इस प्रकार से नियमित करने की शक्ति प्राप्त है कि न्याय प्रशासन को क्षति न पहुंचे और यह कि उस नीति के भाग के रूप में न्यायालय को खुले सार्वजनिक विचारण के अभियुक्त के अधिकार और प्रतिपरीक्षा के लिए अभियुक्त के अधिकार को पीड़ित अथवा अभियुक्त के हितों में संतुलित करना होता है । निःसंदेह, न्यायालय को अभियुक्त के अधिकार का तब तक सरलता से उल्लंघन नहीं करना चाहिए जब तक

कि वह यह महसूस न करे कि पीड़ित या साक्षियों के हित में उनकी पहचान तथा आमने-सामने प्रतिवाद से उन्हें संरक्षण की आवश्यकता है । यद्यपि, अभियुक्त की स्वतंत्रता और नियत प्रक्रिया मूल आधार है, फिर भी अभियुक्त के अधिकार सदैव ही निष्पक्ष विचारण की दृष्टि से पीड़ित और साक्षियों के हितों के संरक्षण के विरूद्ध संतुलित किए जाने की आवश्यकता रहती है । इस प्रयोजन से न्यायालय, अपनी अंतर्निहित शक्तियों के अधीन, साक्षियों की पहचान को संरक्षण प्रदान कर सकेगा अथवा पीड़ित को स्क्रीन के पीछे से साक्ष्य देने की अनुमति दे सकेगा या साक्षी की पहचान प्रकाशित करने के लिए प्रेस और मीडिया पर प्रतिबंध लगा सकेगा । जिन्हें संरक्षण की आवश्यकता है, न्यायालय उन साक्षियों को क्लोजड सर्किट टेलीविजन के माध्यम से साक्ष्य देने की अनुमति दे सकेगा ताकि न्यायाधीश और प्रतिरक्षा का वकील साक्षियों के हाव-भावों को देख सके । निःसंदेह, प्राथमिक जांच में, यह साबित किए जाने की आवश्यकता है कि पीड़ित, साक्षी और उनके निकट संबंधियों के जान-माल की रक्षा के लिए इस प्रकार का विशेष आदेश आवश्यक है ।

भारत :

भारत में असाधारण स्थिति : दंड प्रक्रिया संहिता, 1973 के अधीन विचारण न्यायालयों को अंतर्निहित अधिकारिता नहीं है : केवल उच्च न्यायालयों को अंतर्निहित शक्तियां प्राप्त हैं ।

इस संदर्भ में, हमारा मत है कि दंड प्रक्रिया संहिता, 1973 की धारा 482 के अधीन यह घोषणा की गई है कि इस संहिता की कोई बात उच्च न्यायालय की अंतर्निहित शक्ति को सीमित या प्रभावित करने वाली नहीं समझी जाएगी । यह एक स्पष्ट घोषणा है कि दांडिक मामलों में उच्च न्यायालयों को अन्तर्निहित अधिकारिता प्राप्त है । परन्तु, असाधारण बात यह है कि मजिस्ट्रेट के न्यायालय और सेशन न्यायालय जैसे अन्य दांडिक न्यायालयों की स्थिति भिन्न है ।

सेशन न्यायालय और मजिस्ट्रेट के न्यायालय को प्राप्त अंतर्निहित शक्तियों के सिवाय, संहिता में ऐसा उपबंध न होने के कारण से उच्चतम न्यायालय को इस निष्कर्ष पर पहुंचना पडा है कि अधीनस्थ न्यायालयों को अंतर्निहित शक्तियां प्राप्त नहीं हैं । उच्चतम न्यायालय ने बिन्देश्वरी प्रसाद सिंह बनाम काली सिंह : ए आई आर 1977 एस सी 2432, मामले में इस स्थिति का स्पष्टीकरण किया था ।

इसलिए, अन्य देशों में चाहे जो भी स्थिति है, विचारण स्तर पर हमारे देश में मजिस्ट्रेट के न्यायालय और सेशन न्यायालय अंतर्निहित शक्तियों के अधीन साक्षियों के लिए अनामता आदेश पारित नहीं कर सकते । इसलिए, ऐसे आदेश पारित करने के लिए इन न्यायालयों को शक्तियां प्रदान किए जाने हेतु विधान पारित किया जाना आवश्यक है ।

जहां यह सच है कि वे न्यायालय जिनकी अंतर्निहित शक्तियां स्वीकृत अथवा मान्य है उन अंतर्निहित शक्तियों के अधीन अनामता आदेश पारित कर सकते हैं वहां हमारे देश में मजिस्ट्रेट न्यायालय और सेशन न्यायालय तब तक अनामता आदेश पारित नहीं कर सकते जब तक कि उन्हें विधानमंडल द्वारा ऐसी शक्तियां प्रदान नहीं की जातीं ।

अध्याय-सात

भारत में - (i) अन्वेषण के दौरान (ii) जांच में (iii) विचारण के दौरान - साक्षियों की अनामता के बारे मे निर्णय करने की प्रक्रिया

जैसाकि पीछे बताया जा चुका है (i) अन्वेषण के दौरान (ii) जांच में (iii) विचारण के दौरान अनामता प्रदान किए जाने के लिए एक प्रक्रिया होनी चाहिए । तथापि, हम सेशन न्यायालयों तथा अन्य समान स्तरीय विशेष न्यायालयों द्वारा विचारणीय मामलों तक, जिनमें साक्षी की अनामता आवश्यक हो सकेगी, सीमित रहना चाहते हैं ।

प्रकिया का निर्देश करने से पूर्व (देंखे नीचे (घ)के अधीन) हम कतिपय विशिष्ट विधियों और प्रक्रियाओं तथा इस विषय पर अन्य देशों की निर्णयजन्य विधियों के अधीन विद्यमान प्रक्रिया का निर्देश करेंगे ।

(क) भारत में पूर्ववर्ती विशिष्ट विधियों के अधीन प्रक्रिया

यद्यपि 'टाडा' की धारा 16(2) और (3) और 'पोटा' की धारा 30 और विधिविरूद्ध क्रियाकलाप (निवारण) अधिनियम, 1967 (2004 में संशोधित रूप में) की धारा 44 में साक्षी अनामता प्रदान करने के लिए कतिपय उपबंध अन्तर्विष्ट हैं, इन अधिनियमों के प्रारम्भिक प्रक्रिया अभिहित न्यायालय या विशिष्ट न्यायालय से प्रारम्भ होती है ।

परन्तु क्योंकि हम अनन्यतः सेशन न्यायालयों तथा अन्य समान स्तरीय न्यायालयों द्वारा विचारणीय अपराधों के बारे में ही विचार कर रहे हैं इसलिए, हमें सुनिश्चित करना है कि उपर्युक्त वर्णित तीनों स्तरों पर प्रक्रिया उपलब्ध हो ताकि जहां आवश्यक हो साक्षी की पहचान गोपनीय रखना निदेशित किया जा सके ।

हम अध्याय-तीन में पहले ही बता चुके है कि 'पोटा' (2002) में किए गए उपबंध, 1987 के 'टाडा' के उपबंधों के सुधार स्वरूप थे । 'पोटा' 2002 की धारा 30 में साक्षी अनामता प्रक्रिया निम्नलिखित रूप में अधिकथित की गई है :-

"30. साक्षियों का संरक्षण- (1) संहिता में किसी बात के होते हुए भी, यदि विशेष न्यायालय ऐसी वांछा करता है तो इस अधिनियम के अधीन कार्यवाहियां, लेखबद्ध किए जाने वाले कारणों से, बंद कमरे में की जा सकंगी।

(2) विशेष न्यायालय, अपने समक्ष किसी कार्यवाही में किसी साक्षी या ऐसे साक्षी के संबंध में लोक अभियोजक द्वारा आवेदन किए जाने पर या स्वप्रेरणा से, अपना यह समाधान हो जाने पर कि ऐसे साक्षी का जीवन खतरे में है, लेखबद्ध किए जाने वाले कारणों से ऐसे साक्षी की पहचान और उसका पता गोपनीय रखने के लिए ऐसे उपाय कर सकेगा जो वह ठीक समझे ।

(3) विशिष्ट्या और उपधारा (2) के उपबंधों की व्यापकता पर प्रतिकूल प्रभाव डाले बिना, उन उपायों के अन्तर्गत, जो विशेष न्यायालय उस उपधारा के अधीन कर सकेगा, निम्नलिखित हैं –

(क) किसी ऐसे स्थान में कार्रवाई करना जो विशेष न्यायालय द्वारा विनिश्चित किया जाए;

(ख) अपने आदेशों या निर्णयों में अथवा मामले के ऐसे किसी अभिलेख में, जो जनता की पहुंच में है, साक्षियों के नाम और पते का उल्लेख करने से बचना;

(ग) साक्षियों की पहचान और उनके पते प्रकट न होने देने को सुनिश्चित करने के लिए को ई निदेश जारी करना;

(घ) ऐसा विनिश्चय करना कि यह आदेश करना लोक हित में कि ऐसे किसी न्यायालय के समक्ष लम्बित सभी या किन्हीं कार्यवाहियों को किसी भी रीति में प्रकाशित नहीं किया जाएगा ।

(4) कोई व्यक्ति, जो उपधारा (3) के अधीन किए गए किसी विनिश्चय या जारी किए गए निदेश का उल्लंघन करता है, कारावास से, जिसकी अवधि एक वर्ष तक की हो सकेगी और जुर्माने से जो एक हजार रूपए तक का हो सकेगा, दंडनीय होगा ।"

पोटा का निरसन कर दिए जाने पर अब इन उपबंधों को 2004 में संशोधन द्वारा विधिविरूद्ध क्रियाकलाप (निवारण) अधिनियम, 1967 में अन्तर्विष्ट कर दिया गया है ।

उपर्युक्त विशिष्ट अधिनियमों में निश्चित की गई प्रक्रिया में कुछ खामियां हैं । उपबंध साक्षी के संबंधिशें के जीवन को या साक्षी और उसके संबंधियों की सम्पत्ति के खतरे के बारे में निर्देश नहीं करते हैं । उनमें न्यायालय द्वारा आदेश पारित किए जाने जैसी अवधारणा भी नहीं है परन्तु यह कहा गया है कि अनामता प्रदान करने के लिए कारण लिखित रूप में 'अभिलिखित' किए जाएंगे । इसलिए, इस प्रकार क विशिष्ट उपबंधों की आवश्यकता है कि जहां साक्षी या उसके संबंधियों को जान-माल का खतरा हो वहां साक्षी अनामता आदेश पारित किया जाएगा । यह आवश्यक है कि न्यायालय द्वारा आदेश पारित किया जाए क्योंकि यदि न्यायालय अपनी फाइल में केवल उसके कारणों को ही अभिलिखित करेगा तो यह पर्याप्त नहीं होगा । आदेश का प्रारूपण करते समय सावधानी बरती जानी चाहिए कि जिस साक्षी को अनामता दी जा रही है उसकी पहचान न्यायालय के आदेश में प्रकट न हो ।

(ख) <u>अन्य देशों में प्रक्रिया (यूके, आस्ट्रेलिया, न्यूजीलैण्ड)</u>

अब हम, इस संदर्भ में अन्य देशों के कुछ निर्णयों का निर्देश करेंगे जो प्रक्रियात्मक पहलुओं से संबंधित हैं ।

आर बनाम डेविड, जॉनसन और रोवे : 1993(1) डब्ल्यू एल आर 613, मामले में यह अभिनिर्धारित किया गया था कि पहचान प्रकट न किए जाने की अनुज्ञा एकपक्षीय कार्यवाहियों में भी दी जा सकती है ।

जारवी तथा अन्य बनाम दी मजिस्ट्रेटस् को ऑफ विक्टोरिया एट बर्नसविक एण्ड अदर्स : (1995)I वी आर 84 (विक्टोरिया आस्ट्रेलिया), मामले में न्यायालय ने यह अभिनिर्धारित किया कि विचारण न्यायालय का आदेश सुपुर्दगी एवं विचारण स्तर दोनों के लिए लागू होता है ।

न्यूजीलैण्ड में, आर बनाम हाइन्स : (1997)15 सी आर एम जैड 158, मामले में, बहुमत ने, जैसाकि पहले ही बताया जा चुका है, यह महसूस किया था कि यदि साक्षी के लिए अनामता स्वीकार की जाती है तब यह विधान का मामला बन जाता है । परन्तु न्यायमूर्ति शाल्ट तथा थोमस ने इस मत पर अपत्ति करते हुए यह अभिनिर्धारित किया कि विधान की कोई आवश्यकता नहीं है और यह कि न्यायालय अपनी अंतनिर्हित शक्तियों के अधीन अनामता प्रदान कर सकता है । तथापि, उनका कहना था कि जहां साक्षी की विश्वसनीयता 'न्यायोचित रूप में विवादग्रस्त है' उसके सिवाय, न्यायालय को अनामता की मंजूरी देनी चाहिए । उन्होंने महसूस किया कि साक्षी का भय वास्तविक और न्यायोचित होना चाहिए और यह कि अभियुक्त को निष्पक्ष विचारण से आसानी से वंचित नहीं कर दिया जाना चाहिए । कार्यवाही में अनामता प्रदान करने की आवश्यकता का निर्णय साक्षी की सत्यता पर किया जाना चाहिए ।

हम पहले ही कह चुके हैं कि न्यूजीलैण्ड की संसद ने साक्ष्य (साक्षी अनामता) संशोधन अधिनियम, 1997 के अधीन धारा 13ख से धारा 13ञ तक अधिनियमित की हैं । इस अधिनियम में विषय के बारे में कार्यवाही करने के लिए प्राथमिक या साक्षी के सत्य बोलने पर कार्यवाही का उपबंध किया गया है । हमारे विचार से इन उपबंधों में एक ओर साक्षियों और पीड़ितों के अधिकारों और दूसरी ओर अभियुक्त के अधिकारों में उचित संतुलन रखा गया है और यह एक मॉडल हो

सकता है जिसके आधार पर हम उसकी परिस्थितियों के लिए उपयुक्त परिवर्तनों का सुझाव दे सकते हैं ।

न्यूजीलैण्ड के उपबंध पूर्व विचारण स्तर पर(धारा 13ख),और विचारण के स्तर पर (धारा 13ग) पर अनामता के लिए आदेश पारित किए जाने का उपबंध करते हैं। हम उपांतरणों का सुझाव देने से पूर्व पहले हम इन उपबंधों का निर्देश करेंगे।

(1) धारा 13ख, जो पूर्व विचारण अनामता से संबंधित है, की उपधारा (2) में निम्नलिखित कहा गया है :

"धारा 13ख(1) : ....

.....

(2) व्यक्ति पर आरोप लगाए जाने के पश्चात् किसी भी समय, अभियोजक या प्रतिवादी आदेश करने के लिए न्यायाधीश को आवेदन कर सकेगा-

(क) प्राथमिक सुनवाई से पूर्व किसी साक्षी का नाम, पता और उपजीविका या (न्यायाधीश की अनुमति के सिवाय) अन्य विवरण जिससे साक्षी की पहचान का पता चलने की संभावना हो, आवेदन द्वारा दूसरे पक्ष को प्रकट किए जाने से मुक्त करना ।

(ख) प्राथमिक सुनवाई में साक्षी का नाम, पता और उपजीविका और (न्यायाधीश की अनुमति के सिवाय) कोई अन्य विवरण जिससे साक्षी की पहचान का पता चलने की संभावना हो,बताने से मुक्त करना ।"

इसके साथ ही, धारा 13ख(3) में कहा गया है कि विचारण पूर्व स्तर पर सुनवाई चैम्बर में होनी चाहिए और न्यायालय को दोनों पक्षों को सुनना चाहिए और पहचान, ठीक है, न्यायाधीश को ही प्रकट होगी । धारा 13ख (3) का पाठ निम्नलिखित है :

"धारा 13ख(3): न्यायाधीश को आवेदन पर सुनवाई और निर्णय चैम्बर में करना चाहिए, और

(क) न्यायाधीश को आवेदन पर प्रत्येक पक्ष को सुने जाने का अवसर प्रदान करना चाहिए; और

(ख) न तो आवेदन के समर्थनकारी पक्ष को और न ही साक्षी को ऐसी कोई जानकारी प्रकट करने की आवश्यकता है जिससे आवेदन पर कार्यवाही से पूर्व साक्षी की पहचान(न्यायाधीश के सिवाय) किसी अन्य व्यक्ति को प्रकट हो सके ।"

(2) विचारण स्तर पर धारा 13ग के उपबंध धारा 13ख के समान ही हैं और हमें धारा 13ग को फिर से उद्धृत करने की आवश्यकता नहीं है ।

इसका विश्लेषण करते हुए, यह बात स्पष्ट हो जाती है कि न्यूजीलैण्ड में विचारणपूर्व स्तर की प्रक्रिया, (अर्थात् अभियुक्त पर अपराध का आरोप लगाए जाने के पश्चात्) कि अनामता के लिए आवेदन, प्राथमिक सुनवाई से पूर्व, प्राथमिक सुनवाई में भी साक्षी को अपनी पहचान प्रकट करने से मुक्त करने के लिए, अभियोजन द्वारा फाइल किया जाएगा । न्यायाधीश मामले की सुनवाई अपने चैम्बर में ही करेगा और सुनवाई के लिए आवेदन (अभियोजन पक्ष) तथा अभियुकत को भी अवसर प्रदान किया जाएगा । अभियोजन तथा साक्षी/साक्षियों की पहचान केवल न्यायाधीश को अन्य किसी को नहीं, प्रकट कर सकेंगे । धारा, जैसाकि प्रारूपित है, अनामता के आवेदन पर किसी प्रतिरक्षा साक्षी के लिए भी लागू होती है । यदि अभियोजन पक्ष विचारण पूर्व स्तर पर किसी के बारे में अनामता की मंजूरी के लिए आवेदन करता है तो यह बात स्पष्ट है कि चैम्बर में आवेदन पर सुनवाई आरम्भ किए जाने से पूर्व साक्षी की पहचान अभियुक्त को प्रकट नहीं की जानी चाहिए । अन्यथा आवेदन करने का प्रयोजन ही समाप्त हो जाएगा । न्यायाधीश द्वारा अपने चैम्बर में अभियोजन पक्ष

के आवेदन पर एक बार कार्यवाही आरम्भ कर दिए जाने पर उसे धारा 13ख(4) के अधीन आदेश पारित करना होगा यदि न्यायाधीश को विश्वास हो जाता है कि इस प्रकार के न्यायोचित आधार हैं कि -

"(क) यदि विचारण से पूर्व साक्षी की पहचान प्रकट कर दी जाती है तो किसी साक्षी या अन्य किसी व्यक्ति की सुरक्षा को खतरे की संभावना है या सम्पत्ति को गम्भीर क्षति पहुंचाने की संभावना है और

(ख) विचारण तक साक्षी की पहचान को गोपनीय रखना न्याय के हित के विपरीत नहीं होगा ।"

न्यूजीलैण्ड में, अभियोजन पक्ष द्वारा फाइल किए गए आवेदन पर विचारण पूर्व प्राथमिक सुनवाई न्यायाधीश द्वारा ही किए जाने का उपबंध है । परन्तु न्यायाधीश का कुछ और भी कर्तव्य है । न्यायाधीश को धारा 13ख(5) के अनुसार निम्नलिखित छः बातों को ध्यान में रखना होगा :

"(क) साक्षी की पहचान जानने का अभियुक्त का सामान्य अधिकार ; और

(ख) यह सिद्धान्त कि साक्षी अनामता आदेश केवल आपवादिक परिस्थितियों में न्यायोचित हैं ; और

(ग) अपराध की गम्भीरता की स्थिति क्या है; और

(घ) उस पक्षकार के मामले के लिए जो साक्षी को बुलाना चाहता है, साक्षी के साक्ष्य का महत्व क्या है ; और

(ङ) क्या विचारण से पूर्व किन्हीं अन्य साधनों से साक्षी का संरक्षण व्यवहार्य है ; और

(च) क्या कोई अन्य ऐसा साक्ष्य है जो साक्षी के साक्ष्य की पुष्टि करता है ।"

यदि न्यायालय विचारण पूर्व स्तर पर अनामता की मंजूरी दे देता है, तब धारा 13ख(6) के अधीन उसके निम्नलिखित परिणाम होंगे :

"(क) अभियोजन पक्ष को न्यायाधीश को साक्षी का नाम, पता और उसकी उपजीविका बतानी होगी ; और

(ख) साक्षी से न्यायालय में अपना नाम, पता और उपजीविका क बारे में बताना अपेक्षित नहीं होगा;

(ग) प्राथमिक सुनवाई के दौरान -

(i) कोई मौखिक साक्ष्य नहीं दिया जाएगा, और किसी साक्षी से कोई प्रश्न नहीं पूछा जाएगा यदि साक्ष्य और प्रश्न साक्षी क नाम, पते और उपजीविका के बारे में हैं जिसके बारे में आदेश किया जाना है ; और

(ii) न्यायाधीश की अनुज्ञा के सिवाय, कोई मौखिक साक्ष्य नहीं दिया जाएगा और किसी साक्षी से कोई प्रश्न नहीं पूछा जाएगा यदि साक्ष्य किसी ऐसे अन्य विवरण के बारे में है जिससे साक्षी की, जिसके बारे में आदेश किया जाना है, पहचान प्रकट होने की संभावना है ; और

(घ) कोई भी व्यक्ति कार्यवाही से संबंधित ऐसी कोई रिपोर्ट या ऐसा कोई विवरण प्रकाशित नहीं करेगा जिससे साक्षी का नाम, पता या उपजीविका प्रकट हो या कोई अन्य विवरण जिससे साक्षी की पहचान प्रकट होने की संभावना हो ।"

इसी प्रकार न्यूजीलैण्ड में धारा 13ग में विचारण स्तर पर आदेश किए जाने का उपबंध किया गया है और वस्तुतः धारा 13ग में भी धारा 13ख के समान प्रक्रिया ही अन्तर्विष्ट है । इसलिए, धारा 13ग को उद्धृत करने का हमारा प्रस्ताव नहीं है ।

यह बात स्पष्ट हो जाती है कि धारा 13ख की उपधारा (6) और धारा 13ग की उपधारा (6) यही सुनिश्चित करती हैं कि अनामता विचारण के पश्चात् भी बनी रहेगी ।

धारा 13ञ और धारा 13ख और धारा 13ग के उपबंधों का साभिप्रायः उल्लंघन करने से संबंधित अपराधों का उल्लेख किया गया है और हम सिफारिश करते हैं कि इसे ग्रहण कर लिया जाना चाहिए ।

अध्याय - आठ

स्तर- जिस पर साक्षी की पहचान के संरक्षण की आवश्यकता है - अन्वेषण, विचारणपूर्व या विचारण और विचारण के पश्चात्

अगला महत्वपूर्ण प्रश्न जिस पर विचार किए जाने की आवश्यकता है, उस स्तर के संबंधित है जिस पर हमारे देश में साक्षी की पहचान को संरक्षण दिया जाना चाहिए । हमें यह बात स्पष्ट कर देनी चाहिए कि इस रिपोर्ट में हमारे प्रस्ताव केवल गम्भीर अपराधों के बारे में हैं, अर्थात् अपराध जो सेशन न्यायालय या उसके समतुल्य अभिहित/विशेष न्यायालय द्वारा विचारणीय हैं ।

एक ओर पीड़ित के संरक्षण और दूसरी ओर साक्षी के संरक्षण के बीच थोड़ा अन्तर है ।

(क) बहुत से मामलों में पीड़ित के बारे में अभियुक्त को जानकारी हो सकती है परन्तु यह एक परिपूर्ण नियम नहीं है । ऐसे मामले भी होंगे जहां अभियुक्त पीड़ित के बारे में कुछ नहीं जानता होगा जैसेकि अभियुक्त द्वारा अंधाधुंध गोली चलाए जाने का कोई मामला हो सकता है । ऐसे भी मामले हो सकते हैं जहां पीड़ित और अभियुक्त एक दूसरे को भली प्रकार से जानते हैं ।

(ख) जहां तक पीड़ित के अतिरिक्त साक्षियों का संबंध है, अधिकांश मामलों में ऐसा संभव है कि अभियुक्त साक्षी को नहीं जानता है । निकट सहयोगियों या अपराध के चश्मदीद साक्षियों को छोड़कर, जिनके बारे में कभी-कभी अभियुक्त को जानकारी होती है, अधिकांश अभियोजन साक्षियों के बारे में अभियुक्त को कोई जानकारी नहीं होती । ऐसा भी हो सकता है कि गम्भीर अपराध के किसी मामले में अन्वेषण, जांच के दौरान या विचारण आरम्भ होने से पूर्व यदि अभियुक्त को साक्षी की पहचान हो जाती है तो साक्षियों और उनके संबंधियों को न केवल उनकी जान की अपितु उनकी सम्पत्ति को भी गंभीर खतरा हो सकता है ।

अतः इन स्तरों के बारे में, अर्थात् (क) अन्वेषण; (ख) जांच; (ग) विचारण; और (घ) विचारण के पश्चात् पृथक-पृथक रूप से विचार करना आवश्यक है ।

(क) अन्वेषण

यह पहला स्तर है । हमारा विचार है कि साक्षी की पहचान को इस स्तर पर भी संरक्षण दिया जाना आवश्यक है । वास्तव में, परामर्शीपत्र के साथ जारी की गई प्रश्नावली पर प्राप्त 43 प्रतिक्रियाओं में से 36 ने कहा है कि अन्वेषण के स्तर पर भी इस प्रकार का संरक्षण आवश्यक है ।

अन्वेषण के भी कई स्तर हैं जहां ऐसे स्थान आते हैं जहां साक्षी की पहचान अभियुक्त के सामने प्रकट हो सकती है । उन स्थानों पर साक्षी की पहचान को संरक्षण दिया जाना आवश्यक है । हम अन्वेषण मेंउन सुसंगत स्थलों का निर्देश करेंगे जहां अनामता आवश्यक है ।

(1) 1973 की संहिता का अध्याय-बारह 'पुलिस को इत्तिला और उसकी अन्वेषण करने की शक्तियों' के बारे में है (धारा 154 से धारा 176) । धारा 173, अन्वेषण पूरा होने पर पुलिस अधिकारी की रिपोर्ट के बारे में है ।

धारा 173(1) में कहा गया है कि रिपोर्ट मे निम्नलिखित बातें कथित होंगी -

(क) पक्षकारों का नाम,

(ख) इत्तिला का स्परूप,

(ग) मामले की परिस्थितियों से परीचित प्रतीत होने वाले व्यक्तियों के नाम

.....

और धारा 173(5) में कहा गया है कि -

(क) वे सब दस्तावेज या उनके सुसंगत उद्धरण जिन पर निर्भर करने का अभियोजन का विचार है और जो उनसे भिन्न हैं जिन्हें अन्वेषण के दौरान मजिस्ट्रेट को पहले ही भेज दिया गया है ।

(ख) उन सब व्यक्तियों के जिनकी साक्षी के रूप में परीक्षा करने का अभियोजन का विचार है, धारा 161 के अधीन अभिलिखित कथन ।

रिपोर्ट के साथ भेजे जाएंगे ।

इसके आगे उपधारा (6) में निम्नलिखित कहा गया है:

"धारा 173(6) . यदि पुलिस अधिकारी की यह राय है कि ऐसे किसी कथन का कोई भाग कार्यवाही की विषय-वस्तु से सुसंगत नहीं है या उसे अभियुक्त को प्रकट करना न्याय के हित में आवश्यक नहीं है और लोकहित के लिए असमीचीन है तो वह कथन के उस भाग को दी जाने वाली प्रतिलिपि में से उस भाग को निकाल देने के लिए निवेदन करते हुए और ऐसा निवेदन करने के कारणों का कथन करते हुए एक नोट मजिस्ट्रेट को भेजेगा ।"

(2) धारा 164 (6) के अधीन अभियुक्त की संस्वीकृतियां साक्षी के कथन अभिलिखित करने वाला मजिस्ट्रेट, उसे उस मजिस्ट्रेट के पास भेजेगा जिसके द्वारा मामले की जांच या विचारण किया जाना है ।

इसलिए, अन्वेषण के कतिपय स्तरों से संबंधित ये उपबंध दर्शाते हैं कि साक्षी की पहचान, जब तक संरक्षित नहीं की जाती, अभियुक्त को प्रकट हो सकेगी अर्थात् धारा 161 या धारा 164 कथनों के अभिलिखित किए जाने के स्तर पर या धारा 173 के अधीन मजिस्ट्रेट के न्यायालय में आरोप-पत्र फाइल करने के स्तर पर । अन्वेषण के इन स्तरों पर, पहचान का संरक्षण कतिपय मामलों में आवश्यक हो सकेगा ।

धारा 207 के अधीन आरोप-पत्र, पृथक इत्तिला रिपोर्ट, धारा 161 और धारा 164 के अनुसार व्यक्तियों के कथन तथा अन्य दस्तावेजों की प्रतिलिपि अभियुक्त को दी जाएगी इसमें कथनों के उन भागों को छोडकर जिनसे साक्षी की पहचान प्रकट होती है, जिन्हें निकाल देने के लिए धारा 173(6) के अधीन पुलिस अधिकारी ने निवेदन किया है । ऐसे मामले बड़ी संख्या में हो सकते हैं जहां पुलिस अधिकारी ने धारा 173(6) के अधीन कोई अनुरोध न किया हो ।

क्योंकि हमारा प्रस्ताव है कि साक्षियों को गम्भीर अपराधें के मामलों में अर्थात् सेशन न्यायालय द्वारा विचारणीय मामलों में, अनामता मंजूर की जानी चाहिए, यह बात स्पष्ट हो जाती है कि अन्वेषण के उपर्युक्त स्तरों पर भी साक्षी पहचान प्रकट न किए जाने से संबंधित सुरक्षोपायों पर मजिस्ट्रेट द्वारा विचार किया जाएगा और इन्हें स्वीकृति दी जाएगी । हमें एक प्रक्रिया विकसित करनी होगी और इन न्यायालयों को सांविधिक शक्तियां देनी होंगी ।

<u>अन्वेषण के दौरान अनामता की स्वीकृति देने के लिए प्राथमिक जांच की प्रक्रिया</u>

(i) जहां कोई पुलिस अधिकारी, धारा 161 के अधीन साक्षियों के कथन अभिलिखित करने से पूर्व, महसूस करता है कि साक्षी की पहचान को संरक्षण दिया जाना चाहिए वहां उसे संबधित मजिस्ट्रेट के समक्ष, केवल मजिस्ट्रेट को वास्तविक पहचान का ज्ञान कराके, छद्मनाम के अधीन कथन अभिलिखित करने की अनुज्ञा मांगते हुए, आवदेन करने का अधिकार होना चाहिए ।

(ii) तथापि, साक्षियों के कथन अभिलिखित करने के स्तर पर, जैसाकि उपर्युक्त (I) में कहा गया है, जहां पहचान गोपनीय नहीं रखी जाती है परन्तु जहां बाद में अभियोजन पक्ष अन्वेषण के दौरान बाद में यह महसूस करता है कि जब धारा 207 के अधीन आरोप-पत्र और धारा 161 के कथनों को स्वीकृति दी जाएगी वहां मजिस्ट्रेट द्वारा अपराध का संज्ञान किए जाने से पूर्व ऐसे संरक्षण के लिए आवेदन करने के लिए पुलिस को अनुज्ञा होनी चाहिए ।

(iii) प्राथमिक जांच बन्द कमरे में की जानी चाहिए और अन्वेषण के स्तर पर अभियुक्त का पक्ष सुनने या इसके लिए उसे अवसर प्रदान करने की कोई आवश्यकता नहीं है ।

हम, इस रिपोर्ट के साथ संलग्न किए जा रहे प्रारूप विधेयक की धारा 4, धारा 5 और धारा 6 के अधीन मजिस्ट्रेट को आवेदन करके अन्वेषण के स्तर पर साक्षी की पहचान के संरक्षण की मांग करने के लिए ऐसी प्रक्रिया का उपबंध करने का प्रस्ताव कर रहे हैं।

(ख) अध्याय-चौदह से अध्याय- सोलह तक में उपबंधित मजिस्ट्रेट के समक्ष जांच के दौरान प्राथमिक जांच ।

(क) दंड प्रक्रिया संहिता, 1973 के अध्याय-सोलह का शीर्ष है 'मजिस्ट्रेट के समक्ष कार्यवाहियों का प्रारम्भ किया जाना' । इस अध्याय में कुछ ऐसी धाराएं हैं जो साक्षी की पहचान के प्रश्न के लिए सुसंगत हैं । जैसाकि ऊपर बताया जा चुका है, धारा 207 पुलिस की रिपोर्ट तथा अन्य दस्तावेजों की प्रतिलिपि दिए जाने के बारे में है । धारा 207 में निर्दिष्ट दस्तावेज निम्नलिखित हैं :

(i) पुलिस रिपोर्ट ;

(ii) धारा 154 के अधीन लेखबद्ध की गई प्रथम इत्तिला रिपोर्ट ;

(iii) धारा 161 की उपधारा (3) के अधीन अभिलिखित उन सभी व्यक्तियों के कथन, जिनकी अपने साक्षियों के रूप में परीक्षा करने का अभियोजन विचार है, उनमें से किसी ऐसे भाग को छोड़कर जिसको छोड़ने के लिए निवेदन धारा 173 की उपधारा (6) के अधीन पुलिस अधिकारी द्वारा किया गया है ;

(iv) धारा 164 के अधीन अभिलिखित की गईं संस्वीकृतियां या कथन, यदि कोई हो ; और

(v) कोई अन्य दस्तावेज या उसका सुसंगत उद्धरण, जो धारा 173 की उपधारा (5) के अधीन पुलिस रिपोर्ट के साथ मजिस्ट्रेट को भेजा गया है ।

इसी प्रकार धारा 208 में सेशन न्यायालय द्वारा विचारणीय अन्य मामलों में अभियुक्त को कथनों और अन्य दस्तावेजों की प्रतिलिपियां देने का निर्देश किया गया है ।

(ख) प्राथमिक सुनवाई मजिस्ट्रेट या सेशन न्यायाधीश द्वारा बंद कमरे में की जाएगी, परन्तु अभियुक्त का पक्ष सुना जाना आवश्यक होगा । हम यह प्रस्ताव कर रहे हैं कि अभियुक्त को अलग से सुना जाना चाहिए, उन पीड़ितों या साक्षियों की उपस्थिति में नहीं जिनके बारे में अभियुक्त को जानकारी नहीं है ।

(ग) क्योंकि अन्वेषण के दौरान जब पुलिस अधिकारी लोक अभियोजन के माध्यम से मजिस्ट्रेट के समक्ष अनामता की मंजूरी के प्राथमिक आदेश करने के लिए आवेदन करता है कि अभियुक्त की सुनवाई न की जाए और हमारे मतानुसार नियमित विचारण में जब साक्षी साक्ष्य देता है तब उस स्तर पर अनामता की मंजूरी के प्रयोजन से, तब यह आवश्यक है कि जांच के स्तर पर उन्हीं साक्षियों के बारे में या फिर से नए रीति से प्राथमिक सुनवाई होनी चाहिए । इसका कारण यह है कि अब की जाने वाली (अर्थात् अन्वेषण के पश्चात् प्राथमिक जांच) प्राथमिक जांच में साक्षी को अनामता दिए जाने के प्रश्न पर अभियुक्त के पक्ष को भी सुनना होगा ।

जांच प्रारम्भ होने के पश्चात् जब कभी ऐसा आवेदन किया जाता है, मजिस्ट्रेट को इस विषय में प्राथमिक या साक्षी सत्य बोलने की जांच करनी होगी कि क्या साक्षी को और संबंधियों को जान-माल का खतरा है । बंद कमरे में सुनवाई किया जाना आवश्यक है । यह किस प्रकार की जाएगी इसका उल्लेख आगामी अध्याय में किया जाएगा ।

जहां जांच के दौरान, मजिस्ट्रेट अनामता आदेश पारित करता है तब यह आदेश विचारण तथा उसक बाद के स्तर के लिए भी अनामता बने रहना सुनिश्चित करेगा ।

हम धारा 8 से धारा 11 तक में इस प्रकार की प्रक्रिया का उपबंध कर रहे हैं जिसमें जांच के स्तर पर और विचारण में साक्ष्य का अभिलिखित किया जाना आरम्भ किए जाने से पूर्व प्राथमिक जांच की प्रक्रिया अधिकथित की जाएगी।

(ग) सेशन न्यायालय में साक्षियों के कथन लेखबद्ध किए जाना आरम्भ होने से पूर्व सेशन न्यायाधीश के समक्ष प्राथमिक जांच :

अन्य साक्षियों के बारे, धारा 161, धारा 164 और धारा 207 के स्तर पर, अर्थात् अन्वेषण या जांच के दौरान, जिनकी पहचान के लिए संरक्षण की मांग नहीं की गई है, परन्तु जहां इसे विचारण के स्तर पर नए साक्षियों की परीक्षा के मामले में आवश्यक समझा जाता है, वहां विचारण के दौरान और यदि आवश्यक हो तो, बादे में भी, अनामता बनाए रखने के लिए अभियोजन को आवेदन करने का अवसर दिया जाना चाहिए । सेशन न्यायालय को इस प्रकार की शक्ति प्रदान करनी होगी ।

इस संबंध में हम 'टाडा' के अधीन करतार सिंह : 1994(3) एस सी सी 569 मामले में, उच्चतम न्यायालय के निर्णय का निर्देश करेंगे जहां उच्चतम न्यायायल ने, धारा 16 के संबंध में यह कहा है (पृष्ठ 290 पर) कि विचारण प्रारम्भ होने से पूर्व साक्षियों के पहचान, नाम और पते प्रकट किए जा सकेंगे जैसाकि बिमल कौर के मामले (एआईआर 1988 पं.और ह. पृष्ठ 95 (एफबी) में पंजाब और हरियाणा उच्च न्यायालय की पूर्ण पीठ द्वारा अभिनिर्धारित किया गया था।

114 – 115 – 116

करतार सिंह (1994)3 एस सी सी का मामला जो 'टाडा' की धारा 16 से संबंधित था, स्क्रीनिंग या क्लोज्ड सर्किट टेलीविजन का कोई निर्देश नहीं किया गया है ।

पीयूसीएल बनाम भारत संघ : 2003(10) स्केल 967 मामले में, जिसमें 'पोटा' की धारा 30 के बारे में विचार किया गया था, उच्चतम न्यायालय ने निम्नलिखित विचार व्यक्त किया था (पैरा 62, पृष्ठ 994):

> "हमारे लिए उस प्रक्रिया का सुझाव देना व्यवहार्य नहीं है जो विशिष्ट न्यायालयों द्वारा साक्षी की पहचान को गोपनीय बनाए रखने के लिए अपनाई जाएगी ।"

विधि आयोग के सामने पहली बार, जब आयोग 172वीं रिपोर्ट(2000) तैयार कर रहा था (जैसाकि पीछे बताया जा चुका है) यौन अपराधों और बाल उत्पीडन के मामले में निम्नलिखित उपबंध अन्तर्विष्ट करने का अनुरोध किया गया था -

(i) बच्चे का वीडियो टेप साक्षात्कार

(ii) क्लोज्ड सर्किट टेलीविजन के माध्यम से साक्ष्य द्वारा या स्क्रीन के पीछे से साक्ष्य देकर

परन्तु विधि आयोग ने 'स्क्रीनिंग' पद्धति को स्वीकार कया । प्रारूप संशोधन में, आयोग ने 'स्क्रीनिंग' शब्द का प्रयोग नहीं किया अपितु धारा 273 में एक सामान्य उपबंध जोडे जाने का प्रस्ताव किया जिसमें कहा गया था -

"परन्तु यह कि जहां 16 वर्ष से कम आयु के व्यक्ति का साक्ष्य, जो यौन प्रहार से किसी प्रकार के अन्य यौन अपराध से पीड़ित बताया गया है, अभिलिखित किया जाना है, न्यायालय अभियुक्त की प्रतिपरीक्षा सुनिश्चित करते समय, यह सुनिश्चित कराने के लिए भी उपयुक्त उपाय करेगा कि ऐसा व्यक्ति अभियुक्त के सामने न आने पाए ।"

जब साक्षी बनाम भारत संघ: (2004)(6) स्केल 15 मामले में 172वीं रिपोर्ट उच्चतम न्यायालय के समक्ष लाई गई तब उच्चतम न्यायालय ने विधि आयोग के समक्ष एन जी ओ (साक्षी) के तर्क का निर्देश किया । उच्चतम न्यायालय पीड़ित या साक्षी की सुनवाई के लिए वीडियो कांफ्रेंसिंग प्रणाली को ग्राह्य स्वीकार किया । वीडियो कान्फ्रेंसिंग के माध्यम से साक्ष्य अभिलिखित किया जाना उच्चतम न्यायालय ने महाराष्ट्र राज्य बनाम डा0 प्रफुल्ल देसाई : 2003(4) एस सी सी 601 (पैरा 31 देंखे) मामले में अपने एक पूर्वतर निर्णय में भी स्वीकार किया था । यह कहा गया था कि यह संहिता की धारा 273 के अनुरूप था । तथापि, अन्तिम निर्णय में उच्चतम न्यायालय ने स्क्रीन या ऐसे ही किसी अन्य प्रबंध का प्रयोग करने का सुझाव दिया (पैरा 32 देंखे)। न्यायालय ने 'बंद कमरे' में कार्यवाहियों का भी निर्देश किया जैसाकि संहिता की धारा 327 में कहा गया है ।

प्रफुल्ल बी देसाई का मामला दांडिक मामला नहीं था अपितु एक सिविल मामला था जिसमें एक पक्ष विदेशी चिकित्सा विशेष की परीक्षा कराना चाहता था । वीडियो कान्फ्रेंसिंग की अनुज्ञा देते हुए उच्चतम न्यायालय ने यह कहने के लिए कि वीडियो कान्फ्रेंसिंग साक्ष्य ग्राह्य साक्ष्य है मैरीलैण्ड बनाम क्रेग : (1990)497 यू एस 836, (जो एक दांडिक मामला था) मामले पर निर्भर किया था ।

उपभोक्ता (संरक्षण) अधिनियम, 1986 के अधीन उत्पन्न एक मामले में उच्चतम न्यायालय ने जे.जे. मर्चेन्ट बनाम श्रीनाथ चतुर्वेदी :ए आई आर 2002 एस सी 2931 मामले कहा था कि अधिनियम के अधीन धारा 13(4)(v) के अनुसार साक्षियों की परीक्षा कमीशन द्वारा की जा सकती

थी और प्रतिपरीक्षा वीडियो कान्फ्रेंसिंग द्वारा की जा सकेगी । उच्चतम न्यायालय ने कहा था कि प्रारम्भ में शपथपत्र फाइल किए जा सकेंगे और ,-

> "यदि दूसरे पक्ष द्वारा प्रतिपरीक्षा की मांग की जाती है और कमीशन उसे उपयुक्त ठहराता है तब वह सुगमतापूर्वक ऐसी प्रक्रिया विकसित कर सकेगा जिसमें वह पक्षकार जो लिखित में कतिपय प्रश्न लिखकर प्रतिपरीक्षा करना चाहता है तब उन प्रश्नों का उत्तर शपथपत्रों पर डाक्टरों सहित विशेषज्ञों द्वारा दिया जा सकेगा । उन मामलों में जहां खतरा बहुत अधिक है और पक्षकार फिर भी डाक्टरों या विशेषज्ञों की प्रतिपरीक्षा कराना चाहता है वहां वीडियो कान्फ्रेंस की जा सकती है या टेलीफोन कान्फ्रेंस का प्रबंध करके प्रश्न पूछे जा सकते हैं और प्रारम्भिक चरण में, इस पर आने वाले खर्चे का वहन वीडियो कान्फ्रेंस चाहने वाले व्यक्ति द्वारा किया जाएगा । इसके अतिरिक्त, प्रतिपरीक्षा नियुक्त किए गए कमीश्नर द्वारा ऐसे विशेषज्ञों के कार्यस्थल पर निर्धारित की जा सकती है ।"

संक्षेप में, जहां तक दांडिक अधिकारिता का संबंध है, इस समय, दंड प्रक्रिया संहिता, 1973 में कोई ऐसा उपबंध नहीं है जो 'स्क्रीनिंग या क्लोज्ड सर्किट टेलीविजन' के प्रयोग की अनुमति देता हो । साक्षी के मामले में उच्चतम न्यायालय ने स्क्रीनिंग और वीडियो कांफ्रेंसिंग को स्वीकार्य प्रक्रिया माना है परन्तु न्यायालय द्वारा दिए गए अन्तिम निदेशों में 'स्क्रीनिंग या अन्य कोई व्यवस्था' शब्दों का प्रयोग किया गया है और प्रफुल्ल बी देसाई के मामले में इसका अनुसरण किया गया है । प्रफुल्ल बी देसाई मामले में मैरीलैण्ड बनाम क्रेग मामले का ।

क्लोज्ड सर्किट टेलीविजन के बारे में मैरीलैण्ड के नियम :

क्योंकि उच्चतम न्यायालय ने प्रफुल्ल देसाई के मामले में मैरीलैण्ड बनाम क्रेग : (1990) 497 यू एस 836, मामले का निर्देश किया था इसलिए, हम मैरीलैण्ड न्यायालयों के नियमों का निर्देश करेंगे जिनकी व्याख्या मैरीलैण्ड बनाम क्रेग मामले में की गई थी । मैरीलैण्ड कोर्टस् एण्ड ज्यूडिशियल प्रोसीजर कोड, 1989 (धारा 9-102 (9)(i)(ii) में अन्तर्विष्ट प्रक्रिया के अनुसार 16

वर्ष की आयु के बालक को, जिसके साथ कथित यौन अपराध किया गया है, किसी दूर स्थान पर लेखा जाएगा और उसकी मुख्य परीक्षा तथा प्रतिपरीक्षा भी तब की जाएगी जब न्यायाधीश, ज्यूरी और अभियुक्त न्यायालय कक्ष में उपस्थित हरेंगे जहां उसका साक्ष्य क्लोज्ड सर्किट टेलीविजन का प्रयोग करते हुए वीडियो स्क्रीन पर दर्शित कराया जाएगा । मैरीलैण्ड बनाम क्रेग मामले में सुप्रीम कोर्ट ने क्रेग की इस आपत्ति को अस्वीकार कर दिया कि वन-वे क्लोज्ड सर्किट प्रक्रिया से संशोधन में अन्तर्विष्ट प्रतिवाद खंड का उल्लंघन होता है । न्यायालय ने यह अभिनिर्धारित किया कि यदि न्यायालय कक्ष में उनके बीच सीधा टकराव होगा तब, पीड़ित बालक और अन्य पीड़ित गम्भीर भावात्मक व्यथा होगी जिसे वे अभिव्यक्त नहीं कर पाएंगे ।

उच्चतम न्यायालय ने अभिनिर्धारित किया कि छटे संशोधन का प्रयोजन विचारण न्यायालय के समक्ष कार्यवाही में साक्षी से कडी पूछ-ताछ करके अभियुक्त के विरूद्ध साक्ष्य की विश्वसनीयता सुनिश्चित कराना था और यह प्रयोजन सामना करने, वैयक्तिक उपस्थिति, शपथ, प्रतिपरीक्षा और विचारण न्यायालय द्वारा आचरण देखने के मिले-जुले प्रभाव से पूरा हो जाता है । यद्यपि, छटे संशोधन का मूल आमने-सामने का प्रतिवाद ही था, फिर भी यह प्रतिवाद के अधिकार का अनिवार्य तत्व नहीं था । यदि ऐसा होगा तो छटे संशोधन से सभी जनश्रुतियों पर आधारित अपवादों का निराकरण हो जाएगा जो अनाश्यित और अतिवादी परिणाम के रूप में अस्वीकृत किया जाएगा (ओहियो बनाम राबर्टस्)(448 यू एस 50) । संशोधन का निर्वचन ऐसी रीति में किया जाना चाहिए जो इसके प्रयोजन और विचारण तथा प्रतिकूल प्रक्रिया की आवश्यकताओं के लिए हो संवेदनशील (किर्बी बनाम यूएस : 174 यूएस 47)। फिर भी, अभियोजन साक्षी का प्रतिवाद करने के अधिकार का समाधान वैयक्तिक रूप से उपस्थित न होने, आमने-सामने प्रतिवाद न करने या केवल ऐसे विचारण में हो सकता है जहां महत्वपूर्ण लोक नीति को कार्यान्वित करने के लिए ऐसे प्रतिवाद को

अस्वीकृत किया जाना आवश्यक है और केवल जहां साक्षी की विश्वसनीयता अन्य प्रकार से आश्वस्त हो गई है (कॉय बनाम आयोवा) । बाल उत्पीडन से पीड़ितों के मामले में किसी राज्य का हित उनके शारीरिक और मानसिक रूप से स्वस्थ रहने में है और इसे प्राप्त करना, कतिपय मामलों में, न्यायालय में अपने अभियोजकों का सामना करने के अभियुक्त के अधिकार से अधिक महत्वपूर्ण है । न्यायालय वीडियो प्रक्रिया का उपयोग केवल तभी करेगा जब उसका ऐसा समाधान हो गया हो कि बालक को अन्यथा मानसिक आघात पहुंचेगा । हमारे उच्चतम न्यायालय ने मैरीलैण्ड बनाम क्रेग मामले को प्रफुल्ल बी देसाई :(2003)(4) एस सी सी 601 मामले में स्वीकार किया है ।

यही तर्क उन साक्षियों के मामले में भी लागू होता है जिन्हें गम्भीर अपराधों के मामले में अपने जीवन और सम्पत्ति के खतरे की संभावना है, या जहां पीड़ितों को भावात्मक व्यथा की संभावना है और उन्हें निर्भय होकर साक्ष्य देने की आवश्यकता आमने-सामने प्रतिपरीक्षा के अभियुक्त के अधिकारों से अधिक महत्वपूर्ण है ।

मैरीलैण्ड नियमों के अधीन पीड़ित के साक्ष्य की प्रक्रिया :

मैरीलैण्ड के नियम बाल उत्पीडन के बारे में हैं और विचारण प्रक्रिया दी गई है और शीर्षक 'पीड़ित और साक्षियों' से संबंधित हैं तथा धारा 11.303 चार खंडों में दी गई है ।

(क) धारा का क्षेत्र ;

(ख) सामान्य ;

(ग) न्यायालय द्वारा प्राथमिक विनिश्चय (क्या पीड़ित बालक का साक्ष्य क्लोज्ड सर्किट टेलीविजन के माध्यम से लिए जाने की अनुमति देती है) ;

(घ) साक्ष्य के दौरान प्रक्रिया

इसमें नियमित विचारण से पूर्व प्राथमिक सुनवाई की अवधारणा की गई है ।

जहां तक धारा (क) के क्षेत्र का संबंध है, वह धारा बाल उत्पीडन के मामले में टाइटिल्ड और सबसाइटिल्ड के अधीन आने वाले मामलों के लिए लागू होती है ।

जहां तक सामान्य (ख) का संबंध है, वह (i) प्राथमिक सुनवाई का निर्देश करती है जहां न्यायालय ऐसा निर्णय करता है कि न्यायालय में साक्ष्य देने के परिणामस्वरूप साक्षी को भावात्मक व्यथा हो सकेगी जिसके कारण पीड़ित न्यायोचित रूप से साक्ष्य नहीं दे सकेगा और (ii) और कार्यवाहियों के दौरान लिए गए साक्ष्य का निर्देश है (अर्थात् नियमित कार्यवाहियों में)

खंड (ग) महत्वपूर्ण है । इसमें न्यायालय द्वारा विनिश्चय का निर्देश है अर्थात् प्राथमिक सुनवाई की प्रक्रिया । इसमें उपखंड(1)(i) और (ii) तथा उपखंड (2) (i) और (ii) अन्तर्विष्ट हैं । उपखंड (1)(i) के अधीन, न्यायालय बाल पीड़ित को न्यायालय कक्ष में या उससे बाहर देख सकेगा और प्रश्न पूछ सकेगा और उपखंड (1)(ii) के अधीन न्यायालय माता-पिता का या अभिरक्षक का साक्ष्य सुन सकेगा और उस व्यक्ति को भी सुन सकेगा जिसने बालक के लिए उपचारार्थ व्यवस्था की थी । उपखंड (2) के अधीन यह कहा गया है कि जब न्यायालय इस प्रश्न का निर्णय करता है कि क्या बाल-पीड़ित को क्लोज्ड सर्किट टेलीविजन के माध्यम से साक्ष्य देने की अनुमति दी जानी चाहिए । खंड-2 के उपखंड (i) के अनुसार प्रत्येक अभियुक्त न्यायालय में एक अटर्नी रख सकेगा और उसके साथ पीड़ित का अटर्नी और अभियोजक अभिकरण होंगे (अर्थात् न पीड़ित होगा और न ही अभियुक्त) और (ii) में कहा गया है कि यदि न्यायालय बाल पीड़ितों को देखने और उससे प्रश्न पूछने का विनिश्चय करता है तब भी न्यायालय अभियुक्त को वहां उपस्थित रहने की अनुमति नहीं देगा परन्तु अभियुक्त का वकील और अभियोजक अभिकरण तथा पीड़ित का एक अटर्नी उपस्थित रह सकेंगे ।

इस प्रकार, उन नियमों के अधीन, जहां न्यायालय बाल पीड़ित का देखना और उससे प्रश्न करना चाहता है वहां प्राथमिक सुनवाई में अभियुक्त वैयक्तिक रूप से उपस्थित नहीं रहेगा यद्यपि, अभियुक्त का वकील उपस्थित रह सकेगा । यदि न्यायालय प्राथमिक सुनवाई में क्लोज्ड सर्किट टेलीविजन के प्रयोग का विनिश्चय करता है तो (घ) के अधीन निम्नलिखित प्रक्रिया का अनुसरण किया जाएगा

(1) जहां पीड़ित उपस्थित है, वहां अभियोजक, अभियुक्त का अटर्नी और पीड़ित का अटर्नी तथा क्लोज्ड सर्किट उपकरण के संचालक तथा बालक को उपचारार्थ व्यवस्था करने वाले व्यक्ति सहित ऐसा कोई भी व्यक्ति उपस्थित रह सकेगा जिसकी उपस्थिति न्यायालय के अनुसार बालक के हित में योगदान करती है ।

(2) न्यायालय कक्ष में, न्यायाधीश और अभियुक्त उपस्थित रहेंगे ।

इसके अतिरिक्त, जिस कक्ष में पीड़ित और उसका वकील हैं तथा न्यायालय कक्ष जिसमें न्यायाधीश और अभियुक्त उपस्थित हैं उन दोनों कक्षों के बीच एक टू-वे आडियो सम्पर्क की व्यवस्था की जाएगी ।

भारत :

सेशन न्यायालय में विचारण के दौरान क्लोज्ड सर्किट टेलीविजन की प्रक्रिया

हम अन्वेषण के दौरान अनामता का विनिश्चय करने के प्रयोजन से अन्वेषण के स्तर पर मजिस्ट्रेट के समक्ष साक्षी की बंद कमरे में परीक्षा किए जाने का पहले ही निर्देश कर चुके हैं । यहां अभियुक्त को नहीं सुना जाता है ।

हमने, मजिस्ट्रेट के समक्ष जांच के दौरान या नियमित विचारण में साक्ष्य लेखबद्ध किया जाना आरम्भ होने से पूर्व सेशन न्यायाधीश के समक्ष प्राथमिक जांच प्रक्रिया का भी निर्देश किया है। इन प्राथमिक जांच कार्यवाहियों में अभियुक्त को अलग से सुना जाता है । इसलिए, टू-वे टेलीविजन और वीडियो लिंक प्रक्रिया की कोई आवश्यकता नहीं है ।

ऐसी आवश्यकता, जिसका उल्लेख नीचे किया गया है, सेशन न्यायाधीश के समक्ष नियमित विचारण में साक्ष्य अभिलिखित किए जाने के स्तर पर उत्पन्न होती है ।

विचारण में, यदि साक्षी अथवा पीड़ित ने पहले अनामता की मांग नहीं की है या मांग की थी और अनुरोध अस्वीकार कर दिया गया था तब, क्लोज्ड सर्किट टेलीविजन या वीडियो लिंक प्रक्रिया की आवश्यकता नहीं है । परन्तु जहां साक्षी अथवा पीड़ित ने मजिस्ट्रेट के समक्ष जांच के स्तर पर आवेदन किया था अथवा सेशन न्यायालय के समक्ष विचारण में साक्ष्य लेखबद्ध किए जाने से पूर्व आवेदन किया था और जहां न्यायालयों ने अनामता की स्वीकृति दे दी है वहां, विचारण क्लोज्ड सर्किट टेलीविजन प्रक्रिया की आवश्यकता है । निम्नलिखित परिस्थितियां उत्पन्न हो सकती हैं:

(i) ऐसा मामला हो सकता है जिसमें अभियुक्त को पीड़ित की पहचान ज्ञात है या इसके विपरीत स्थिति है ।

(ii) ऐसे मामले भी हो सकते हैं जहां पीड़ित के बारे में अभियुक्त को जानकारी नहीं है जैसे जहां कोई अभियुक्त पिस्टल से अचानक गोली चलाता है, ऐसे मामलों में पीड़ित को अनामता की आवश्यकता होगी ।

(iii) ऐसे भी मामले हैं जहां अभियुक्त को साक्षी की पहचान ज्ञात नहीं है और साक्षी को पहचान के संरक्षण की आवश्यकता है ।

यह स्पष्ट है कि उपर्युक्त एक (ii) और (iii) के बारे में सामान्य प्रक्रिया विकसित की जा सकती है जहां अभियुक्त को पीड़ित और साक्षियों के बारे में कोई जानकारी न हो और उपर्युक्त (i) के लिए पृथक प्रक्रिया विहित की जा सकती है जहां अभियुक्त पीड़ित को जानता है ।

(i) अभियुक्त को ज्ञात पीड़ित

जहां तक (i) के अधीन आने वाले मामलों का संबंध है, जहां अभियुक्त पीड़ित को जानता है, वहां अभियुक्त द्वारा पीड़ित को देखे जाने से रोकने की आवश्कयता नहीं है । परन्तु यदि साक्षी मानसिक आघात पहुंचाने का दावा करता है तब उसे अभियुक्त के सामने आए बिना साक्ष्य देने की अनुज्ञा देनी होगी । यहां एकमात्र आवश्यकता पीड़ित साक्षी को मानसिक आघात से बचाने की है जिससे वे तब पीड़ित हो सकेंगे यदि पीड़ित की पहचान को संरक्षण नहीं दिया जाता और उसे अभियुक्त के सामने आकर साक्ष्य देना पडे । जैसाकि हम इस समय चर्चा करेंगे , यहां भी टू-वे टेलीविजन या वीडियो लिंक आवश्यक है परन्तु यह अभियुक्त को बिना देखे साक्ष्य देने या मानसिक आघात से बचाने के लिए वीडियो स्क्रीन पर साक्ष्य देने तक ही सीमित है ।

(ii) पीड़ित और साक्षी जिनके बारे में अभियुक्त को कोई जानकारी नहीं है

(क) जहा तक (ii) के अधीन आने वाले उन पीड़ितों का संबंध है जिनकी पहचान के बारे में अभियुक्त को कोई जानकारी नहीं है और जहां तक (iii) के अन्तर्गत आने वाले उन अन्य साक्षियों का संबंध है जिनकी पहचान अभियुक्त को ज्ञात नहीं है, अभियोजन पक्ष पहचान संरक्षण की मांग कर सकेगा और न्यायालय प्राथमिक सुनवाई करके संरक्षण की अनुज्ञा दे सकेगा । यहां अभियुक्त

को पीड़ित और साक्षी को नहीं देखने दिया जाएगा । इस प्रयोजन को प्राप्त करने के लिए टू-वे टेलीविजन लिंक आवश्यक है ।

(ख) प्रारूप विधेयक में, हमारा विचार साक्षी और पीड़ित को परिभाषित करने का है ताकि पहचान संरक्षण आदेश प्राप्त करने के लिए एक सी प्रक्रिया (क) अन्वेषण तथा (ख) बाद के स्तरों पर भी अर्थात् जांच और विचारण में, लागू हो सके ।

(ग) यह बात स्पष्ट है कि एक पीड़ित जिसके बारे में अभियुक्त को जानकारी नहीं है - जैसाकि जहां अभियुक्त ने बहुत से व्यक्तियों पर अंधाधुंध गोलियां चलायीं है - और जिसे अपने तथा अपने निकट संबंधियों की, जो साक्षी की स्थिति में हे और अभियुक्त जिन्हें नहीं जानता है और जिन्हें उसी प्रकार की आशंका है, जान-माल का खतरा है ।

(घ) यह बात भी उतनी ही स्पष्ट है कि जहां अभियोजक या पीड़ित यह महसूस करते हैं कि अभियुक्त को उनकी पहचान ज्ञात नहीं है, वहां अभियोजक या पीड़ित पहचान संरक्षण के लिए आवेदन नहीं करेगा और ऐसे पीड़ित व्यक्ति केवल एक ऐसे आदेश के लिए आवेदन कर सकते हैं कि उनसे अभियुक्त की तत्काल उपस्थिति में साक्ष्य देने की अपेक्षा न की जाए या साक्ष्य देते समय भी वे अभियुक्त को वीडियो स्क्रीन पर नहीं देखना चाहेंगे ।

हम, (1) ऐसे पीड़ितों तथा साक्षियों के बारे में जो अभियुक्त को ज्ञात नहीं है और जिन्होंने विचारण से पूर्व संरक्षण आदेश प्राप्त कर लिया है और (2) पीड़ित जो अभियुक्त को ज्ञात है और जो विचारण पूर्व संरक्षण आदेश प्राप्त करना नहीं चहते, प्रारूप विधेयक में दो पृथक धाराएं अन्तर्विष्ट करने का प्रस्ताव कर रहे हैं ।

प्रक्रिया (विचारण स्तर) :

(i) साक्षी-पीड़ित जिन्होंने पहचान संरक्षण की मांग नहीं की है क्योंकि वे अभियुक्त को जानते हैं (मानसिक आघात से संरक्षण) :

जहां पीड़ित-साक्षी अभियुक्त को ज्ञात है, यद्यपि, पीड़ित ने पहले से पहचान संरक्षण की मांग नहीं की है वहां वह, जैसाकि पहले ही कहा जा चुका है, विचारण के दौरान, अभियुक्त के सामने रहते हुए अपराध के विवरण के बारे में साक्ष्य देकर मानसिक आघात से बचना चाहेगा । ऐसी व्यवस्था विहित करना कठिन कार्य नहीं है ।

हम ऐसी व्यवस्था कर सकते हैं कि जहां पीड़ित साक्षी, साक्ष्य देते समय, अभियुक्त को नहीं देख सकेंगे परन्तु अभियुक्त पीड़ित साक्षी को देख सकेगा । तथापि, यह व्यवस्था एक अपवाद के अध्यधीन होगी । पीड़ित को अभियुक्त की पहचान करने के प्रयोजन से, कि वह वही व्यक्ति है जो अपराध का दोषी है, साक्षी को एक बार अवश्य अभियुक्त के सामने आना होगा और इस प्रयोजन के लिए भी व्यवस्था की जा सकेगी ।

निःसंदेह, उच्चतम न्यायालय ने साक्षी के मामले में एक टिप्पणी की है कि पीड़ित द्वारा अभियुक्त को देखे जाने से बचाने के लिए एक स्क्रीन लगाया जा सकता है । परन्तु, हमारे दृष्टिकोण से, मनोवैज्ञानिक रूप से पीड़ित स्वतंत्र नहीं होगा यदि अभियुक्त भी उसी कमरे में होगा और इन्हें केवल स्क्रीन लगाकर ही पृथक किया जा सकेगा ।

हमारे विचार में, पीड़ित यदि दूसरे कमरे में होगा तब वह (स्त्री अथवा पुरूष) किसी मानसिक आघात के बिना अधिक स्वतंत्रतापूर्वक साक्ष्य दे सकेगा । अतः हम प्रस्ताव करते हैं कि एक टू-वे टेलीविजन और वीडियो लिंक के साथ दोनों कमरों के बीच सम्पर्क स्थापित करने वाले टू-वे ऑडियो प्रणाली की व्यवस्था की जानी चाहिए ।

दोनों कमरों में से प्रत्येक कमरे में टू-वे क्लोज्ड सर्किट टेलीविजन और वीडियो स्क्रीन की व्यवस्था हो सकेगी । पीड़ित साक्षी एक कमरे में उपस्थित रहेंगे और उस कमरे में अभियोजक, प्रतिरक्षा का वकील तथा क्लोज्ड सर्किट टेलीविजन का संचालन करने वाले कर्मचारी भी उपस्थित रहेंगे । न्यायाधीश और अभियुक्त, तकनीकी कर्मचारी, कोर्ट मास्टर और आशुलिपिक न्यायालय कक्ष में उपस्थित होंगे ।

न्यायालय कक्ष में एक वीडियो स्क्रीन होगा ताकि न्यायाधीश और अभियुक्त साक्षी-पीड़ित, अभियोजक और पीड़ित-साक्षी की परीक्षा करते हुए प्रतिरक्षा वकील को देख सकेंगे । दूसरे कमरे में, जहां पीड़ित और दो वकील उपस्थित हैं, दूसरा स्क्रीन होगा जिसका उपयोग केवल प्रारम्भिक चरण में, जब पीड़ित अभियुक्त की पहचान करेगा, किया जाएगा । यह प्रक्रिया पूरी हो जाने के पश्चात्, उस कमरे में लगे कैमरे को जिसमें अभियुक्त उपस्थित है, अभियुक्त पर केन्द्रित नहीं किया जाएगा । उसके पश्चात्, जब पीड़ित मुख्य परीक्षा में या प्रतिपरीक्षा में साक्ष्य देगा तब वह अपने कमरे में अभियुक्त को फिर से नहीं देख सकेगा । प्रतिरक्षा का वकील पीड़ित को उसके कमरे में सीधे देख सकेगा और उसके (स्त्री अथवा पुरूष) हाव-भाव या आचरण की परीक्षा कर सकेगा । न्यायाधीश और अभियुक्त पीड़ित को अपने कमरे में स्क्रीन पर देख सकेंगे और उसके आचरण को देख सकेंगे । कमरे में कोर्ट मास्टर तथा आशुलिपिक भी, जहां न्यायाधीश बैठा है, उपस्थित होंगे ।

एक टू-वे ऑडियो व्यवस्था होगी जिसके द्वारा प्रत्येक कमरे के व्यक्ति एक दूसरे से बात कर सकेंगे ।

(i) और (iii) - पीड़ित और साक्षी जिन्होंने पहचान के संरक्षण की मांग की है ।

जहां पीड़ित-साक्षी या अन्य साक्षी विचारण में पहचान संरक्षण की मांग करते हैं वहां दर्शायी ई प्रक्रिया के अनुसार विचारण से पूर्व अन्वेषण, जांच के स्तर पर उनकी पहचान को संरक्षण दिए जाने की आवश्यकता है परन्तु यह कि उनकी तथा उनके निकट संबंधियों की जान-माल को खतरा साबित कर दिया गया है । (हम पहले ही बता चुके हैं कि ऐसे पीड़ित भी होंगे - जैसे वे जो अभियुक्त द्वारा अंधाधुध गोली चलाए जाने से घायल हुए है और जिन्हें अभियुक्त नहीं जानता है)।

अब प्रश्न ऐसी व्यवस्था के बारे में उठता है जिससे यह उद्देश्य, उन मामलों में, जहां पीड़ित सहित, जो विचारण में अन्तिम रूप से साक्ष्य दे चुका है, साक्षियों को पहचान का संरक्षण स्वीकृत किया गया है, पूरा किया जा सकेगा ।

जहां साक्षी/पीड़ित के लिए पहचान संरक्षण पहले मंजूर किया जा चुका है और वह विचारण में साक्ष्य दे रहा है, वहां यह अनिवार्य है कि अभियुक्त तथा अभियुक्त के वकील को संबंधित पीड़ित/साक्षी की पहचान करने से रोका जाए । परन्तु यहां भी, पीड़ित-साक्षी और साक्षियों दोनों ही मामलों मे, जिनके बारे में अभियुक्त को कोई जानकारी नहीं है, उन्हें पहले अपराध के दोषी व्यक्ति के रूप में अभियुक्त की पहचान करनी होगी । इसलिए, उस कमरे में जहां पीड़ित-साक्षी उपस्थित हैं और साक्ष्य देंगे, स्क्रीन के साथ टू-वे क्लोज्ड सर्किट टेलीविजन होना आवश्यक है । अभियुक्त और प्रतिरक्षा का वकील दूसरे कमरे में होने चाहिए ताकि वे दोनों ही पीड़ित-साक्षी या संबंधित साक्षी को न देख सकें जो दूसर कमरे में उपस्थित है । यदि इस प्रकार का पीड़ित-साक्षी संरक्षण की मांग करने वाले अन्य साक्षी दूसरे कमरे में हैं और उस कमरे में लोक अभियोजक भी उपस्थित है

तब अभियोजक द्वारा अभियोजन पीड़ित/साक्षी को प्रोत्साहित करने का आरोप लगाया जा सकता है । इसलिए, न्यायाधीश का भी उस कमरे में उपस्थित रहना उपयुक्त होगा जहां से पीड़ित-साक्षी या साक्षी साक्ष्य देंगे ।

इस प्रकार, प्रबंध इस प्रकार किया जाना चाहिए कि पीड़ित/साक्षी जो पहचान के संरक्षण की मांग करते हैं, लोक अभियोजक तथा न्यायाधीश, कोर्ट मास्टर और आशुलिपिक तथा तकनीकी कर्मचारी न्यायाधीश कक्ष में उपस्थित रहेंगे जबकि अभियुक्त तथा प्रतिरक्षा का वकील दूसरे कमरे में रहेंगे । प्रत्येक कमरे में वीडियो स्क्रीन लगा होगा । पीड़ित/साक्षी, अभियोजक तथा न्यायाधीश की उपस्थित वाले कमरे में कैमरा पीड़ित/साक्षी की ओर केन्द्रित नहीं किया जाएगा जिनकी पहचान गोपनीय रखी जानी है । कैमरे को न्यायालय कक्ष में उपस्थित न्यायाधीश और अभियोजक पर केन्द्रित किया जाएगा । कैमरे मे सामने न्यायाधीश और अभियोजक को स्क्रीन पर देखा जा सकेगा जो अभियुक्त और प्रतिरक्षा वकील के कमरे में लगा है ।

दोनों कमरों के बीच सम्पर्क स्थापित करने के लिए टू-वे ऑडियो प्रणाली की भी व्यवस्था की जाएगी ।

हम इन प्रक्रियाओं का प्रस्तावित विधेयक की अनुसूची 1 और अनुसूची 2 में उपबंध कर रहे हैं।

कोर्ट मास्टर, आशुलिपिक तथा तकनीकी कर्मचारियों को शपथ लेनी होगी कि वे उस पीड़ित-साक्षी की पहचान प्रकट नहीं करेंगे (जिसने पहले ही पहचान संरक्षण आदेश प्राप्त कर लिया है) जो विचारण में साक्ष्य दे रहा है । विधि के अनुसार शपथ के भंग किए जाने के विरूद्ध न्यायालय अवमानना की कार्यवाही की जा सकेगी ।

अध्याय-दस

प्रश्नावली पर प्राप्त प्रतिक्रियाओं और साक्षी अनामता के प्रश्न पर की गई सिफारिशों के बारे में विचार-विमर्श

यह देख जा सकेगा कि परामर्शीपत्र के अध्याय-आठ में अन्तर्विष्ट प्रश्नावली के अधिकांश प्रश्नों का उत्तर इस रिपोर्ट के अध्याय-पांच से अध्याय-नौ के बीच पर्याप्त विस्तार से दिया जा चुका है । तथापि, प्रश्नों के उत्तरों को अपनी सिफारिशों के सारांश के रूप में निर्दिष्ट करना आवश्यक है । परामर्शी-पत्र के अध्याय-आठ के प्रश्नों का उत्तर अब प्रश्नों की संख्या के अनुक्रम में दिया जाएगा । (क्योंकि केवल सेशन न्यायालयों द्वारा विचारणी अपराधों के बारे में साक्षी की अनामता का प्रस्ताव कर रहे हैं इसलिए निम्नलिखित चर्चा को उसी अर्थ में समझना होगा ।)

(1) क्या साक्षी की अनामता, अन्वेषण, जांच और विचारण तीनों स्तरों पर और दांडिक मामले में अपील के स्तर पर भी कायम रखी जानी चाहिए ?

(i) जहां तक अन्वेषण के स्तर का संबंध है, हमारे विचार में उस स्तर पर साक्षी की अनामता के बारे में कार्यवाही के लिए एक उपबंध किया जाना आवश्यक है । जैसाकि अध्याय-सात और आठ में कहा गया है, हो सकता है पुलिस अन्वेषण के दौरान कतिपय मामलों में अनामता को आवश्यक समझे । इसलिए, चाहे धारा 161 या धारा 164 के अधीन कथनों के लेखबद्ध किए जाने के स्तर पर हो या धारा 164(6) के अधीन की गई अग्रेषण प्रतिलिपियां या जब धारा 173 के अधीन आरोप-पत्र तथा अन्य दस्तावेज फाइल किए जाएं और धारा 207 या धारा 208 के अधीन उनकी प्रतिलिपियां उपलब्ध करायी जाएं तब, उस स्तर पर ऐसा उपबंध होना आवश्यक है कि

पुलिस को, लोक अभियोजक के माध्यम से संबधित साक्षी के लिए अनामता की मांग करने हेतु संबंधित मजिस्ट्रेट को आवेदन करने की शक्ति प्राप्त हो । यदि मजिस्ट्रेट पहचान संरक्षण आदेश पारित कर देता है तो साक्षी को छद्म नाम से बुलाया जाएगा या अंग्रेजी वर्णमाला के किसी अक्षर द्वारा, यद्यपि वास्तविक पहचान मजिस्ट्रेट को प्रकट रहेगी ।

(ii) हमारा भी यही विचार है कि जैसाकि अध्याय-आठ में बताया गया है, कि जांच के स्तर पर साक्षियों को अनामता की अनुज्ञा देने के लिए उपबंध होने चाहिए । साक्षियों को अंग्रेजी वर्णमाला के अक्षरों से पुकारा जाएगा । यदि अनामता का आदेश पारित कर दिया जाता है तब वह जांच के दौरान अनामता सुनिश्चित करेगा और विचारण तक तथा दोषसिद्धि या दोषमुक्ति और इसके आगे तक के लिए भी उसका विस्तार होगा ।

(iii) हमारा यह भी विचार है कि सेशन विचारण से ठीक पहले तक अर्थात् विचारण में साक्षियों का साक्ष्य लेखबद्ध किए जाने से पूर्व तक साक्षी की पहचान को संरक्षण दिया जाना चाहिए ताकि ऐसे साक्षियों को भी संरक्षण का लाभ मिल सके जिन्होंने अन्वेषण या जांच के स्तर पर ऐसे किन्हीं आदेशों के लिए आवेदन नहीं किया था । साक्षियों को यहां भी छद्म नाम या अंग्रेजी के अक्षर से ही पुकारा जाएगा । हमारा विचार है कि विचारण में तथा उसके पश्चात् सेशन न्यायालय के निर्णय में अनामता दर्शित और जारी रहेगी ।

(iv) सेशन न्यायालय में निर्णय के पश्चात् भी, सभी अपीलीय कार्यवाहियों में अनामता जारी रहनी चाहिए । यहां तक कि उच्च न्यायालय और उच्चतम न्यायालय के निर्णय में, यथास्थिति, उसके पश्चात् भी छद्म नाम या अंग्रेजी के अक्षर का ही उल्लेख किया जाएगा । विधिक रिपोर्टों और समाचार पत्रों में केवल छद्म नाम या अक्षर का ही प्रयोग किया जाना चाहिए ।

हम सिफारिश करते हैं कि साक्षी अनामता, अन्वेषण, जांच, विचारण और यहां तक कि अपील और उसके पश्चात् भी सभी स्तरों पर कायम रहनी चाहिए ।

(2) प्रश्न यह है कि क्या अनामता केवल दांडिक मामलों तक ही सीमित रहनी चाहिए या उसका विस्तार सिविल मामलों के लिए भी होना चाहिए ? क्या इसका विस्तार प्रतिरक्षा साक्षियों के लिए भी होना चाहिए जैसाकि कतिपय अन्य देशों की संविधियों के अन्तर्गत किया गया है ?

हमारे विचार में, इस समय अनामता केवल दांडिक मामलों के लिए और अभियोजन पक्ष के साक्षियों तक ही सीमित होनी चाहिए जहां इसकी अधिक आवश्यकता है । इसमें कोई संदेह नहीं है कि कुछ देशों में जैसेकि न्यूजीलैण्ड एवीडेन्स एक्ट, 1908 की धारा 13ख (2) (1997 में संशेधित रूप में) (परामर्शी-पत्र का अनुबंध देंखे) प्रतिरक्षा साक्षियों के लिए भी अनामता प्रक्रियाएं विद्यमान हैं ।

परन्तु, वर्तमान के लिए, हमारा विचार है कि अनामता प्रक्रिया दांडिक मामलों में अभियोजन साक्षियों के लिए सीमित रहनी चाहिए ।

(3) प्रश्न यह है कि क्या अनामता उपबंध जो अभी कुछ समय पहले तक 'टाडा' और 'पोटा' (आतंकवादी मामलों के लिए) के लिए सीमित थे और अब विधि विरूद्ध क्रियाकलाप अधिनियम, 1967 (2004 में संशोधित रूप में) के अधीन किए जाने वाले विचारणें के लिए लागू होते हैं उनका विस्तार सेशन न्यायालयों द्वारा विचारणीय अन्य सभी गम्भीर अपराधों

के विचारण के लिए भी किया जाना चाहिए परन्तु यह कि यदि अनामता की स्वीकृति के लिए सभी अपेक्षित शर्तें पूरी की गई हों ?

इस विषय पर हमने इस रिपोर्ट के अध्याय-पांच में विस्तार से विचार किया है । हमारे विचार में सेशन न्यायलयों या इनके समान स्तर के न्यायालयों या विशेष न्यायालयों में विचारणीय सभी मामलों में, जहां साक्षी या उसके संबंधियों को जान-माल के खतरे का सबूत है, साक्षी संरक्षण प्राप्त होना चाहिए । यह आवश्यक नहीं है कि साक्षी संरक्षण केवल आतंकवादी या यौन अपराधों के मामलों तक ही सीमित रहे ।

जबकि अनामता को केवल सेशन न्यायालयों द्वारा विचारणीय मामलों में ही स्वीकृति दी जाएगी, फिर भी, प्रत्येक मामले में अपराध का स्वरूप और मामले के तथ्यों को देखकर निर्णय किया जाना चाहिए । किसी व्यक्ति के विचारण के मामले में, अनामता केवल अभियोजन साक्षियों के लिए ही, जिनके बारे में उनके तथा उनके संबंधियों के जीवन और सम्पत्ति के खतरे का पर्याप्त प्रमाण हो, स्वीकार की जानी चाहिए । दूसरे शब्दों में, प्रत्येक अभियोजन साक्षी का मामला, जिसके बारे में आवेदन किया गया है, अलग से लिया जाना चाहिए और उस पर निर्णय किया जाना चाहिए । वास्तव में, सेशन न्यायालयों द्वारा विचारणीय सभी मामलों में अनामता साक्षी अपेक्षित है।

सेशन न्यायालयों द्वारा विचारणी सभी मामलों में, जहां साक्षी तथा उसके निकट संबंधियों को उनकी जान-माल का खतरा है, साक्षी की पहचान का संरक्षण अनिवार्य है। जहां तक अन्य मामलों का संबंध है, हम यह सिफारिश करते हैं कि सेशन न्यायालयों द्वारा विचारणीय मामलों के अनुभव के पश्चात् सरकार उपयुक्त सांविधिक उपबंधों द्वारा इसका विस्तार अन्य मामलों के लिए भी करने पर विचार कर सकती है।

(4) प्रश्न यह है कि क्या यौन अपराधों और बाल उत्पीडन के पीड़ितों के संरक्षण के लिए वर्तमान सुरक्षोपाय - जैसेकि दंड प्रक्रिया संहिता, 1973 के अधीन कार्यवाहियां बंद कमरे में किया जाना और ऐसी कार्यवाहियों से संबंधित किसी सामग्री के प्रकाशन पर प्रतिबंध पर्याप्त है और क्या हम किन्हीं और उपायों का भी सुझाव देंगे ?

इस विषय पर अध्याय-तीन में विस्तार से विचार किया गया है । हमने यह भी दर्शाया है कि उच्चतम न्यायालय द्वारा साक्षी के मामले में निर्देश किए जाने पर 172वीं रिपोर्ट प्रस्तुत की गई थी, विधि आयोग से यह आग्रह किया गया था कि उपर्युक्त के साथ-साथ पीड़ित का स्क्रीनिंग, क्लोज्ड सर्किट टेलीविजन, पीड़ित द्वारा उत्तर दिए जाने की सूची जैसे उपाय भी सांविधि में सम्मिलित किए जाने चाहिए ।

परन्तु 172वीं रिपोर्ट में केवल पीड़ित के लिए 'स्क्रीनिंग' की पद्धति का ही सुझाव दिया गया था ।

साक्षी : 2004(6) स्केल 15 मामले में उच्चतम न्यायालय के समक्ष रिपोर्ट प्रस्तुत किए जाने के पश्चात् उच्चतम न्यायालय ने न केवल 'स्क्रीनिंग' को ही अपितु 'वीडियो कांफ्रेंस' प्रक्रिया को भी स्वीकार किया और यह सुझाव दिया कि प्रश्नों की एक सूची तैयार की जानी चाहिए और न्यायालय को, पीड़ित तथा साक्षी से प्रश्न पूछने के लिए, दी जानी चाहिए । परन्तु अन्तिम निदेशों में, न्यायालय ने केवल स्क्रीनिंग और वीडियो कांफ्रेंस प्रक्रिया जैसे प्रबन्धों का ही निर्देश किया है ।

हमारे विचार में, प्रश्न में निर्दिष्ट प्रक्रियाएं पर्याप्त नहीं हैं और बाल उत्पीडन सहित यौन अपराधों के पीड़ितों के संबंध में विद्यमान प्रक्रियाओं के साथ-साथ टू-वे क्लोज्ड सर्किट टेलीविजन, वीडियो लिंक और टू-वे ऑडियो लिंक जैसी प्रक्रिया भी सम्मिलित की जानी चाहिए। ये उपबंध पहचान के संरक्षण की मांग करने वाले पीड़ितों और साक्षियों के लिए भी लागू होने चाहिए। ये ऐसे पीड़ितों के लिए भी लागू होने चाहिए जिन्होंने पहचान के संरक्षण के लिए आवेदन नहीं किया है परन्तु जिन्होंने मानसिक आघात पहुंचने के आधार पर ऐसी परिस्थिति में साक्ष्य देने की अनुज्ञा दिए जाने का अनुरोध किया है जहां अभियुक्त की तत्काल उपस्थिति न हो ।

यह उपबंध प्रारूप विधेयक की धारा 12 में किया गया है ।

(5) प्रश्न यह है कि क्या यह पर्याप्त है कि पुलिस कमिश्नर या पुलिस अधीक्षक साक्षी और उसके संबंधियों को उनकी जान-माल का खतरा प्रमाणित करके साक्षी की ओर से अनामता के लिए अनुरोध करें या इस प्रश्न का निर्णय न्यायाधीश द्वारा उसक समक्ष प्रस्तुत किए गए इस आशय के साक्ष्य के आधार पर किया जाना चाहिए कि साक्षी या उसके संबंधियों को उनकी जान-माल का खतरा है।

जैसाकि परामर्शी-पत्र के पैरा 7.1 में कहा गया है, आस्ट्रेलिया में पुलिस कमिश्नर प्रमाणित करता है, ऐसी प्रक्रिया विक्टोरिया, नेशनल कैपिटल टैरिटरी , क्वीन्सलैण्ड में भी विद्यमान है। वास्तव में, साक्ष्य (साक्षी अनामता) संशोधन अधिनियम, 2000 की धारा 21च में 'साक्षी अनामता प्रमाण-पत्र के प्रभाव' का उल्लेख किया गया है। ऐसे प्रमाण-पत्र पर साक्षी को अनामता प्राप्त हो जाती है।

अब हम न्यूजीलैण्ड की प्रक्रिया तथा इस बारे में निर्णयजनित विधि का निर्देश करेंगे।

न्यूजीलैण्ड एवीडेन्स एक्ट, 1908 (1997 में संशोधन रूप में) में धारा 13ख का पाठ निम्नलिखित है :

"13ख(3)

न्यायाधीश को आवेदन पर सुनवाई और विनिश्चय अपने चैम्बर में ही करना चाहिए और -

(क) न्यायाधीश द्वारा आवेदन पर प्रत्येक पक्ष को सुने जाने का अवसर प्रदान किया जाना चाहिए; और

(ख) न तो आवेदन के समर्थक पक्षकार को और न ही साक्षी को ऐसी किसी जानकारी के प्रकट करने की आवश्यकता है जिससे आवेदन पर विचार किए जाने से पूर्व किसी व्यक्ति को (न्यायाधीश के अतिरिक्त) साक्षी की पहचान प्रकट हो सके।"

साक्ष्य किन्हीं अन्य मामलों में किन्हीं अन्य साक्षियों के विरूद्ध अभियुक्त के विगत आचरण से संबंधित हो सकेगा । साक्ष्य उस साक्षी के प्रति उसके आचरण के बार में हो सकेगा। साक्ष्य इस तथ्य के बारे में भी हो सकेगा कि अभियुक्त एक शक्तिशाली और माफिया का अंग है।

यदि न्यायाधीश को साक्षी या उसके संबंधियों की जान-माल के खतरे के बारे में कतिपय ऐसे तथ्यों और परिस्थितियों के आधार पर विनिश्चय करना पडे जो अभियुक्त को प्रकट नहींहै तब यह नहीं कहा जा सकेगा कि वह निष्पक्ष विचारण नहीं है। जैसाकि स्कॉट बनाम स्कॉट :1913 ए

सी 417 मामले में कहा गया है, न्याय प्रशासन से संबंधित अन्य अध्यारोही सिद्धान्त हो सकते हैं जैसे साक्षियों को ऐसा आश्वासन देना कि वे बिना किसी भय के साक्ष्य दे सकते हैं - जिसके लिए खुले विचारण के नियम में कुछ छूट दिए जाने की आवश्यकता है। आर बनाम एटकिंस: 2000(2) एन जैड एल आर 46 (सी ए) मामले में न्यूजीलैण्ड के अपीलीय न्यायालय ने निम्नलिखित टिप्पणी की है (परामर्शी-पत्र का पैरा 6.4.8 देखें) :

> "हम इस तथ्य के प्रति सावधान है कि जिन विषयों पर साक्ष्य दिया गया है उनका परीक्षण या प्रतिपरीक्षा नहीं हुई है और अप्रकट अभिकथनों के बारे में विरोधी को साक्ष्य प्रस्तुत करने का कोई अवसर नहीं दिया गया है। परन्तु, इस प्रकार के आवेदनों में, न्यायालय से आवश्य ही ऐसे अनपरीक्षित साक्ष्य पर विचार करने के लिए अनुरोध किया जाएगा और उन साक्ष्यों का मूल्यांकन करने का अनुरोध किया जाएगा जिनहें किंवदन्ती कहा गया है। हम हम मि0 केलवर का अनुरोध स्वीकार करते हैं कि इस प्रकार के कार्य में मूल्यांकन करने और निष्कर्ष निकालने में सावधानी बरती जानी चाहिए और यह कार्य उपवाद स्वरूप होना चाहिए। परन्तु हम इस स्थिति को स्वीकार नहीं करते हैं कि जब तक किसी सामान्य अपराध के लिए अभियोजन का औचित्य प्रमाणित करने के लिए पर्याप्त सबूत न हो तब तक उस पर कार्यवाही नहीं की जानी चाहिए। किसी विशिष्ट अभिकथन को कितना महत्व दिया जाएगा, यह स्रोत की विश्वसनीयता और समर्थकारी सामग्री होने या न होने सहित विभिन्न पहलुओं पर निर्भर करेगा । इस विषय पर आर बनाम डनिल : 1998 (2)एन जैड एल आर 341 मामले में धारा 13ग के लागू किए जाने पर सराहनीय ढंग से विचार किया गया है।

..... सर्वप्रथम विधान की ऐसी मान्यता होनी चाहिए कि साक्षी को अनामता सुनिश्चित कराने से निष्पक्ष विचारण की अवधारणा अवश्य ही नष्ट नहीं हो जाती।"

एटकिंस के मामले में न्यायालय ने बताया कि धारा 13ग(6) स्पष्ट रूप से उन प्रश्नों से अतिरिक्त प्रश्नों का निषेध नहीं करती है जिनके बारे में उचित रूप से यह कहा जा सकता है कि उनसे साक्षी की पहचान प्रकट होने की संभावना है - कि उसके परिणामस्वरूप वास्तविक और पर्याप्त खतरा है (पहचान प्रकट होने का)। दूसरे, विचारण न्यायाधीश को ऐसे प्रश्नों की अनुमति देने के लिए अवशिष्ट शक्ति प्राप्त है जिसका प्रयोग सभी परिस्थितियों की, जोखिम पर्याप्तता की सापेक्षता और प्रश्न के महत्व सहित, ध्यान में रखते हुए किया जाएगा। ये विषय विचार में न्यायिक नियंत्रण के अधीन हैं।

परन्तु, हमारे विचार में, भारत में ऐसे साक्षी के लिए जिसके बारे में अभियोजन पक्ष अनामता चाहता है, चाहे यह अन्वेषण स्तर पर हो या जांच अथवा विचारण स्तर पर, न्यायालय को अनामता का आदेश पारित करना आवश्यक होगा। पुलिस कमिश्नर या वरिष्ठ पुलिस अधिकारी का व्यक्तिनिष्ठ समाधान पर्याप्त नहीं है। यह न्यायालय द्वारा न्यायिक आदेश का विषय है पुलिस अधिकारी द्वारा प्रशासनिक आदेश पारित करने का नहीं । न केवल प्रमाण-पत्र अपर्याप्त है अपितु उससे जटिल समस्याएं पैदा हो जाएंगी और उनका परिणाम यह भी हो सकेगा कि पुलिस अधिकारी के प्रणाम-पत्र को भारत के संविधान के अनुच्छेद 226 के अधीन समानान्तर कार्यवाहियों में चुनौती दे दी जाए और उसके कारण कार्यवाहियों में विलम्ब हो।

इसलिए, हम यह सिफारिश करते हैं कि जहां अभियोजन पक्ष द्वारा अनामता के लिए आवेदन किया जाता है वहां पुलिस कमिश्नर या वरिष्ठ पुलिस अधिकारी का प्रमाण-पत्र पर्याप्त नहीं

है। इस विषय पर न्यायिक आदेश के रूप में न्यायालय का आदेश अपेक्षित है। तथापि, ऐसा प्रमाण-पत्र साक्ष्य का एक भाग हो सकेगा जिसे न्यायालय को अनामता स्वीकार करने या अस्वीकार करने के समय ध्यान में रखना होगा।

(6) क्या न्यायाधीश/मजिस्ट्रेट द्वारा प्राथमिक जांच होनी चाहिए? क्या ऐसी प्राथमिक जांच में साक्षी की पहचान गोपनीय रखी जानी चाहिए? क्या अभियुक्त और उसके वकील का पक्ष सुना जाना चाहिए या यह एकपक्षीय जांच होनी चाहिए? क्या जांच बंद कमरे में होनी चाहिए?

हमने इन प्रश्नों पर अध्याय-सात में विस्तार से विचार किया है।

हमारे विचार में, इस प्रश्न पर विनिश्चय करने के प्रयाजन से कि क्या अनामता आवश्यक है, मजिस्ट्रेट के समक्ष प्राथमिक जांच होनी चाहिए। अन्वेषण के स्तर पर, पुलिस द्वारा एक आवेदन किया जा सकेगा कि दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 161 या धारा 164 के अधीन कथनों को लेखबद्ध किए जाने के समय किसी विशिष्ट साक्षी की अनामता आवश्यक है। यहां किया गया निर्णय आरोप-पत्र फाइल किए जाने तक की अवधि के लिए प्रवृत्त रहेगा ।

इसके पश्चात्, मजिस्ट्रेट के समक्ष जांच आरम्भ होने से पूर्व, यदि जांच और विचारण के प्रयोजन से उसी साक्षी के लिए या अन्य साक्षियों के लिए भी अनामता अपेक्षित हो तो, प्राथमिक जांच के लिए एक समर्थनकारी उपबंध होना चाहिए और यदि उसके लिए स्वीकृति दे दी जाती है तो ऐसे आदेश सेशन न्यायालय के निर्णय के पश्चात् भी और अपील तथा पुनरीक्षण के प्रयोजन के लिए तथा उसके पश्चात् भी प्रवृत्त रहेंगे।

यदि किसी नए साक्षी के बारे में या किसी ऐसे साक्षी के बारे में जिसके लिए अनामता हेतु पहले आवेदन नहीं किया गया था या आवेदन अस्वीकार कर दिया गया था, तो विचारण में सेशन न्यायालय साक्ष्य के लेखबद्ध किया जाना आरम्भ होने से पूर्व सेशन न्यायालय को अनामता की स्वीकृति देने के लिए भी उपबंध होने चाहिए। यहां विचारण के संबंध में साक्ष्य लेखबद्ध किए जाने से पूर्व सेशन न्यायालय द्वारा ऐसे साक्षी के बारे में प्राथमिक आदेश पारित करना होगा। सेशन न्यायालय द्वारा स्वीकृत अनामता आदेश विचारण पूरा होने तक उसके पश्चात् भी प्रवृत्त रहेगा।

जांच तथा विचारण के स्तर पर, ऐसे आवेदन अभियोजक या साक्षी द्वारा भी फाइल किए जा सकेंगे। अन्वेषण के स्तर पर, केवल पुलिस द्वारा ऐसे आवेदन फाइल किए जा सकेंगे ।

इन सभी प्राथमिक जांच में, साक्षी की पहचान गोपनीय रखनी होगी और अभियोजन पक्ष को मजिस्ट्रेट या सेशन न्यायाधीश के समक्ष ऐसी सामग्री प्रस्तुत करनी होगी कि ऐसा अनामता आदेश क्योंकर पारित किया जाना चाहिए।

पुलिस कमिश्नर या जिला अधीक्षक की रैंक के पुलिस अधिकारी का प्रमाण-पत्र फाइल कर सकेगी और उसके साथ अन्य सामग्री भी न्यायालय के समक्ष प्रस्तुत कर सकेगी।

अन्वेषण के दौरान प्राथमिक जांच में, संदेहास्पद व्यक्ति को सुनना आवश्यक नहीं है। मजिस्ट्रेट अपने चैम्बर में अभियोजक की उपस्थिति में साक्षी से व्यक्तिगत रूप में प्रश्न पूछ सकेगा और उसकी परीक्षा कर सकेगा।

जांच के दौरान, मजिस्ट्रेट द्वारा या सेशन न्यायाधीश द्वारा विचारण में साक्ष्य अभिलिखित किए जाने से पूर्व प्राथमिक जांच के मामले में वे प्रतिरक्षा के वकील या अभियुक्त का पक्ष पृथक-पृथक रूप से सुनेंगे और ऐसे तथ्यों को प्रकट नहीं करेंगे जिनसे अभियुक्त या प्रतिरक्षा का वकील साक्षी की पहचान के बारे में जान सके। ऐसे मामलों में जहां जांच के दौरान और विचारण साक्ष्य अभिलिखित किए जाने से पूर्व साक्षियों के लिए अनामता की मांग की गई हो वहां प्रतिरक्षा के वकील/अभियुक्त को पृथक-पृथक रूप में सुने जाने का अवसर प्रदान करना आवश्यक है।

मजिस्ट्रेट/सेशन न्यायाधीश के समक्ष कार्यवाहियां बंद कमरे में होंगी।

मजिस्ट्रेट या न्यायाधीश द्वारा उपर्युक्त प्राथमिक जांच में, जैसाकि ऊपर बताया जा चुका है, क्लोज्ड सर्किट टेलीविजन या वीडियो लिंक प्रणालियों का प्रयोग करने की आवश्यकता नहीं है। हम ऐसी प्रक्रिया का प्रयोग केवल संरक्षित साक्षियों एवं पीड़ितों के लिए, जब वे सेशन न्यायालय में विचारण के स्तर पर साक्ष्य देंगे, किए जाने की सिफारिश कर रहे हैं।

इस प्रकार, प्राथमिक जांच मजिस्ट्रेट या सेशन न्यायाधीश द्वारा की जानी चाहिए। इस प्रकार की प्राथमिक जांच में, साक्षी की पहचान गोपनीय रखी जाएगी और अभियुक्त तथा उसके वकील का पक्ष अलग से सुना जाएगा। जांच बंद कमरे में होगी। परन्तु अन्वेषण के स्तर पर, ऐसी किसी भी जांच मे, अभियुक्त को सुने जाने की आवश्यकता नहीं है।

(7) मजिस्ट्रेट या सेशन न्यायाधीश के समक्ष अनामता प्रदान करने के लिए किए गए आवेदन में - क्या न्यायाधीश का ऐसा समाधान होना चाहिए कि साक्षी या उसके संबंधी के जीवन

और सम्पत्ति को गम्भीर खतरा है या क्या इतना दर्शाना ही पर्याप्त है कि खतरे की संभावना है? क्या साक्षी का केवल इतना कहना ही पर्याप्त है?

यह बात स्पष्ट है कि अभियोजन पक्ष के लिए यह साबित करना न तो आवश्यक है और न ही संभव कि उसकी स्वयं की तथा उसके संबंधी की जान-माल को वास्तव में खतरा है" अभियोजन के लिए जो कुछ संभव है वह यह कि वह, अभियुक्त या उसके सहयोगियों द्वारा किए गए पिछले प्रयासों को ध्यान में रखते हुए या उन घटनाओं को ध्यान में रखते हुए जिनमें अभियुक्त और उसके सहयोगी अन्तर्ग्रस्त हैं, यह साबित करे कि ऐसे खतरे की आशंका है।

न्यूजीलैण्ड की विधि की धारा 13(4)(क) में प्रयुक्त "संभावना" शब्द के अभिप्राय के बारे में परामर्शी-पत्र के पैरा 6.4.7 में चर्चा की गई है। एटकिन्स (परामर्शी-पत्र का पैरा 6.4.8 देखें) के मामले में न्यायालय ने अन्य मामलों में "संभावना" शब्द को दिए गए अर्थ को निर्दिष्ट किया है । न्यायालय ने निम्नलिखित विचार व्यक्त किया है :

"उसके संदर्भ में 'संभावना' शब्द का सामान्य अर्थ है - घटना से वास्तविक जोखिम हो सकता है - एक सुस्पष्ट या महत्वपूर्ण संभावना । जैसाकि कुक पी. ने कमिश्नर ऑफ पुलिस बनाम औम्बड्समैन : 1988 (1) एन जैड एल आर 385(391) मामले में ऑफिशियल इन्फॉरमेशन एक्ट, 1982 का अर्थ निकालते हुए, जिसमें संरक्षित सूचना से 'निष्पक्ष विचारण' होने की संभावना है, कहा है कि खतरा होने की अधिक संभावना का स्थापित किया जाना अवास्तविक होगा। किसी संरक्षित हित को गम्भीर या वास्तविक और पर्याप्त जोखिम है, जो वास्तव में घटित हो सकता है, केवल इतना ही पर्याप्त है। इस न्यायालय ने 'दांडिक मामलों' में संभावना शब्द का यही अर्थ लिया है, जिसका हाल ही

का उदाहरण आर बनाम पीरी :(1987)(1) एन जैड एल आर 66 मामले में देखा जा सकता है। विधि की अन्य शाखाओं के लिए भी यह एक परिचित परीक्षण है। (उदाहरण के लिए देंखे हाऊस ऑफ लार्डस् का, सैक्रेटरी ऑफ स्टेट फॉर दी होम डिपार्टमेंट एक्सपार्टी शिव कुमारन, 1988(1) ए एल एफ ई आर 193) मामला) .....

.....सुरक्षा के लिए वास्तव में खतरा (या गंभीर खतरा) होने के कारण से ही आदेश किया जा सकता है न कि किया जाएगा। इस प्रश्न पर विचार किया जा रहा है कि क्या ऐसे व्यक्तियों के लिए जिन्हें अपने सिविल कर्त्तव्यों के भाग के रूप में न्यायालय की प्रक्रिया में भाग लेना आवश्यक है, इस प्रकार भाग लेने से उनकी व्यक्तिगत सुरक्षा या उनकी सम्पत्ति की सुरक्षा पर कोई प्रतिकूल प्रभाव पड सकता है .....

..... यह दृष्टिकोण इंग्लिश अपीलीय न्यायालय द्वारा आर बनाम लार्ड सेविल्वे ऑफ न्यूडीगेट :1999(4) ए एल एल ई आर 860 ..... न्यायालय का निर्णय सुनाते हुए लार्ड वुल्फ ने कहा कि इस प्रश्न का विनिश्चय सबूत पर आधारित नहीं है, और उन्होंने फर्नानडीज बनाम गवर्नमेंट ऑफ सिंगापुर : 1971(2) ए एल एल ई आर 691..... मामले में लार्ड डिपलॉक द्वारा दिए गए निर्णय को स्वीकृत किया ..... प्रश्न पूर्वाग्रह में अन्तर्ग्रस्त अनुचित विचारण का खतरा और दंड से संबंधित था। लॉर्ड डिपलॉक ने कहा था (पृष्ठ 647) न्यायालय की अपेक्षाओं को किसी न किसी रूप में झुठलाए जाने के परिणामों की सापेक्ष गम्भीरता हमारे ध्यान मे है, मेरे विचार में पैरा (ग) के प्रवर्तन का मापदंड इस विषय में न्यायालय का समाधान होना नहीं है कि यदि वापस भेज दिया जाता है तो पलायन को निरूद्ध या निर्बंधित कर लिया जाएगा। मेरे विचार से थोडी सी संभावना होना ही पर्याप्त है, और मजिस्ट्रेट द्वारा जिस रूप में परीक्षण की बात कही गई है उससे या डिवीजनल न्यायालय द्वारा अभिव्यक्त की गई इस आशय की वैकल्पिक व्यवस्था से भी मेरा कोई विरोध नहीं है एक "न्यायोचित अवसर" या "विचार करने के लिए पर्याप्त आधार" या "कोई गम्भीर संभावना" ।"

खतरे की "संभावना" शब्द के अर्थ के बारे में हमारा भी यह मत है।

साक्षी का स्वयं का यह कथन कि उसे तथा उसके संबंधियों को जान-माल का खतरा है केवल तभी स्वीकार किया जा सकता है जब न्यायालय अभियोजन द्वारा प्रस्तुत की गई सामग्री या साक्षी के साक्ष्य को विश्वसनीय पाता है। मैरीलैण्ड बनाम क्रेग :(1990) 497 यू एस 836 मामले में अमरीका के उच्चतम न्यायालय ने कहा था कि साक्ष्य की विश्वसनीयता को परखा जाएगा। न्यूजीलैण्ड एवीडेंस एक्ट, 1908 (1997 मे संशोधित रूप में) की धारा 13ग (4) के खंड (ख) में यह अपेक्षा की गई है कि प्रतिरक्षा साक्षी की अनामता के मामले में न्यायालय का ऐसा समाधान होना चाहिए कि (i) साक्षी की विगत दोषसिद्धि या अभियुक्त या उसके सहयोगियों के साथ साक्षी के संबंधों को (जहां लागू होता है) ध्यान में रखते हुए ऐसा विश्वास करने का कोई कारण नहीं है कि असत्य बोलने में साक्षी का कोई प्रयोजन है या उसकी ऐसी प्रवृत्ति है ; या (ii) साक्षी की विश्वसनीयता साक्षी की पहचान प्रकट किए बिना समुचित रूप से परखी जा सकेगी।

इसके अतिरिक्त, धारा 13(5)(च) में न्यायाधीश से यह अपेक्षा की गई है कि वह इस बात पर विचार करे कि क्या कोई अन्य साक्ष्य साक्षी के साक्ष्य का समर्थन करता है।

इसी प्रकार, पुर्तगाल के अधिनियम की धारा 17 (परामर्शी-पत्र का पैरा 6.9 देखें) के उपखंड (ग) में साक्षी की विश्वसनीयता का न्यायोचित संदेह से परे होने का निर्देश किया गया है।

हम 'संकटग्रस्त साक्षी' को परिभाषित करने का प्रस्ताव कर रहे है जिनमे वे पीड़ित भी सम्मिलित हैं जो अनामता आदेश के लिए आवेदन करते हैं। हमने इस परिभाषा में साक्षी और उसके निकट संबंधियों को उनकी जान-माल के खतरे की 'संभावना' शब्द का प्रयोग किया है।

इसलिए, हम सिफारिश करते हैं कि साक्षी या उसके संबंधियों के जीवन को या उनकी सम्पत्ति को वास्तविक खतरे के सबूत की आवश्यकता नहीं है, 'संभावना' होने का सबूत ही पर्याप्त है। इस प्रयोजन से प्रस्तुत की गई सामग्री या साक्ष्य विश्वसनीय होना चाहिए।

(8) प्रश्न यह है कि क्या परिवादी (निजी परिवाद के मामले में) या अभियोजन पक्ष द्वारा, दंड प्रक्रिया संहिता, 1973 की धारा 207, धारा 208 के स्तर से पूर्व, साक्षी की पहचान प्रकट न किए जाने के लिए मजिस्ट्रेट के समक्ष आवेदन किया जाना चाहिए।

जैसीकि अध्याय-सात में चर्चा की गई है, अन्वेषण के दौरान जिस स्तर पर अनामता के लिए आवेदन किया जा सकेगा वह स्तर है जब धारा 161 या धारा 164(6) के अधीन कथन अभिलिखित किए जाएं। अनामता के लिए आवेदन धारा 207 और धारा 208 के अधीन अभियुक्त को दस्तावेजों की प्रतिलिपियां दिए जाने से पूर्व भी किया जा सकेगा।

(9) अन्वेषण या जांच के स्तर के दौरान पारित किए गए अनामता आदेश का परिणाम क्या होना चाहिए? क्या साक्षी की पहचान और पता अभियुक्त को दिए जाने वाले दस्तावेजों में न दर्शाए जाने का निदेश दिया जाना चाहिए और क्या मूल दस्तावेज सुरक्षित अभिरक्षा में रखे जाने चाहिए? क्या यह भी निदेशित किया जाना चाहिए कि न्यायालय की कार्यवाहियों में (वास्तविक विचारण से पूर्व) भी पहचान नहीं दर्शायी जानी चाहिए?

(क) अन्वेषण/जांच के स्तर पर, यदि मजिस्ट्रेट इस निष्कर्ष पर पहुंचता है कि साक्षी की अनामता के लिए आदेश पारित किया जाना चाहिए, तब उसे इस आशय का निदेश देना होगा कि साक्षी की पहचान का निर्देश अन्तर्विष्ट होने वाले सभी दस्तावेजों में धारा 161 के अधीन किए गए कथन,

आरोप-पत्र, जिसकी प्रतिलिपि अभियुक्त को दी जाएगी सहित, साक्षी का नाम और पता तथा ऐसी अन्य जानकारी जिसे साक्षी की पहचान ज्ञात हो सकेगी, नहीं दर्शायी जाएगी ।

'पोटा' (जो 2004 में निरसित किया जा चुका है) और जिसके उपबंध विधि विरूद्ध क्रियाकलाप (निवारण) अधिनियम, 1967 की धारा 44 में समाविष्ट किए गए हैं) की धारा 30(3) (ख) और (ग) में कहा गया है कि विशेष न्यायालय निम्नलिखित निदेश दे सकेगा :

"(ख) अपने आदेश या निर्णयों में या जन सम्मान से संबंधित किन्हीं अभिलेखों में साक्षियों के नाम और पतों का उल्लेख नहीं किया जाएगा ;

(ग) यह सुनिश्चित करने के लिए कोई निदेश जारी करना कि साक्षियों की पहचान और पते प्रकट नहीं किए जाएंगे;

(घ) ....।"

उदाहरण के लिए, भूतपूर्व युगोस्लाविया के ट्रायल चैम्बर इन्टनेशनल क्रिमिनल ट्रिब्यूनल के नियमों के नियम 75 के खंड (ख)(क) में अपेक्षा की गई है कि -

"(क) चैम्बर के सार्वजनिक अभिलेखों से नाम पहचान करने वाली जानकारी निकाल दी जाएगी ;

(ख) पीड़ित की पहचान कराने वाला कोई भी अभिलेख सार्वजनिक रूप से प्रकट नहीं किया जाएगा ;

(ग) .... ;

(घ) छद्म नाम दिया जाएगा ।"

ऐसी प्रक्रिया का अनुसरण किया जाना चाहिए । न्यूजीलैण्ड के एवीडेंस एक्ट, 1908 में (1997 में संशोधित रूप में) ऐसा कोई नियम नहीं है। इसलिए, आई.सी.टी.वाई. के उपर्युक्त उपबंध समाविष्ट किए जाने चाहिए।

(ख) इसी प्रकार, जब विचारण से पूर्व अनामता का दावा करने के लिए आवेदन किया जाता है, तब ऐसे ही उपबंध आवश्यक होंगे।

हम सिफारिश करते हैं कि अनामता आदेश के परिणाम के रूप में अभियुक्त को दिए जाने वाले दस्तावेजों में पहचान और पता नहीं दर्शाया जाना चाहिए और मूल दस्तावेज सुरक्षित अभिरक्षा में रखे जाने चाहिए। उपर्युक्त विवरण न्यायालय की कार्यवाहियों में भी नहीं दर्शाया जाना चाहिए।

वास्तव में, हमने, संलग्न किए जा रहे प्रारूप विधेयक की धारा 6, धारा 10, धारा 12 में इस प्रकार के उपबंध किए हैं।

(10) विचारण में यदि न्यायाधीश का साक्षी को खतरे के बारे में समाधान हो जाता है तब क्या साक्षी का कथन इस प्रकार से लेखबद्ध किया जाना चाहिए कि साक्षी और अभियुक्त एक दूसर को न देख सकें और केवल न्यायाधीश, अभियोजक और प्रतिरक्षा का वकील ही उसे देख सें (दो कैमरों का प्रयोग करके)? क्या साक्षी, जो वीडियो स्क्रीन पर दिखाया जाता है केवल न्यायाधीश, अभियोजक और प्रतिरक्षा के वकील को ही दिख पाना चाहिए? क्या न्यायालय के अन्य व्यक्तियों द्वारा फोटोग्राफ लेने पर प्रतिबंध होना चाहिए?

(11) उपर्युक्त संदर्भ में, क्या साक्षी का साक्ष्य भिन्न कमरे या भिन्न स्थान से दिया जाना चाहिए और क्या उस कमरे में कोई अन्य न्यायिक अधिकारी यह सुनिश्चित करने के लिए उपस्थित होना चाहिए कि साक्षी साक्ष्य देते समय स्वतंत्र है?

जहां तक प्रश्न 10 का संबंध है, जैसाकि पहले ही कहा जा चुका है कि मामले दो प्रकार हैं - (1) वे मामले जहां पीड़ित अभियुक्त को ज्ञात है और जो अपनी पहचान के बार में संरक्षण नहीं चाहता है परन्तु वह स्वयं अभियुक्त के सामने आना नहीं चाहता; और (2) वे मामले जहां अभियुक्त पीड़ित और साक्षी को नहीं जानता है और वे अपनी पहचान के लिए संरक्षण चाहते हैं। इस प्रकार ऐसे मामलों में पृथक-पृथक प्रक्रियाएं अपनाई जानी चाहिए जैसाकि अध्याय-नौ में विस्तार से बताया गया है।

प्रश्न 11 इस विषय से संबंधित है कि उस कमरे में कौन उपस्थित रहेगा जहां से साक्षी साक्ष्य दे रहा है।

अध्याय-नौ में हमने पृथक-पृथक रूप से विस्तृत प्रक्रिया दी है। वहां, जहां पीड़ित साक्षी अभियुक्त को ज्ञात है और वहां जहां पीड़ित साक्षी अभियुक्त को ज्ञात नहीं है दोनों प्रकार के मामलों में टू-वे क्लोज्ड सर्किट टेलीविजन का प्रयोग किस प्रकार से किया जाएगा।

हम, टू-वे क्लोज्ड सर्किट टेलीविजन या वीडियो लिंक के साथ टू-वे ऑडियो लिंक प्रक्रिया की सिफारिश करते हैं जिसके बार में अध्याय-नौ में विस्तार से बताया गया है और इन्हें प्रारूप विधेक में अनुसूची-एक के साथ पठित धारा 12 और अनुसूची-दो के साथ पठित धारा 13 में अन्तर्विष्ट किया गया है। पहली के अन्तर्गत ऐसे साक्षी और पीड़ित आते हैं जिन्हें धमकी दी गई है और जिन्हें अनामता स्वीकार की जा चुकी है और दूसरी के अन्तर्गत वे पीड़ित आते हैं जो अभियुक्त

को ज्ञात हैं और वे केवल इतना चाहते हैं कि जब वे साक्ष्य दे रहे हों तब अभियुक्त उनके सामने न आए।

(12) क्या ऐसे विचारणों में जनता और मीडिया की उपस्थिति की, प्रकाशन निषेध के अध्यधीन, अनुमति होनी चाहिए? इस शर्त के उल्लंघन के लिए क्या दंड दिया जाना चाहिए?

जहां तक ऐसे साक्षियों और पीड़ितों के मामलों का संबंध है जो अभियुक्त को ज्ञात हैं और क्लोज्ड सर्किट टेलीविजन के माध्यम से दूसरे कमरे से साक्ष्य दे रहे हैं, वहां जनता और मीडिया को विचारण से अलग रखने की आवश्यकता नहीं है क्योंकि वहां साक्षी की अनामता का प्रश्न ही नहीं है। अभियुक्त पीड़ित को जनता है। यौन अपराधों के मामलों में धारा 327 में बंद कमरे में सुनवाई की अपेक्षा की गई है और शिशुओं के के मामलों को छोडकर, जहां पीड़ित अभियुक्त को ज्ञात है, जनता और मीडिया को वंचित रखने की आवश्यकता नहीं है।

हम सिफारिश करते हैं कि उस मामले में जहां पीड़ित/साक्षी के बारे में अभियुक्त को कोई जानकारी नहीं है क्योंकि वहां साक्षी की पहचान का प्रश्न अन्तर्ग्रस्त है, वहां जनता और मीडिया को साक्षी के कमरे तथा न्यायालय कक्ष दोनों से बाहर रखना आवश्यक है। जनता और मीडिया को बाहर रख जाना न्याय प्रशासन के हित में है और इससे साक्षियों को गोपनीय बनाया रखा जा सकेगा तथा उन्हें जान-माल के खतरे से भी बचाया जा सकेगा । यह प्रक्रिया विधि अनुकूल है और इससे भारत के संविधान के अनुच्छेद 14 और अनुच्छेद 19(1) का उल्लंघन नहीं होगा।

प्रारूप विधेयक की धारा 12(3) में, जो विचारण में ऐसे साक्षियों और पीड़ितों के साक्ष्य के बारे में है जिन्हें अनामता स्वीकृत की गई है, इस प्रकार के अपवंचन का उपबंध किया गया है। धारा 13 में, जो विचारण में साक्ष्य के बारे में है, ऐसा उपबंध किए जाने की कोई आवश्यकता नहीं है।

(13) क्या उपर्युक्त प्राथमिक सुनवाई में और विचारण में दोनों स्तरों पर अपनी सहायता के लिए न्यायालय को ऐसे प्रत्येक मामले में न्यायमित्र नियुक्त करना चाहिए जहां साक्षी को संरक्षण दिया जाना है या दिए जाने की संभावना है?

दूसरे देशों की अनेक विधियों के (उदाहरण के लिए परामर्शी-पत्र में निर्दिष्ट न्यूजीलैण्ड की विधि) न्यायमित्र नियुक्त करने का उपबंध है।

परन्तु, हमारे विचार में, किसी पृथक वकील या न्यायमित्र की अनुमति की कोई आवश्यकता नहीं है।

(14) क्या ऐसे मामलों में वीडियो लिंक के माध्यम से साक्ष्य अभिलिखित करते समय चेहरे और आवाज को विकृत करने की प्रणाली का अनुसरण किया जाना चाहिए?

ऐसे मामलों के लिए जहां पीड़ित/साक्षी अभियुक्त को ज्ञात नहीं है, हमने अध्याय-नौ में बताया है कि कैमरा ऐसे व्यक्तियों की ओर केन्द्रित नहीं किया जाएगा और इस प्रकार की विकृति की कोई आवश्यकता नहीं है। जहां तक आवाज का संबंध हे, ऑडियो व्यवस्था से आवाज बिगाड़ी जा सकती है।

ऐसे साक्षियों और पीड़ितों के बारे में जिन्हें संरक्षण आदेश प्राप्त हो गया है, प्रारूप विधेयक की धारा 12 में विचारण के स्तर के लिए ऐसा उपबंध किया गया है।

हम तद्नुसार सिफारिश करते हैं ।

(15) क्या साक्षी की पहचान और पता समस्त जांच और विचारण के दौरान (या विचारण के पश्चात् भी) और निर्णय होने तक न्यायालय की सभी कार्यवाहियों में गोपनीय रखे जाने चाहिए या क्या इन्हें साक्षी की परीक्षा आरम्भ होने पर प्रकट किया जाएगा तब, यदि एक सुनवाई में साक्ष्य पूरा नहीं हो जाता है तो क्या आगामी सुनवाई की तिथि तक साक्षी को धमकी दिए जाने की कोई संभावना नहीं होगी?

इस विषय पर पीछे चर्चा की जा चुकी है। करतार सिंह : 1994(3) एस सी सी 569(पैरा 290) के मामले में उच्चतम न्यायालय के निर्णय में यह कहा गया था कि जैसाकि पंजाब और हरियाणा उच्च न्यायालय की संपूर्ण न्यायपीठ द्वारा बिमल कौर के मामले में,(एआईहार 1998 पी एण्ड एच 95)(एफ बी), सुझाव दिया गया था-

'साक्षियों को पहचान, नाम और पते विचारण आरम्भ होने से पहले प्रकट किए जा सकेंगा'

कनाडा के आर बनाम खेला : 1995(4) एच सी आर 201, (परामर्शी-पत्र का पैरा 6.5.2 देंखे), मामले में भी यह सुझाव दिया गया था कि मुखबिर को पहचान अभियुक्त को विचारण से ठीक पहले प्रकट की जा सकेगी।

परन्तु, जैसाकि पहले बताया जा चुका है, ऐसी प्रक्रिया सामान्यतया अन्य देशों में स्वीकार्य नहीं है। ऐसा करने का कारण यह है कि आमतौर पर विचारण एक दिन में पूरा नहीं होता है और न ही संरक्षित साक्षी का साक्ष्य एक दिन में पूरा हो पाता है।

इसके अतिरिक्त, हमारे विचार में यह आवश्यक है कि पहचान आदि अन्त तक गोपनीय रखी जाए और निर्णय के पश्चात् और आगामी कार्यवाहियों के लिए भी।

इसके लिए उपबंध प्रारूप विधेयक की धारा 10 में किया गया है।

हम सिफारिश करते हैं कि विचारण आरम्भ होने से पूर्व साक्षी की पहचान प्रकट करना पर्याप्त नहीं है। गोपनीयता विचारण के दौरान तथा उसके पश्चात् भी बनाए रखी जानी चाहिए।

(16) साक्षी की परीक्षा वीडियो लिंक प्रक्रिया के माध्यम से करने के बजाए, क्या यह पर्याप्त होगा कि न्यायालय से ऐसा अनुरोध करते हुए उसे प्रश्नों की एक सूची इस आशय से दी जाए कि न्यायालय द्वारा वे प्रश्न साक्षी से पूछ जाएंगे? क्या इससे निष्पक्ष और प्रभावी प्रतिपरीक्षा बाधित होगी यदि अभियुक्त और उसके वकील को एक निश्चित प्रश्न तक सीमित रखा जाता है उन्हें किसी विशिष्ट के बारे में साक्षी के उत्तरों से उत्पन्न प्रश्न पूछने का सामान्य ला नही दिया जाता?

यह प्रश्न विचारण में प्रक्रिया का निर्देश करता है।

इस अन्तिम रिपोर्ट में, हमने सुझाव दिया है कि अन्वेषण के दौरान प्राथमिक जांच के स्तर पर, अभियुक्त को सुने जाने की आवश्यकता नहीं है और जांच के दौरान प्राथमिक जांच के स्तर पर और विचारणीय साक्ष्य अभिलिखित किए जाने से पूर्व अभियुक्त को पृथक रूप में सुना जाएगा। हमने धारा 19(4) में यह उपबंध किया है कि बाद वाली परिस्थितियों में एक सूची दी जा सकती है

या अभियुक्त की ओर से सूची दी जा सकती है परन्तु उसमें ऐसे प्रश्न सम्मिलित नहीं होंगे जिनसे साक्षी की पहचान प्रकट होती हो ।

हमारे विचार में, यह ऑडियो सुविधा के साथ क्लोज्ड सर्किट टेलीविजन का प्रभावी विकल्प नहीं है क्योंकि सुनवाई नियमित रूप से होगी यद्यपि पहचान प्रकट नहीं की जाएगी। इसके अतिरिक्त, एक बडा लाभ यह है कि प्रतिरक्षा का वकील साक्षियों द्वारा दिए गए उत्तरों से उत्पन्न प्रश्न पूछ सकेगा। यदि साक्षी को केवल प्रश्नों की एक सूची ही दी जाएगी तब प्रतिरक्षा का वकील उन्हीं प्रश्नों तक सीमित रहेगा और साक्षी के उत्तरों से उत्पन्न होने वाले प्रश्न नहीं पूछ सकेगा।

नियमित विचारण में प्रश्नों की सूची देने का प्रश्न ही नहीं है। टू-वे टेलीविजन या वीडियो लिंक प्रक्रिया का अनुसरण किया जाएगा और उस प्रक्रिया के अधीन, प्रश्न ऑडिया और वीडियो के माध्यम से पूछे जा सकेंगे।
इसलिए, हम सूचीबद्ध प्रश्नों की प्रक्रिया की अपेक्षा टू-वे ऑडियो की सुविधा के साथ टू-वे क्लोज्ड सर्किट टेलीविजन को महत्व देते हैं।

(17) केवल इस कारण से कि न्यायालय ने उपर्युक्त् निर्दिष्ट प्राथमिक सुनवाई में अनामता मंजूर करने से इंकार कर दिया है, क्या साक्षी बाद में अनामता या विचारण में संरक्षण के लिए आवेदन नहीं कर सकेगा यदि नई परिस्थितियां उसके पक्ष में आदेश परित करने के उचित कारण भी हों?

इस प्रश्न पर सभी प्रत्यर्थियों ने अपने उत्तरों में नया अवसर दिए जाने का समर्थन किया है।

हमारे विचार में, एक ही साक्षी को फिर से आवेदन करने की अनुज्ञा होनी चाहिए यदि उसने या तो पहले आवेदन नहीं किया था या ऐसा आवेदन अस्वीकार कर दिया गया था ।

(18) क्या प्रतिवादी इस प्रकार का विरोध करने की अनुमति दी जानी चाहिए कि अभियोजन पक्ष का साक्षी जिसे अनामता दी गई है, स्टॉक साक्षी है?

यह प्रश्न विचारण के स्तर पर उत्पन्न होता है। इस संबंध में प्राप्त प्रतिक्रियाओं में कुछ प्रत्यर्थियों ने इस प्रकार के विरोध को अनुज्ञा दिए जाने के पक्ष का समर्थन किया और कुछ प्रत्यर्थियों ने इसका विरोध किया है और कुछ ने कहा है कि इसका उत्तर परिस्थितियों पर निर्भर करेगा और इसका भार अभियुक्त पर होना चाहिए।

व्यवहारात्मक दृष्टिकोण से, यद्यपि अभियुक्त 'स्टॉक साक्षी' होने का विरोध कर सकेगा परन्तु उसे ऐसी सामग्री और परिस्थितियों से जिनसे साक्षी की पहचान प्रकट न होती हो, अपने विरोध को प्रमाणित करना होगा। इस प्रकार, ऐसा विरोध करना यद्यपि तकनीकी रूप से अनुज्ञेय है परन्तु ऐसा प्रतीत होता है कि इससे अभियुक्त पर काफी भार पडेगा।

सर्वोत्तम यह है कि इस प्रश्न का निर्णय न्यायाधीश पर छोड दिया जाना चाहिए और इस प्रकार इसके प्रारूप विधेयक में कोई उपबंध करने की आवश्यकता नही है।

(19) क्या टेली-लिंक और वीडियो पर प्रदर्शन का कार्य न्यायिक शासन के किसी तकनीकी कर्मचारी द्वारा संचालित किया जाना चाहिए किसी पुलिस अधिकारी या किसी अन्य लोक सेवक द्वारा नहीं और यह कार्य बाहर के किसी निजी ठेकेदार द्वारा भी नहीं कराया जाना चाहिए?

अधिकांश प्रतिक्रियाओं में यह कहा गया है कि न्यायिक शाखा के लिए तकनीकी कर्मचारी नियुक्त किए जाने चाहिए।

इस संबंध में हमने विधेयक की अनुसूची-1 और अनुसूची-2 में उपबंध किए हैं जहां हम ऐसे तकनीकी कर्मचारियों को न्यायालय कर्मचारियों के रूप में वर्णित किया है।

(20) क्या तकनीकी कर्मचारी प्रत्येक राज्य में एक ही स्थान पर रखे जाने चाहिए और उन्हें अनुरोध प्राप्त होने पर संबंधित न्यायालय में भेजा जाना चाहिए क्योंकि जिले के प्रत्येक न्यायालय या न्यायालयों के ग्रुप के लिए ऐसी सुविधाएं उपलब्ध कराया जाना संभव नहीं है?

हमने टू-वे टेलीविजन या वीडियो लिंक और ऑडियो पद्धति को सेशन न्यायालयों या समानस्तरीय न्यायालयों या विशेष न्यायालयों में वास्तविक विचारण तक सीमित रखा है। इस पर भी, हमारा विचार यह है कि प्रत्येक सेशन न्यायालय के लिए इस प्रकार की व्यवस्था करना आवश्यक नहीं है। यह प्रश्न धारा 16 के अधीन नियम बनाते हुए उच्च न्यायालय के छोड दिया जाना चाहिए कि किस-किस स्थान पर ऐसी आधारभूत सुविधा उपलब्ध कराई जाए।

(21) क्या प्राथमिक जांच के प्रयोजन से साक्षी की अनामता का आदेश केवल सेशन न्यायालय द्वारा ही पारित किया जाना चाहिए उसके अधीनस्थ किसी अन्य न्यायालय द्वारा नहीं?

24 प्रत्यर्थियों ने कहा है कि अनामता आदेश केवल सेशन न्यायालयों द्वारा ही पारित किया जाना चाहिए और 15 ने कहा है कि ऐसे आदेश मजिस्ट्रेट के द्वारा भी पारित किए जा सकेंगे । कुछ ने स्वतंत्र अभिकरण का सुझाव दिया है।

हम सिफारिश करते हैं कि अन्वेषण के दौरान, आदेश मजिस्ट्रेट द्वारा प्राथमिक जांच में पारित किए जाएंगे और यह स्थानीय सुविधा की दृष्टि से भी उपयुक्त होगा। जांच के स्तर पर फिर

से मजिस्ट्रेट द्वारा प्राथमिक जांच में ही ऐसे आदेश पारित किए जा सकेंगे । परन्तु जहां विचारण में साक्ष्य अभिलिखित किए जाने से पूर्व आवेदन किया जाता है, आवेदन सेशन न्यायालय के समक्ष प्रस्तुत किया जाएगा और उस पर निर्णय विचारण आरम्भ होने पर नियमित साक्ष्य अभिलिखित किए जाने से पूर्व ही किया जाएगा।

(22) किसी साक्षी को अनामता स्वीकृत करने के आदेश के विरूद्ध विधि में उच्च न्यायालय को अपील करने का उपबंध होना चाहिए और अपील के निपटान के लिए आदेश तामील किए जाने की तिथि से एक महीने की समय सीमा निर्धारित की जानी चाहिए?

अधिकांश प्रत्यर्थियों ने उच्च न्यायालय में अपील किए जाने और एक महीन की समय सीमा के विचार का समर्थन किया है।

हम सिफारिश करते हैं कि जहां तक अनवेषण के स्तर पर मजिस्ट्रेट द्वारा किए गए आदेशों का संबंध है, (प्रारूप विधेयक की धारा 6 देंखे) यदि मजिस्ट्रेट द्वारा आवेदन अस्वीकृत कर दिया जाता है तो अभियोजन या साक्षी द्वारा वहां अपील किए जाने की कोई आवश्यकता नहीं है क्योंकि अपील करने से अन्वेषण में विलम्ब होगा जो समय बाधित है।

धारा 6 के अधीन आदेश के विरूद्ध संदेहास्पद व्यक्ति द्वारा अपील फाइल किए जाने का प्रश्न ही नहीं उठता ।

परन्तु, जहां तक साक्ष्य का लेखबद्ध किया जाना आरम्भ होने से पूर्व मजिस्ट्रेट या सेशन न्यायाधीश द्वारा जांच कार्यवाहियों के दौरान प्राथमिक जांच में पारित किए गए आदेश का संबंध है,

वहां अपील के लिए उपंध होना आवश्यक है चाहे आवेदन स्वीकृत हुआ या अस्वीकृत । अपील अनामता मंजूर करने या नामंजूर किए जाने के आदेश के विरूद्ध उच्च न्यायलय में की जानी चाहिए और जहां तक संभव हो सके, अपील का निपटारा प्रतिवादी को नोटिस तामील होने की तारीख से एक महीने की अवधि के भीतर कर दिया जाना चाहिए।

प्रस्तावित अधिनियम का लागू होना

जहां तक प्रस्तावित अधिनियम के लागू होने का संबंध है, हमने निम्नलिखित उपबंध की सिफारिश की है :

"15. इस अधिनियम के उपबंध निम्नलिखित के लिए लागू होंगे-

(क) गम्भीर अपराधों के पीड़ित, सेशन न्यायालय में विचारण स्तर पर जिन कथनों का अभिलिखित किया जाना आरम्भ नहीं हुआ है ; और

(ख) गम्भीर अपराधों से संबंधित संकटग्रस्त साक्षी जिनकी पहचान संदेहास्पद व्यक्ति या अभियुक्त को प्रकट नहीं की गई है और जिनके कथन इस अधिनियम क प्रवर्तन की तारीख को, अन्वेषण के दौरान या जांच के दौरान मजिस्ट्रेट के समक्ष या विचारण में सेशन न्यायालय द्वारा अभिलिखित नहीं किए गए हैं।"

भाग-दो

साक्षी सुरक्षा कार्यक्रम

अध्याय-ग्यारह

परामर्शी-पत्र और प्रतिक्रियाएं

परामर्शी-पत्र अगस्त, 2004 में प्रकाशित हुआ था और उसमें विभिन्न क्षेत्रों से प्रतिक्रियाएं आमंत्रित की गई थीं । इस पत्र का भाग तीन और भाग चार साक्षी सुरक्षा कार्यक्रमों के बारे में है। इनमें से प्रत्येक भाग में एक-एक अध्याय अन्तर्विष्ट है। भाग-तीन के अध्याय-सात में आस्ट्रेलिया, साऊथ अफ्रीका, कनाडा, संयुक्त राज्य अमरीका, फिलीपिन्स, हांगकांग, पुर्तगाल, फ्रांस, चैकोस्लोवाकिया, कोरिया गणतंत्र, जापान, नीदरलैण्ड, जर्मनी और इटली में प्रवृत्त कार्यक्रमों का विवरण दिया गया है। भाग-चार के अध्याय-आठ में साक्षी पहचार संरक्षण और साक्षी सुरक्षा कार्यक्रमों के बारे में पृथक-पृथक रूप से प्रश्नावली दी गई हैं । अध्याय-आठ में साक्षी सुरक्षा कार्यक्रमों के विषय पर 14 प्रश्न दिए गए हैं। परामर्शी-पत्र के अन्त में पुर्तगाल के कार्यक्रमों से संबंधित नियमों को मॉडल के रूप में अन्तर्विष्ट किया गया है।

परामर्शी-पत्र के इस विषय पर प्राप्त हुई 40 प्रतिक्रियाओं में हमारे देश में साक्षी सुरक्षा कार्यक्रमों की आवश्यकता का समर्थन किया गया है। इन 40 प्रतिक्रियाओं में से 10 राज्य सरकारों से, 10 वरिष्ठ पुलिस अधिकारियों से, 3 न्यायाधीशों से, 17 अधिवक्ताओं , न्यायविदों तथा अन्य व्यक्तियों से प्राप्त हुई है।

हम साक्षी सुरक्षा कार्यक्रमों से संबंधित समस्त विवरणों, जिसका निर्देश परामर्शी-पत्र के अध्याय-सात में किया गया हे, इस अंतिम रिपोर्ट में दोहराना नहीं चाहते हैं। तथापि, हम अन्य देशों के विभिन्न कार्यक्रमों में सामान्य मूल तत्वों का सारांश देने का प्रयास करेंगे।

अन्य देशों में साक्षी सुरक्षा कार्यक्रमों के मूल तत्व

इस समय हमारे देश में कोई सुरक्षा कार्यक्रम नहीं है जो न्यायालय कार्यवाहियों से बाहर पीड़ित और साक्षियों की सुरक्षा से संबंधित है।

विभिन्न देशों में चल रहे विभिन्न कार्यक्रमों से, जैसाकि परामर्शी-पत्र में निर्देश किया गया है, कतिपय मूल तत्व जुटाए गए हैं। ये निम्नलिखित हैं :;

(1) प्रारम्भ में, किसी वरिष्ठ पुलिस अधिकारी द्वारा या न्यायालय द्वारा ऐसा विनिश्चय किया जाता है कि पीड़ित साक्षी या अन्य साक्षियों के लिए सुरक्षा की आवश्यकता है (अर्थात् न्यायालय कार्यवाहियों से बाहर) ;

(2) सुरक्षा सामान्यतया साक्षियों के उस मामले में स्वीकार की जाती है जिन्हें गम्भीर अपराधों के बारे में विचारण में साक्ष्य देना होता है ;

(3) सुरक्षा अन्वेषण के स्तर पर मंजूर की जाती है और विचारण पूरा होने तक निरन्तर बनाए रखी जाती है ;

(4) सुरक्षा कार्यक्रमों के प्रभारी राज्य/पुलिस और पीड़ित साक्षी या अन्य साक्षी दोनों को एक समझौता ज्ञापन पर हस्ताक्षर करने होते हैं जिसमें दोनों ओर के पारस्परिक दायित्वों का विशिष्ट विवरण दिया जाता है ;

(5) सुरक्षा के प्रकारों में (क) साक्षी को एक नई पहचान देना और /या (ख) उसे अन्यत्र स्थान पर रखना सर्वाधिक महत्वपूर्ण है ;

(6) समझौता ज्ञापन के परिणामस्वरूप, साक्षी कार्यवाहियों की अपेक्षानुसार साक्ष्य देने के लिए सहमत होता है जबकि राज्य को साक्षी को अन्य स्थान पर रखने, बच्चों की अभिरक्षा और अनुरक्षण पर होने वाले व्यय का भार तथा पीड़ित साक्षियों या अन्य साक्षियों के दायित्वों का भार वहन करना पड़ता है ;

(7) साक्षी को, निगरानी और सुरक्षा के अध्यधीन, न्यायालय या पुलिस परिसर में स्थान दिया जा सकता है ;

(8) सुरक्षा का, संबंधियों की शारीरिक सुरक्षा के साथ-साथ, और विस्तार किया जा सकता है ;

(9) संरक्षित व्यक्ति की आकृति या शरीर में परिवर्तन किया जा सकता है ;

(10) इस कार्यक्रम में स्वीकार किए गए साक्षी का नाम या उसकी पहचान किसी भी रूप में प्रकट करने की किसी व्यक्ति को भी अनुमति नहीं है और न ही साक्षी की तस्वीर बनाने, चित्र-निरूपण या चित्रण करने या फोटोग्राफ खींचने या उसके बारे में कोई पम्फलैट या पोस्टर आदि लगाने की अनुमति है ;

(11) (क) अन्य सिविल कार्यवाहियों में, जिनमें ऐसा संरक्षित व्यक्ति एक पक्षकार है या वह साक्षी है, वहां यदि वरिष्ठ न्यायालय को ऐसा प्रतीत होता है कि यदि संरक्षित व्यक्ति को कोई सिविल मामला दायर करना है या उसका प्रतिवाद करना है या मामले में साक्ष्य देना है तो, जब वह सिविल कार्यवाही आरम्भ करेगा, प्रतिरक्षा करेगा या उसे जारी रखेगा, उसकी सुरक्षा को खतरा होने की संभावना है, न्यायालय उसे उसकी नई पहचान के अधीन मामला दायर करने, प्रतिरक्षा करने या उसे जारी रखने की अनुमति देने के संबंध में एक उपयुक्त आदेश कर सकेगा या न्यायालय कार्यवाहियों को रोक सकेगा। रोकादेश का प्रयोजन उक्त संरक्षित व्यक्ति की पहचान या उस नए स्थान का पता प्रकट होने को रोकना है। न्यायालय एक ओर तो सुनिश्चित करने के लिए उपाय कर सकेगा कि संरक्षित व्यक्ति के अधिकार और दायित्व अनावश्यक रूप से निर्बंधित न हो और दूसरी ओर यह कि उसकी पहचान या नया स्थान ज्ञात न होने पाए ;

(ख) यदि संरक्षित व्यक्ति को कोई दांडिक मामला फाइल करना है तो वह अपनी नई पहचान या रोकादेश के अधीन ऐसा कर सकेगा। यदि वह कोई अभियुक्त है या दांडिक मामले में कोई साक्षी है तब वह न्यायालय को अपनी वास्तविक पहचान प्रकट करने के पश्चात्, कार्यवाही को रोका जाना होगा ;

(12) न्यायालय की किसी कार्यवाही या दस्तवेज में उसकी पहचान या उसके नए स्थान का पता प्रकट नहीं किया जाएगा और न ही उसके बारे में न्यायालय से बाहर या मीडिया में कोई प्रचार किया जाएगा ;

(13) अभियोजन साक्षी द्वारा समझौता ज्ञापन का उल्लंघन किए जाने पर राज्य उस समझौता ज्ञापन को रद्द कर सकेगा।

ये, विभिन्न देशों के साक्षी सुरक्षा कार्यक्रमों में अन्तर्विष्ट सामान्य तत्व हैं।

प्रश्न यह है कि साक्षी सुरक्षा कार्यक्रमों के संबंध में हमारे देश में किस प्रक्रिया का अनुसरण किया जाए।

आगामी अध्याय (अध्याय-बारह) में, हम परामर्शी-पत्र में साक्षी सुरक्षा कार्यक्रमों के बारे में अन्तर्विष्ट प्रश्नावली पर प्राप्त प्रतिक्रियाओं का उल्लेख करेंगे।

उसके पश्चात्, इस अध्याय (अध्याय-तेरह) में, हम प्रतिक्रियाओं पर विचार करेंगे और अपनी सिफारिशें देंगे।

अध्याय- बारह

प्रश्नावली पर प्राप्त प्रतिक्रियाओं का विश्लेषण

साक्षी सुरक्षा कार्यक्रम

प्रश्न 1. क्या आप इस विचार का समर्थन करते हैं कि साक्षियों की सुरक्षा कल्याण और हितों को ध्यान में रखते हुए साक्षी सुरक्षा कार्यक्रम स्थापित किए जाने चाहिए? आस्ट्रेलिया, कनाडा, साऊथ अफ्रीका, पुर्तगाल, नीदरलैण्ड, फिलीपीन्स तथा न्यूजीलैण्ड जैसे विभिन्न देशों में ऐसे कार्यक्रम पहले से ही विद्यमान हैं।

साक्षियों की सुरक्षा, कल्याण और हितों को संरक्षित रखने के उद्देश्य से, बहुत से देशों में, उदाहरण के लिए, आस्ट्रेलिया, कनाडा, साऊथ अफ्रीका, पुर्तगाल, नीदरलैण्ड, फिलीपीन्स तथा न्यूजीलैण्ड, साक्षी सुरक्षा कार्यक्रम बनाए गए हैं। अब प्रश्न यह उठता है कि भारत में इस प्रकार के साक्षी सुरक्षा कार्यक्रम स्थापित किए जाने चाहिए ताकि साक्षी और उसके परिवार की सुरक्षा और हितों को सुनिश्चित किया जा सके।

अधिकांश प्रत्यर्थियों ने (42 मे से 40 ने) इस विचार का समर्थन किया है कि साक्षी सुरक्षा कार्यक्रम स्थापित किए जाने चाहिए। 40 प्रत्यर्थियों में से, जिन्होंने इस विचार का समर्थन किया है, 10 राज्य सरकारों से, 10 वरिष्ठ पुलिस अधिकारी, 3 न्यायाधीश, और 17 अन्य हैं। पंजाब राज्य सरकार ने, यद्यपि इस विचार का समर्थन किया है कि कार्यक्रम स्थापित किया जाना चाहिए, कहा है कि इसका लाभ किसी-किसी मामले में ही दिया जाना चाहिए। त्रिपुरा राज्य सरकार ने यह विचार व्यक्त किया है कि ऐसे सुरक्षा कार्यक्रम के कार्यन्वयन में बहुत सा लाभ अन्तर्ग्रस्त होगा, इसका वहन पूर्णतया केन्द्र सरकार द्वारा किया जाना चाहिए। तमिलनाडू ने यह मत व्यक्त किया है कि

यद्यपि साक्षी सुरक्षा कार्यक्रम अनिवार्य है परन्तु हम अन्य देशों में प्रचलित कार्यक्रमों का अनुसरण नहीं कर सकते, यदि इन्हें हमारे दश में कार्यन्वित किया जाएगा तो इससे अव्यवस्था फैल जाएगी और यह हमारे समाज के लिए बुरा होगा।

केवल 2 प्रत्यर्थियों ने इस प्रकार के साक्षी सुरक्षा कार्यक्रम का विरोध किया है। मध्यप्रदेश के पुलिस मुख्यालय से पुलिस महानिरीक्षक(अपराध अन्वेषण विभाग) ने कहा है कि कार्यक्रम के बजाए निरोधात्मक कार्यवाही को अधिक प्रभावी बनाकर, सामान्य सुरक्षा को सुदृढ़ बनाया जाना चाहिए। श्री वेपा पी. सारथी ने यह मत व्यक्त किया है कि साक्षी की निश्चित रूप से सुरक्षा की जानी चाहिए परन्तु अन्य देशों में प्रचलित कार्यक्रम भारत में सफल नहीं होंगे।

(प्रश्न 2) पहचान बदलने के साथ-साथ क्या साक्षी की सुरक्षा के लिए अन्य उपायों का भी उपबंध किया जाना चाहिए, उदाहरण के लिए-

(क) कार्यवाही में साक्षी द्वारा प्रयोग किए जाने वाले पते से भिन्न पता देना या ऐसा पता देना जो सिविल विधि में उपबंधित अधिवास स्थान से मेल न खाता हो ;

(ख) प्रक्रियात्मक कार्यवाही में कोई हस्तक्षेप न हो इस प्रयोजन से साक्षी को राजकीय वाहन में ल जाए जाने की अनुमति देना ;

(ग) न्यायालय या पुलिस परिसर में कमरादेकर उसे निगरानी और सुरक्षा में रखा जाना चाहिए ;

(घ) उसे उसके संबंधियों तथा उससे निकट संबंध रखने वाले अन्य व्यक्तियों को पुलिस संरक्षण का लाभ दिया जाना चाहिए ;

(ङ) निवास के लिए सहवासी का लाभ, जो उसे अन्य व्यक्तियों से अलग रखेगा और पृथक वाहन लाने ले जाने की व्यवस्था का लाभ दिया जाना चाहिए ;

(च) अधिकृत रूप से जारी किए गए दस्तावेजों ककी सुपुर्दगी ;

(छ) लाभार्थी की आकृति या शरीर में परिवर्तन करना ;

(ज) देश में या विदेश में किसी निश्चित अवधि के लिए किसी नए स्थान पर रहने की स्वीकृति दिया जाना ;

(झ) लाभार्थी, उसके निकट संबंधी और उनकी संपत्ति का रहने के नए स्थान के लिए निःशुल्क परिवहन ;

(ञ) भरण-पोषण के साधन प्राप्त करने के लिए शर्तों का कार्यान्वयन ;

(ट) किसी विशिष्ट अविधि के लिए भरण-पोषण भत्ता दिया जाना।

पहचान को बदलने के अतिरिक्त, कुछ अन्य उपाय भी हैं जिन्हें साक्षी सुरक्षा कार्यक्रमों में उपबंधित किया जाना चाहिए। ये उपाय (संख्या 11) प्रश्न में दिए गए है। अब प्रश्न यह कि क्या सभी उपायों में इनमें से कुछ उपाय साक्षी सुरक्षा कार्यक्रम में सम्मिलित किए जाने चाहिए?

अधिकांश प्रत्यर्थियों ने (41 में से 39 ने) यह मत व्यक्त किया है कि पहचान बदलने के अतिरिक्त, साक्षी सुरक्षा कार्यक्रमों में अन्य उपाय भी सम्मिलित किए जाने चाहिए। इन 39 प्रत्यर्थियों में से (10 राज्य सरकारों से, 9 पुलिस अधिकारी, 3 न्यायाधीश और 17 अन्य हैं) 27 का विचार है

कि प्रश्न में सुझाए गए सभी 11 उपाय (क से त तक) कार्यक्रम में सम्मिलित किए जाने चाहिए, जबकि 12 प्रत्यर्थियों का यह विचार है कि इनमें से कुछ उपाय सम्मिलित किए जाने चाहिए।

अन्ध्र प्रदेश उच्च न्यायालय के मुख्य न्यायाधीश एस.आर.के. प्रसाद ने यह मत व्यक्त किया है कि ये सभी चीजें राज्य के खर्चे पर उपलब्ध कराई जा सकती हैं परन्तु यह सब गम्भीर अपराधों के मामले में ही किया जाना चाहिए जो 10 वर्ष या उससे अधिक के कारावास से दंडनीय हों।

झारखंड राज्य सरकार, लाभार्थी के शरीर या आकृति में कोई परिवर्तन किए जाने के पक्ष में नहीं है।

पंजाब राज्य सरकार ने सुझाव दिया है कि जब कभी, साक्षी के निवास में और चेहरे की पहचान में परिवर्तन करने के द्वारा साक्षी सुरक्षा का आदेश दिया जाए तब सर्वप्रथम यह सुनिश्चित करना होगा कि ऐसा व्यक्ति किसी सिविल या दांडिक वाद में अन्तर्ग्रस्त तो नहीं है। यदि ऐसा है तब सुरक्षा दिए जाने से पूर्व किसी भी प्रकार यह मामला निपटाया जाना चाहिए अन्यथा समग्र प्रयोजन ही नष्ट हो जाएगा।

स्पेशल पुलिस कमिश्नर, नई दिल्ली ने यह सुझाव दिया है कि सुझाए गए इन उपायों के लिए बहुत सी आधारभूत सुविधाओं के कार्यान्वित किए जाने की आवश्यकता है। आदेश किए जाने से पूर्व ये सुविधाएं उपलब्ध होनी चाहिए।

पंजाब राज्य विधि आयोग का विचार है कि पहचान में साधारण परिवर्तन करना ही साक्षी की सुरक्षा के लिए पर्याप्त होगा परन्तु किसी विशिष्ट मामले में न्यायालय, प्रत्येक मामले की परिस्थितियों और तथ्यों को ध्यान में रखते हुए, प्रश्न में दिए गए अन्य उपायों को स्वीकृति भी दे सकता है।

श्री वेंगट बेद्र, अधिवक्ता और महाराष्ट्र राज्य विधि आयोग के सदस्य ने यह मत व्यक्त किया है कि ये सभी योजनाएं खर्चीली हैं, इसलिए, सुरक्षा केवल राज्य या समाज के विरूद्ध संगठित अपराधों में ही दी जानी चाहिए।

पुलिस महानिरीक्षक, मुख्यालय असम का विचार है कि पहचान में परिवर्तन किय जाना ही पर्याप्त है।

श्री वेपा पी. सारथी ने कहा हैं कि प्रत्येक सुझाव हमारे देश के लिए अव्यवहार्य हैं।

(प्रश्न 3) साक्षी सुरक्षा कार्यक्रम के कार्यन्वयन का प्रभारी निम्नलिखित में से किसे बनाया जाना चाहिए :

(क) न्यायिक अधिकारी (ख) पुलिस अधिकारी (ग) सरकारी विभाग (घ) स्वशासी निकाय

यहां प्रश्न यह है कि समस्त ससाक्षी सुरक्षा कार्यक्रम का प्रभारी किसे बनाया जाना चाहिए? क्या वह न्यायिक अधिकारी होना चाहिए या पुलिस अधिकारी या इस कार्यक्रम का कार्यान्वयन सरकार के विभाग द्वारा किसी स्वशासी निकाय द्वारा किया जाना चाहिए।

प्रत्यर्थी इस विषय में एकमत नहीं हैं। तथापि, अधिकांश (संख्या में 15) न्यायिक अधिकारी के पक्ष में हैं कि उसे ही साक्षी सुरक्षा कार्यक्रम के कार्यान्वयन का प्रभारी बनाया जाना चाहिए। इन 15 प्रत्यर्थियों में से, 4 पुलिस अधिकारी हैं, 1 राज्य सरकार, 1 उच्च न्यायालय का न्यायाधीश और 9 अन्य हैं।

11 प्रत्यर्थियों (6 राज्य सरकारें, 2 पुलिस अधिकारी तथा 3 अन्य) का विचार है कि इस कार्यक्रम का प्रभारी सरकारी विभाग होना चाहिए।

8 प्रत्यर्थियों ने, (2 पुलिस अधिकारी, 1 राज्य सरकार, 1 उच्च न्यायालय का न्यायाधीश तथा 4 अन्य) किसी स्वशासी निकाय को साक्षी सुरक्षा कार्यक्रम का प्रभारी बनाने का समर्थन किया है।

केवल 6 प्रत्यर्थी ऐसे है (2 राज्य सरकारें, 3 पुलिस अधिकारी तथा एक अधीनस्थ न्यायालय का न्यायाधीश) जिन्होंने यह विचार व्यक्त किया है कि कार्यक्रम का प्रभारी किसी पुलिस अधिकारी को बनाया जाना चाहिए।

(प्रश्न 4) क्या अभियोजन साक्षी के अतिरिक्त, प्रतिरक्षा साक्षी भी, यदि साक्षी होने के कारण से उसे जान-माल का खतरा हो, साक्षी सुरक्षा कार्यक्रम का लाभार्थी होने का पात्र होना चाहिए?

जहां तक अभियोजन साक्षी का संबंध है, वह निश्चय ही साक्षी सुरक्षा कार्यक्रम का लाभार्थी होने का पात्र है, यदि साक्षी होने के कारण से उसको जान-माल का खतरा है। परन्तु यहां प्रश्न यह है कि क्या प्रतिरक्षा साक्षी को भी, यदि उसे साक्षी होने के कारण से उसकी जान-माल का खतरा है, ऐसे कार्यक्रम का लाभार्थी होने का पात्र होना चाहिए? कतिपय मामलों में प्रतिरक्षा साक्षी को भी जान-माल का खतरा हो सकता है। प्रत्येक साक्षी, चाहे वह अभियोजन पक्ष का है या प्रतिरक्षा पक्ष का, दांडिक मामले के न्यायनिर्णय के लिए महत्वपूर्ण है।

40 में से 27 प्रत्यर्थियों ने इस विचार का समर्थन किया है कि प्रतिरक्षा साक्षी को भी, यदि साक्षी होने के कारण से उसे उसकी जान-माल का खतरा है, साक्षी सुरक्षा कार्यक्रम का लाभ प्राप्त होना चाहिए। इन 27 प्रत्यर्थियों में से, 6 राज्य सरकारों से, 6 पुलिस अधिकारी, 3 न्यायाधीश और 12 अन्य हैं।

तथापि, 13 प्रत्यर्थियों ने (3 राज्य सरकारों से, 4 पुलिस अधिकारी तथा 6 अन्य) प्रतिरक्षा साक्षी को साक्षी सुरक्षा कार्यक्रम का लाभ दिए जाने के पक्ष का समर्थन नहीं किया है।

(प्रश्न 5) क्या पुलिस अधीक्षक/पुलिस कमिश्नर को यह प्रमाणित करने की शक्ति होनी चाहिए कि उस विशिष्ट व्यक्ति या पीड़ित या साक्षी को खतरा है और वह साक्षी सुरक्षा कार्यक्रम का लाभार्थी होने का अधिकारी है? क्या ऐसे प्रमाण-पत्र की साक्षी सुरक्षा आदेश करने से पूर्व आगे विचारण न्यायाधीश द्वारा पुनरीक्षा की जानी चाहिए? कया न्यायालय में ऐसी कार्यवाहियां बंद कमरे में की जानी चाहिए?

किसी पीड़ित या साक्षी को साक्षी सुरक्षा कार्यक्रम का लाभार्थी बनाया जा सकता है, यदि साक्षी पीड़ित होने के कारण से उसके जीवन और सम्पत्ति को खतरा विद्यमान है।

अब प्रश्न यह है कि यह प्रमाणित कौन करेगा कि ऐसा खतरा विद्यमान है और यह कि साक्षी कार्यक्रम में सम्मिलित किए जाने का अधिकारी ? क्या पुलिस अधीक्षक या पुलिस कमिश्नी जैसे वरिष्ठ पुलिस अधिकारी को खतरे की विद्यमानता प्रमाणित करने की और यह प्रमाणित करने की भी शक्ति प्राप्त होनी चाहिए कि वह विशिष्ट व्यक्ति साक्षी सुरक्षा कार्यक्रम का लाभार्थी होने का अधिकारी है? एक अन्य प्रश्न यह है कि ऐसा प्रमाण-पत्र किसी व्यक्ति के कार्यक्रम में सम्मिलित किए जाने के लिए पर्याप्त है अथवा क्या प्रमाण-पत्र का साक्षी सुरक्षा आदेश किए जाने से पूर्व

विचारण न्यायाधीश द्वारा और पुनरीक्षण किया जाना चाहिए? क्या न्यायालय में कार्यवाहियों की पुनरीक्षा बंद कमरे में की जानी चाहिए?

अधिकांश प्रत्यर्थियों का (40 में से 33 का) विचार है कि पुलिस अधीक्षक या पुलिस कमिश्नर जैसे वरिष्ठ पुलिस अधिकारी को यह प्रमाणित करने की शक्ति प्राप्त होनी चाहिए कि क्या उस विशिष्ट व्यक्ति या पीड़ित या साक्षी को खतरा है और साक्षी सुरक्षा कार्यक्रम में सम्मिलित किए जाने का अधिकारी है। इन 33 प्रत्यर्थियों में 8 राज्य सरकारों से, 10 पुलिस अधिकारी, 3 न्यायाधीश और 12 अन्य व्यक्ति हैं। इन प्रत्यर्थियों में से 15 प्रत्यर्थियों ने आगे यह विचार भी व्यक्त किया है कि पुलिस अधिकारी के प्रमाण-पत्र की विचारण न्यायालय द्वारा आगे और पुनरीक्षा की जानी चाहिए, जबकि 8 प्रत्यर्थियों का दृष्टिकोण यह है कि विचारण न्यायाधीश द्वारा आगे पुनरीक्षा किए जाने की आवश्यकता नहीं है । इन 15 प्रत्यर्थियों मे से 7 ने कहा है कि न्यायालय में पुनरीक्षा की ऐसी कार्यवाहियां बंद कमरे में होनी चाहिए।

केवल 7 प्रत्यर्थियों ने (1 राज्य सरकार और 6 अन्य) यह विचार व्यक्त किया है कि पुलिस अधीक्षक या पुलिस कमिश्नर को यह प्रमाणित करन की शक्ति प्राप्त नहीं होनी चाहिए कि क्या उस विशिष्ट व्यक्ति को खतरा है और वह साक्षी सुरक्षा कार्यक्रम में सम्मिलित किए जाने का अधिकारी है।

(प्रश्न 6) क्या कार्यक्रम के अधीन सुरक्षा परिवार के सदस्यों, निकट संबंधियों तथा प्रताड़ित साक्षी के मित्रों के लिए भी प्राप्त होनी चाहिए ; यदि ऐसा है तो, कार्यक्रम में किन व्यक्तियों को सम्मिलित किया जाना चाहिए?

अक्सर यह देखा गया है कि साक्षी के अतिरिक्त, उसके परिवार के सदस्य, निकट संबंधी और कभी-कभी मित्रों को भी विरोधी पक्ष द्वारा प्रताड़ित किया जाता है। इसके अतिरिक्त, साक्षी के परिवार के सदस्य उस पर आश्रित होते हैं। प्रश्न यह उत्पन्न होता है कि क्या साक्षी सुरक्षा कार्यक्रम के अधीन परिवार के सदस्यों, निकट संबंधियों और मित्रों को भी सुरक्षा दी जानी चाहिए और ऐसे व्यक्तियों की सूची में किस-किस को सम्मिलित किया जाना चाहिए।

अधिकांश प्रत्यर्थियों ने (40 में से 38 ने) इस विचार का समर्थन किया है कि साक्षी सुरक्षा कार्यक्रम के अधीन परिवार के सदस्यों, निकट संबंधियों आदि को भी सुरक्षा दी जानी चाहिए। इन 38 प्रत्यर्थियों में से 8 राज्य सरकारों से, 10 पुलिस अधिकारी और 3 न्यायाधीश तथा 17 अन्य हैं ।

केवल दिल्ली राज्य सरकार और एक अन्य प्रत्यर्थी ने इस विचार का विरोध किया है ।

इस प्रश्न पर कि सूची में किसे सम्मिलित किया जाना चाहिए, प्रतिक्रियाओं में एकमत नहीं है। कुछ ने सुझाव दिया है कि प्रत्येक मामले के तथ्यों को ध्यान में रखते हुए, ऐसी सुरक्षा परिवार के सदस्यों, निकट संबंधियों और मित्रों को दी जा सकती है। कुछ का मत है कि सूची में माता-पिता, भाई-बहिन, पुत्र तथा पुत्रियां, पति/पत्नी को सम्मिलित किया जा सकेगा।

(प्रश्न 7) क्या साक्षी सुरक्षा कार्यक्रम के कार्यन्वयन के लिए केन्द्र तथा राज्य सरकार दोनों के द्वारा आवश्यक निधियां उपलब्ध कराई जानी चाहिए?

साक्षी सुरक्षा कार्यक्रम के कार्यान्वयन के लिए बड़ी धनराशि की आवश्यकता होगी । ऐसी परिस्थिति में यह सुझाव दिया गया है कि साक्षी सुरक्षा कार्यक्रम के कार्यान्वयन के लिए केन्द्र तथा राज्य सरकार दोनों की ओर से ही आवश्यक निधियां उपलब्ध कराई जानी चाहिए। क्योंकि न्याय

प्रशासन भारतीय संविधान की 7वीं अनुसूची की समवर्ती सूची की प्रविष्टि 11क के अन्तर्गत आता है, इसलिए, यह केन्द्र तथा राज्य सरकारों दोनों का उत्तरदायित्व है।

40 मे से 31 प्रत्यर्थियों ने इस दृष्टिकोण से सहमति व्यक्त की है कि आवश्यक निधियां केन्द्र तथा राज्य सरकार दोनों के द्वारा ही उपलब्ध कराई जानी चाहिए। इन 31 प्रत्यर्थियों में से 6 प्रत्यर्थी राज्य सरकारों से, 8 पुलिस अधिकारी, 3 न्यायाधीश और 14 अन्य हैं। बिहार राज्य सरकार तथा संघ राज्यक्षेत्र लक्षद्वीप प्रशासन ने सुझाव दिया है कि केन्द्र सरकार को कार्यक्रम पर आने वाले 75 प्रतिशत व्यय की पूर्ति करनी चाहिए।

उडीसा, पश्चिम बंगाल, त्रिपुरा राज्य सरकारों ने यह विचार व्यक्त किया है कि केन्द्र सरकार द्वारा समस्त धनराशि उपलब्ध कराई जानी चाहिए। इसी प्रकार का विचार पुलिस महानिदेशक पंजाब और मणिपुर ने भी व्यक्त किया है।

इसके विपरीत, 9 प्रत्यर्थियों ने यह सुझाव दिया है कि इस कार्यक्रम का वित्तपोषण राज्य सरकार द्वारा किया जाना चाहिए।

(प्रश्न 8) क्या कार्यक्रम में सम्मिलित किए जाने वाले साक्षी को कार्यक्रम के प्रभारी के साथ एक समझौता ज्ञापन पर हस्ताक्षर करने होंगे जिसमें साक्षी तथा कार्यक्रम के प्रभारी के अधिकार दायित्व और निर्बंधन उपवर्णित किए जाएंगे? ऐसे अधिकारों और दायित्वों का प्रवर्तन किस प्रकार के साधनों से किया जाएगा ?

अधिकांश देशों में, जहां साक्षी सुरक्षा कार्यक्रम विद्यमान है, यह उपबंध है कि उस साक्षी को जिसे कार्यक्रम में सम्मिलित किया जाता है, कार्यक्रम के प्रभारी के साथ एक समझौता ज्ञापन पर हस्ताक्षर करने होते हैं। इस समझौता ज्ञापन में साक्षी तथा कार्यक्रम के प्रभारी के अधिकार,

दायित्व और निर्बंधन का उल्लेख किया जाता है। क्या हमारे देश में कोई साक्षी, जिसे इस कार्यक्रम में सम्मिलित किया जाएगा, इस प्रकार के समझौता ज्ञापन पर हस्ताक्षर करेगा? इसके अतिरिक्त, अधिकारों और दायित्वों का प्रवर्तन किन साधनों से किया जाएगा?

अधिकांश प्रत्यर्थियों ने (37 में से 29 ने) इस विचार का समर्थन किया है कि उस साक्षी को, जिसे साक्षी सुरक्षा कार्यक्रम में सम्मिलित किया जा रहा है, कार्यक्रम के प्रभारी के साथ समझौता ज्ञापन पर हस्ताक्षर करने की आवश्यकता होगी जिसमें साक्षी के कार्यक्रम के प्रभारी के अधिकारों, दायित्वों और निर्बंध्नों का उल्लेख किया जाएगा। इनमें से 6 प्रत्यर्थी राज्य सरकारों से, 9 पुलिस अधिकारी, 3 न्यायाधीश और 11 अन्य हैं ।

इस प्रश्न के उत्तर में कि इन अधिकारों और दायित्वों का प्रवर्तन किस प्रकार से किया जाएगा, विभिन्न विकल्पों का सुझाव दिया गया है। झारखंड राज्य सरकार ने सुझाव दिया है कि एक विशेष अधिनियम बनाया जा सकता है जिसमें समझौता ज्ञापन का उल्लंघन करने के लिए दंड का उपबंध करने वाला उपबंध किया जा सकेगा। हरियाणा के पुलिस महानिदेशक ने सुझाव दिया है कि कार्यक्रम में सम्मिलित किए जाने वाले व्यक्ति से दस्तावेजों या सम्पत्ति के हक के रूप में कोई प्रतिभूति ली जा सकेगी। ऐसा व्यक्ति न्यायालय के माध्यम से अपने अधिकारों का प्रवर्तन करा सकेगा। गोवा के पुलिस महानिदेशक का विचार है कि ऐसे अधिकारों और दायित्वों के प्रवर्तन के लिए कुछ नियम बनाने होंगे। पंजाब के पुलिस महानिदेशक ने सुझाव दिया है कि ऐसे अधिकारों और दायित्वों के प्रवर्तन के लिए दंड प्रक्रिया संहिता, 1973 में संशोधन किया जाना चाहिए। बम्बई उच्च न्यायालय के न्यायमूर्ति अनूप वी मोहता ने यह विचार व्यक्ति किया है कि निर्बंधनों और दायित्वों का उल्लंघन करने के लिए कडा दंड दिया जाना चाहिए। मध्य प्रदेश के एक सेवानिवृत्त पुलिस महानिदेशक ने दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 446 में संशोधन करने का सुझाव दिया है।

केवल 8 प्रत्यर्थियों (2 राज्य सरकार, 1 पुलिस अधिकारी तथा 5 अन्य)ने साक्षी सुरक्षा कार्यक्रम में सम्मिलित किए जाने वाले व्यक्ति के लिए समझौता ज्ञापन की आवश्यकता का विरोध किया है।

(प्रश्न 9) जब किसी व्यक्ति की पहचान बदल दी जाती है और वह बाद में किसी अन्य सिविल कार्यवाही में वादी, प्रतिवादी या साक्षी के रूप में एक पक्षकार बन जाता है तब क्या उन कार्यवाहियों को अस्थायी रूप में निलम्बित कर दिया जाना चाहिए और ऐसी कार्यवाहियों का संरक्षित किया जाना, विचारण और निर्णय न्यायालय आदेश के अध्यधीन होना चाहिए?

यह एक महत्वपूर्ण विषय है। जब न्यायालय किसी व्यक्ति के लिए अनामता स्वीकृत कर देता है और इस कारण से उसकी पहचान बदल दी जाती है, और बाद में यदि किसी सिविल कार्यवाही में वह पक्षकार या साक्षी हो जाता है तब प्रश्न यह उठता है कि बाद की ऐसी सिविल कार्यवाही में उसे किस प्रकार पहचाना जाना चाहिए। यदि उसकी वास्तविक पहचान ज्ञात कराई जाती है तो उसे अनामता प्रदान करने का समस्त प्रयोजन ही परास्त हो जाएगा। यह सुझाव दिया गया है कि बाद की सिविल कार्यवाही को अस्थायी रूप से निलम्बित किया जा सकता है और सिविल न्यायालय ऐसी कार्यवाहियों के संस्थित किए जाने, विचारण अथवा निर्णय के बारे में आदेश पारित कर सकेगा। साऊथ अफ्रीका के, साक्षी सुरक्षा अधिनियम, 1998 की धारा 15 में ऐसा ही उपबंध विद्यमान है। इसमें यह उपबंध है कि किसी सिविल कार्यवाही में, जहां कोई संरक्षित व्यक्ति एक पक्षकार है या साक्षी है वहां वह कार्यवाही उच्च न्यायालय के आदेशानुसार चलेगी और ऐसा आदेश एकपक्षीय आवेदन न्यायाधीश द्वारा अपने चैम्बर में ही किया जा सकेगा। उच्च न्यायालय उन

सिविल कार्यवाहियों के संस्थित किए जाने, परिचालन या स्थगित किए जाने के बारे में समुचित आदेश कर सकेगा।

37 में से 30 प्रत्यर्थियों ने बाद वाली सिविल कार्यवाहियों को अस्थायी रूप से निलम्बित किए जाने और उनका संस्थित किया जाना, विचारण और निर्णय न्यायालय के आदेश के अध्यधीन रखे जाने पर सहमति व्यक्त की है। इन 30 प्रत्यर्थियों में 7 राज्य सरकारों से, 9 पुलिस अधिकारी, 1 न्यायाधीश तथा शेष 13 अन्य व्यक्ति हैं।

पश्चिम बंगाल सरकार ने यह विचार व्यक्त किया है कि ऐसे मामलों में साक्षी अपने वास्तविक नाम से कार्यवाही कर सकेगा या उसके विरूद्ध कार्यवाही की जा सकेगी।

स्पेशल कमिश्नर, पुलिस मुख्यालय, नई दिल्ली ने सुझाव दिया है कि ऐसे व्यक्तियों के लिए साक्षी सुरक्षा की आवश्यकता नहीं है।

आन्ध्र प्रदेश उच्च न्यायालय के माननीय न्यायाधीश सी.आर.के. प्रसाद ने सुझाव दिया है कि ऐसी सिविल कार्यवाहियां बंद कमरे में होनी चाहिए।

न्यायमूर्ति अनूप वी मोहता ने यह विचार व्यक्त किया है कि समान्यताया ऐसी सिविल कार्यवाही निलम्बित नहीं की जानी चाहिए। परन्तु केवल आपवादिक परिस्थितयों में ऐसी कार्यवाही न्यायालय के आदेश के अधीन निलम्बित की जा सकेंगी ।

3 प्रत्यर्थियों (1 बिहार राज्य सरकार तथा 2 अन्य)ने सिविल कार्यवाहियों के निलम्बन का समर्थन नहीं किया है।

(प्रश्न 10) जब किसी व्यक्ति की पहचान बदल दी जाती है और वह अपनी पहली पहचान के अधीन किसी अन्य दांडिक कार्यवाही में अभियुक्त या साक्षी है तब क्या ऐसे मामले में साक्षी सुरक्षा कार्यक्रम के प्रभारी को अभियोजक, न्यायाधीश या मजिस्ट्रेट और या प्रतिरक्षा वकील को उसकी पहचान प्रकट करने के लिए प्राधिकृत किया जाना चाहिए?

यह भी एक महत्वपूर्ण विषय है। यह ऐसी परिस्थिति से संबंधित है जहां किसी व्यक्ति की पहचान बदल दी जाती है और ऐसा व्यक्ति अपनी पूर्व की पहचान के अधीन किसी दांडिक कार्यवाही में अभियुक्त या कोई साक्षी है। ऐसे मामलों में, क्या साक्षी सुरक्षा कार्यक्रम के प्रभारी का संरक्षित व्यक्ति को पहचान अभियोजक, न्यायाधीय, मजिस्ट्रेट और/या प्रतिरक्षा के वकील के समक्ष प्रकट करने के लिए प्राधिकृत किया जाना चाहिए? साऊथ अफ्रीका के साक्षी सुरक्षा अधिनियम, 1998 की धारा 17(5) के अनुसार साक्षी सुरक्षा कार्यक्रम का निदेशक किसी दांडिक कार्यवाही में संरक्षित व्यक्ति की पहचान प्रकट करने के लिए प्राधिकृत है। नेशनल केपिटल टैरिटरी ऑफ आस्ट्रेलिया के साक्षी सुरक्षा अधिनियम, 1996 में भी ऐसा ही उपबंध विद्यमान है।

38 में से 26 प्रत्यर्थियों ने इस सुझाव से सहमति व्यक्त की है कि साक्षी सुरक्षा कार्यक्रम के प्रभारी को संरक्षित व्यक्ति की पहचान प्रकट करने के लिए प्राधिकृत किया जाना चाहिए यदि ऐसा संरक्षित व्यक्ति किसी अन्य दांडिक कार्यवाही में अपनी पूर्वकालिक पहचान के अधीन अभियुक्त या कोई साक्षी है। तथापि, बहुत से प्रत्यर्थियों का विचार है कि पहचान संबंधित न्यायाधीश या मजिस्ट्रेट के समक्ष प्रकट की जानी चाहिए परन्तु प्रतिरक्षा साक्षी को नहीं। इन 26 प्रत्यर्थियों में, जिन्होंने उपर्युक्त सुझाव का समर्थन किया है, 7 राज्य सरकारों से, 7 वरिष्ठ पुलिस अधिकारी, 1 उच्च न्यायालय का न्यायाधीश और शेष 11 अन्य व्यक्ति हैं।

विशेष पुलिस कमिश्नर, नई दिल्ली का विचार है कि ऐसे मामलों में ऐसे व्यक्तियों को सुरक्षा नहीं दी जानी चाहिए।

11 प्रत्यर्थियों (2 राज्य सरकारों ने, 2 पुलिस अधिकारी, 2 न्यायाधीश और 5 अन्य) ने कार्यक्रम के प्रभारी को संरक्षित व्यक्ति की पहचान प्रकट करने के लिए प्राधिकृत किए जाने का सुझाव का विरोध किया है यदि ऐसा संरक्षित व्यक्ति किसी अन्य दांडिक कार्यवाही में अभियुक्त या साक्षी है।

(प्रश्न 11) जिस न्यायालय द्वारा सुरक्षा की स्वीकृति दी गई है उसके द्वारा प्राधिकृत किए गए बिना ही किसी व्यक्ति द्वारा संरक्षित व्यक्ति की पहचान प्रकट किया जाना दंडनीय ठहराया जाना चाहिए; यदि हां, क्या दंड विहित किया जाना चाहिए?

यह प्रश्न ऐसे व्यक्ति के बारे में जो न्यायालय द्वारा प्राधिकृत किए गए बिना ही किसी संरक्षित व्यक्ति की पहचान प्रकट कर देता है। क्या ऐसा व्यक्ति दंडनीय होना चाहिए ? और यदि इसका उत्तर सकारात्मक है तो ऐसे व्यक्ति को क्या दंड दिया जाना चाहिए?

सभी 40 प्रत्यर्थियों ने, जिन्होंने इस प्रश्न का उत्तर दिया है, इस सुझाव से सहमति व्यक्त की है कि यदि कोई न्यायालय द्वारा प्राधिकृत किए गए बिना ही संरक्षित व्यक्ति की पहचान प्रकट करता है तो, वह ऐसे प्रकटन के लिए दंडनीय होना चाहिए। क्या दंड दिया जाना चाहिए इस विषय में अधिकांश प्रतिक्रियाओं में यही सुझाव दिया गया है कि दंड कठोर होना चाहिए। कारावास की अवधि और जुर्माने की राशि के बारे में मतैक्य नहीं है। इसके लिए 3 माह के कारावास से 7 वर्ष तक के कारावास का सुझाव दिया गया है। इसी प्रकार, जुर्माने की राशि के लिए 5000/- रूपए से लेकर 50,000/- रूपए तक के सुझाव दिए गए हैं।

(प्रश्न 12) क्या आप इस विचार का समर्थन करते हैं कि कार्यक्रम में सम्मिलित किया गया कोई साक्षी बिना किसी उचित कारण के साक्ष्य देने में असफल रहता है या साक्ष्य देने से इंकार करता है तो न्यायालय को अवमानना के लिए अभियोजित किया जाना चाहिए और सुरक्षा आदेश रद्द कर दिया जाना चाहिए?

साक्षी सुरक्षा कार्यक्रम का मुख्य प्रयोजन साक्षियों की सुरक्षा करना है ताकि वे न्यायालय में साक्ष्य देने के लिए आगे आ सकें। मामले में न्याय करने के लिए उनका साक्ष्य आवश्यक है। यदि कोई साक्षी किसी उचित कारण के बिना ही साक्ष्य देने में असफल रहता है या साक्ष्य देने से इंकार करता है तब क्या उसे न्यायालय की अवमानना के लिए अभियोजित नहीं किया जाना चाहिए? क्या उसका सुरक्षा आदेश रद्द नहीं किया जाना चाहिए?

40 में से 32 प्रत्यर्थियों (7 राज्य सरकारें, 7 पुलिस अधिकारी, 2 न्यायाधीश और 17 अन्य) ने इस विचार का समर्थन किया है कि जहां कोई ऐसा साक्षी, जिसे साक्षी सुरक्षा कार्यक्रम में सम्मिलित किया गया है, बिना किसी उचित कारण के साक्ष्य देने में असफल रहता है, उसे न्यायालय की अवमानना के लिए अभियोजित किया जाना चाहिए और उसका सुरक्षा आदेश रद्द कर दिया जाना चाहिए।

2 राज्य सरकारों, 2 पुलिस अधिकारियों, उच्च न्यायालय के एक न्यायाधीश ने यह विचार व्यक्त किया है कि ऐसी स्थिति में केवल सुरक्षा आदेश रद्द कर दिया जाना चाहिए और ऐसे साक्षी को न्यायालय की अवमानना के लिए अभियोजित किए जाने की आवश्यकता नहीं है।

तथापि, दो प्रत्यर्थियों ने उपर्युक्त विचार का तनिक भी समर्थन नहीं किया है।

(प्रश्न 13) किसी व्यक्ति को साक्षी सुरक्षा कार्यक्रम में सम्मिलित करने या न करने के निर्णय के विरूद्ध अपील की जानी चाहिए? विलम्ब से बचने के लिए क्या ऐसी अपील सीधे उच्च न्यायालय में की जानी चाहिए?

यह विषय इस प्रश्न से संबंधित है कि किसी व्यक्ति को साक्षी सुरक्षा कार्यक्रम में सम्मिलित करने या न करने के आदेश के विरूद्ध क्या अपील करने का अधिकार होना चाहिए? यदि अपील करने के अधिकार की आवश्यकता है तो ऐसी अपील किस न्यायालय में की जानी चाहिए? विलम्ब से बचने के लिए यह सुझाव दिया गया है कि ऐसी अपील सीधे उच्च न्यायालय में की जानी चाहिए।

27 प्रत्यर्थियों (38 में से) ने यह विचार व्यक्त किया है कि साक्षी सुरक्षा कार्यक्रम में किसी व्यक्ति को सम्मिलित करने या न करने के आदेश के विरूद्ध अपील करने का अधिकार होना चाहिए। पश्चिम बंगाल राज्य सरकार को छोडकर अन्य सभी ने इस सुझाव से सहमति व्यक्त की है कि अपील उच्च न्यायालय में फाइल की जानी चाहिए। बहुत से प्रत्यर्थियों ने यह मत व्यक्त किया है कि ऐसी अपील एक निर्धारित समय सीमा में निपटाई जानी चाहिए। इन 27 प्रत्यर्थियों में, 5 राज्य सरकारों से, 8 पुलिस अधिकारी, 2 न्यायाधीश तथा 12 अन्य व्यक्ति हैं।

उड़ीसा और मणिपुर राज्य सरकारों ने तथा एस.ए.आर.आई. नामक संगठन ने यह मत व्यक्त किया है कि अपील करने का अधिकार तभी होना चाहिए जब कार्यक्रम में सम्मिलित न किए जाने का आदेश किया गया हो, कार्यक्रम में सम्मिलित किए जाने के आदेश के विरूद्ध नहीं।

8. प्रत्यर्थियों (2 राज्य सरकारों से, 2 पुलिस अधिकारी, उच्च न्यायालय के एक न्यायाधीश तथा 3 अन्य) ने कार्यक्रम में सम्मिलित किए जाने या न किए जाने के आदेश के विरूद्ध अपील का उपबंध किए जाने का विरोध किया है।

(प्रश्न 14) क्या साक्षी सुरक्षा कार्यक्रम के बारे में आपके कोई अन्य सुझाव हैं?

बहुत से प्रत्यर्थियों ने अपने सुझाव दिए हैं। परन्तु उनमें अधिक सार नहीं है। इसलिए, उनके बारे में यहां चर्चा नहीं की जा रही है।

अध्याय-बारह

प्रश्नावली - प्रतिक्रियाओं पर चर्चा - सिफारिशें

हमने अध्याय-ग्यारह में प्रश्नावली के साक्षी सुरक्षा कार्यक्रम से संबंधित प्रश्नों पर प्राप्त हुई प्रतिक्रियाओं का विस्तार से विश्लेषण किया है। इस अध्याय में हमारा प्रस्ताव प्रतिक्रियाओं पर चर्चा करने और अपनी सिफारिशें देने का है।

(1) प्रश्न यह है कि क्या न्यायालय से बाहर साक्षी की सुरक्षा के लिए साक्षी सुरक्षा कार्यक्रम स्थापित किए जाने चाहिए।

जैसाकि पिछले अध्याय में कहा गया है, लगभग सभी प्रत्यर्थियों ने (दो के सिवाय) साक्षी सुरक्षा कार्यक्रम आरम्भ किए जाने का समर्थन किया है। कुछ प्रत्यर्थियों ने यह सुझाव दिया है कि जबकि वे सभी उपाय जो अन्य देशों में प्रवर्तन में हैं, हमारे देश के लिए व्यवहार्य नहीं हैं, परन्तु कतिपय महत्वपूर्ण उपायों को लागू किया जा सकता है। परन्तु यह सुझाव दिया गया है कि कार्यक्रम केवल गम्भीर अपराधों के लिए ही सीमित होने चाहिए।

उत्तर :

हमारे विचार में, हमारे देश के लिए साक्षी सुरक्षा कार्यक्रम आवश्यक हैं और इन्हें गम्भीर अपराधें के मामलों के लिए सीमित रखा जा सकेगा तथा ये पीड़ित और अभियोजन साक्षियों के लिए समान रूप से लागू होने चाहिए। हमारे विचार में, इन्हें सेशन न्यायालयों या समान स्तरीय न्यायालयों या विशिष्ट न्यायालयों द्वारा विचारणीय मामलों के लिए ही, जहां न्यायालय से बाहर साक्षी की सुरक्षा आवश्यक समझी जाए, सीमित किया जा सकता है। ऐसा विनिश्चय, अन्वेषण अभिकरण या लोक अभियोजक द्वारा आवेदन किए जाने पर, मजिस्ट्रेट के न्यायालय द्वारा किया

जाना चाहिए। यह बात स्पष्ट है कि साक्षी सुरक्षा कार्यक्रमों के लिए वित्त व्यवस्था किए जाने की आवश्यकता है और जब तक केन्द्र/राज्य सरकार व्यय की पूर्ति के लिए तैयार नहीं होतीं तब तक इन कार्यक्रमों को आरम्भ नहीं किया जा सकता।

यह बात ठीक है, यदि पहचान को संरक्षण दिया जाता है और अन्य सुरक्षा उपाय (प्रश्न 2 में निर्दिष्ट) नहीं किए जाते तो, व्यय की सूची में लिखा जा सकेगा।

हमने परामर्शी-पत्र के पैरा 7.7.5 में कहा है कि अमरीका में यह कार्यक्रम आरम्भ किए जाने के पश्चात् "सुरक्षित साक्षी अभिसाक्ष्य के परिणामस्वरूप दोषसिद्धि की दर 89 प्रतिशत तक पहुंच गई है" । यदि संघ तथा राज्य सरकारें चाहती हैं कि दोषसिद्धि की दर में वृद्धि हो तो उन्हें आगे आकर साक्षी सुरक्षा कार्यक्रम के लिए आवश्यक धनराशि नियत करनी होगी।

(प्रश्न 2) पहचान बदलने के साथ-साथ क्या साक्षी की सुरक्षा के लिए अन्य उपायों का भी उपबंध किया जाना चाहिए, उदाहरण के लिए-

(क) कार्यवाही में साक्षी द्वारा प्रयोग किए जाने वाले पते से भिन्न पता देना या ऐसा पता देना जो सिविल विधि में उपबंधित अधिवास स्थान से मेल न खाता हो ;

(ख) प्रक्रियात्मक कार्यवाही में कोई हस्तक्षेप न हो इस प्रयोजन से साक्षी को राजकीय वाहन में ल जाए जाने की अनुमति देना ;

(ग) न्यायालय या पुलिस परिसर में कमरादेकर उसे निगरानी और सुरक्षा में रखा जाना चाहिए ;

(घ) उसे उसके संबंधियों तथा उससे निकट संबंध रखने वाले अन्य व्यक्तियों को पुलिस संरक्षण का लाभ दिया जाना चाहिए ;

(ङ) निवास के लिए सहवासी का लाभ, जो उसे अन्य व्यक्तियों से अलग रखेगा और पृथक वाहन लाने ले जाने की व्यवस्था का लाभ दिया जाना चाहिए ;

(च) अधिकृत रूप से जारी किए गए दस्तावेजों की सुपुर्दगी ;

(छ) लाभार्थी की आकृति या शरीर में परिवर्तन करना ;

(ज) देश में या विदेश में किसी निश्चित अवधि के लिए किसी नए स्थान पर रहने की स्वीकृति दिया जाना ;

(झ) लाभार्थी, उसके निकट संबंधी और उनकी संपत्ति का रहने के नए स्थान के लिए निःशुल्क परिवहन ;

(ञ) भरण-पोषण के साधन प्राप्त करने के लिए शर्तों का कार्यान्वयन ;

(ट) किसी विशिष्ट अविधि के लिए भरण-पोषण भत्ता दिया जाना।

उपर्युक्त उपायों के बारे में, प्रतिक्रियाओं में कहा गया था कि पहचान बदलना ही पर्याप्त है परन्तु जहां परिस्थितियों के अनुसार आवश्यक हो, वहां (क) से (त) तक अन्य उपाय भी किए जा सकते हैं। जैसाकि ऊपर कहा गया है, इस विषय में सहमति है कि कार्यक्रम सेशन न्यायालय द्वारा विचारणीय अपराधों के आपवादिक मामलों के लिए ही सीमित रहने चाहिए। हमने इन प्रतिक्रियाओं के बारे में विस्तार से विचार किया है।

(क) हमारे विचार में, संबंधित साक्षी को भिन्न पहचान दी जा सकेगी अर्थात् उसे (स्त्री/पुरूष) अंग्रेजी वर्णमाला के किसी अक्षर से वर्णित किया जा सकेगा और उसकी पहचान (स्त्री/पुरूष) गोपनीय रखी जा सकेगी । यदि साक्षी का कोई कथन अभिलिखित किया जाता है, उसका नाम और पता, अन्वेषण अभिकरण और मजिस्ट्रेट क सिवाय, जो कार्यक्रम के अधीन सुरक्षा दिए जाने के आवेदन की सुनवाई करता है, किसी को भी प्रकट नहीं किया जाना चाहिए।

यदि साक्षी सुरक्षा कार्यक्रम में पहचान संरक्षण के अतिरिक्त और कोई सुविधा नहीं दी जाती है तो, इस पर बहुत अधिक व्यय नहीं आएगा और बडी धनराशि के नियतन की आवश्यकता नहीं पड़ेगी। ऐसी सुरक्षा और इस रिपोर्ट के भाग-एक में चर्चा की गई सुरक्षा के बीच अन्तर केवल इतना है कि कार्यक्रम के अधीन दिया गया संरक्षण, विभिन्न परिस्थितियों में, न्यायालय से बाहर के लिए आशयित है जबकि भाग-एक के अधीन पहचान संरक्षण का निर्देश पुलिस अधिकारी के समक्ष अन्वेषण के दौरान और न्यायालय जांच तथा विचारण के दौरान के बार में किया गया है।

कार्यक्रम के अधीन पहचान संरक्षण स्वीकृत करते समय, मजिस्ट्रेट द्वारा अभियुक्त को नोटिस दिए जाने की आवश्यकता नहीं है। पुलिस सुसंगत सामग्री मजिस्ट्रेट के समक्ष प्रस्तुत कर सकेगी या मजिस्ट्रेट साक्षी का कथन - उसकी (स्त्री/पुरूष) पहचान गोपनीय रखते हुए - अभिलिखित कर सकेगा और इस संबंध में आदेश पारित कर सकेगा और यह नई पहचान सभी संव्यवहारों और कार्यवाहियों के लिए, न्यायालय के बाहर भी, जारी रहेगी।

(ख) जहां पहचान संरक्षण के अतिरिक्त, स्थान बदलने, भरण-पोषण की व्यवस्था करने, स्थान और परिवहन का प्रबंध जैसे उपायों के लिए भी स्वीकृति दी जाती है, यह व्यवस्था प्रभावी होगी परन्तु इसके लिए केन्द्र/राज्य सरकार को कार्यक्रम के लिए पर्याप्त धनराशि उपलब्ध करानी होगी।

वास्तव में, ऐसे थोडे से ही गम्भीर मामले होंगे जहां पहचान संरक्षण के अतिरिक्त, उपर्युक्त (क) से (ट) तक अन्य उपाय आवश्यक हो सकेंगे। यह सुझाव नहीं दिया जा सकता कि ऐसे मामले ही नहीं होंगे जहां (क) से (ट) तक के उपायों की व्यवस्था करनी होगी।

इसलिए, हमारे विचार में, यह निश्चित है कि कार्यक्रम में पहचान संरक्षण के अतिरिक्त, जहां आवश्यक हो, अन्य उपायों का भी उपबंध किया जाना चाहिए यद्यपि ऐसे उपाय सेशन न्यायालय द्वारा विचारणीय गम्भीर अपराधों के मामलों में भी आपवादिक मामलों के लिए ही सीमित होंगे।

अतः उपयुक्त मामलों के लिए, उनकी संख्या जितनी भी अल्प हो, ऐसे अन्य उपयों के लाभों से वंचित रखना संभव नहीं है।

इसलिए, हम सिफारिश करते हैं कि उपर्युक्त निर्दिष्ट (क) से (ट) तक के उपाय कार्यक्रम का भाग होने चाहिए और उनके लिए संघ तथा राज्य सरकारों द्वारा पर्याप्त धनराशि का नियतन किया जाना चाहिए।

(प्रश्न 3) समस्त साक्षी सुरक्षा कार्यक्रम के कार्यान्वयन का प्रभारी निम्नलिखित में से किसे बनाया जाना चाहिए :

(क) न्यायिक अधिकारी (ख) पुलिस अधिकारी (ग) सरकारी विभाग (घ) स्वशासी निकाय ।

इस प्रश्न पर प्राप्त प्रतिक्रियाओं में, मतैक्य नहीं था। तथापि, 15 प्रतिक्रियाओं में यह सुझाव दिया गया था कि कार्यान्वयन का कार्य न्यायिक अधिकारी को दिया जाना चाहिए। इन 15 प्रतिक्रियाओं में 4 पुलिस अधिकारी, 1 राज्य सरकार, उच्च न्यायालय का एक न्यायाधीश तथा 9 अन्य से प्राप्त हुई थीं। 6 राज्य सरकारों, 2 पुलिस अधिकारियों तथा 3 अन्य में यह सुझाव दिया गया था कि सरकारी विभाग इस कार्यक्रम का प्रभारी होना चाहिए। 2 पुलिस अधिकारी, एक राज्य सरकार, एक उच्च न्यायालय के न्यायाधीश ति 4 अन्य, कुल 8 ने यह सुझाव दिया कि यह प्रभार

स्वशासी निकाय को दिया जाना चाहिए। 6 प्रत्यर्थियों (2 राज्य सरकार, 3 पुलिस अधिकारी, एक विचारण न्यायाधीश) ने यह सुझाव दिया है कि प्रभारी पुलिस अधिकारी होना चाहिए।

साक्षी सुरक्षा कार्यक्रम में, अन्तिम नियंत्रण न्यायिक अधिकारी के पास होना चाहिए। पुलिस द्वारा यह निर्णय किया जा सकेगा कि किस साक्षी को साक्षी सुरक्षा कार्यक्रम में सम्मिलित किए जाने की आवश्यकता है परन्तु इसका निर्णय मजिस्ट्रेट द्वारा किया जाना चाहिए कि क्या उस साक्षी को कार्यक्रम में सम्मिलित किए जाने की आवश्यकता है। भिन्न पहचान, स्थान बदलने, भरण-पोषण, परिवहन और स्थान आदि पर आने वाला व्यय का वहन संयुक्त रूप से केन्द्र तथा राज्य सरकारों द्वारा किया जाना चाहिए क्योंकि हम भारतीय दंड संहिता, 1960, जो केन्द्रीय अधिनियम है, में सूचीबद्ध किए गए गम्भीर अपराधों के बारे में विचार कर रहें हैं यद्यपि, ऐसे अपराध राज्यों के क्षेत्रों में ही किए जाते हैं।

उच्च न्यायालय का मुख्य न्यायाधीश साक्षी सुरक्षा कार्यक्रम का मुख्य संरक्षक होना चाहिए और राज्य विधिक सहायता प्राधिकरण के माध्यम से, जो प्रत्येक उच्च न्यायालय के लिए गठित की जाती है और जिसका प्रधान भी उच्च न्यायालय का न्यायाधीश होता है, निधियों का उपयोग कर सकेगा। जब कभी कोई मजिस्ट्रेट जिला पुलिस अधीक्षक या पुलिस कमिश्नर या लोक अभियोजक के आवेदन पर, साक्षी सुरक्षा कार्यक्रम में किसी साक्षी को सम्मिलित करने का आदेश पारित करता है तब वह आदेश राज्य विधिक सहायता प्राधिकरण को सम्प्रेषित किया जाना चाहिए और प्राधिकरण द्वारा आदेश के कार्यन्वयन के प्रयोजन से धनराशि उपलब्ध कराने हेतु जिला विधिक सेवा प्राधिकरण को समुचित निदेश देने चाहिए। राज्य विधिक सहायता प्राधिकरण को नियत की गई धनराशि में से कुछ राशि साक्षी सुरक्षा कार्यक्रमों के वित्तपोषण के लिए अलग रखी जानी चाहिए।

इस प्रयोजन से, यदि आवश्यक हो, विधिक सेवाएं प्राधिकरण अधिनियम, 1987 में संशोधन किया जा सकेगा जिसमें ऐसा उपबंध किया जा सकेगा कि उच्च न्यायालय का मुख्य न्यायाधीश कार्यक्रम का मुख्य संरक्षक होगा और यह कि राज्य विधिक सहायता प्राधिकरण और जिला विधिक सहायता प्राधिकरण, सरकारों द्वारा इस प्रयोजन के लिए नियत की गई निधियों के प्रशासन सहित साक्षी सुरक्षा कार्यक्रम के अधीन उन्हें सौंपी गई शक्तियों का उपयोग और कर्त्तव्यों का निष्पादन करेंगे।

(प्रश्न 4) क्या अभियोजन साक्षी के अतिरिक्त, प्रतिरक्षा साक्षी को भी, यदि साक्षी होने के कारण से उसे जान-माल का खतरा है, इस कार्यक्रम में सम्मिलित किए जाने का पात्र होना चाहिए?

40 में से 27 प्रत्यर्थियों ने इस विचार का समर्थन किया है कि प्रतिरक्षा साक्षियों को भी, यदि उनके जीवन और सम्पत्ति को खतरा है, कार्यक्रमों में सम्मिलित किया जाना चाहिए। इनमें से 6 राज्य सरकारें, 6 पुलिस अधिकारी और 3 न्यायाधीश तथा 12 अन्य व्यक्ति हैं। शेष प्रत्यर्थियों ने इस विचार का समर्थन नहीं किया है।

कार्यक्रम का लाभ प्रतिरक्षा साक्षियों को भी दिया जा सकता है क्योंकि साक्षियों को इस कार्यक्रम में सम्मिलित करने का आधार भी यही है कि उन्हें उनकी जान-माल का खतरा है।

परन्तु कार्यक्रम के वित्तपोषण के बारे में कुछ कठिनाईयां हैं, इसलिए, वर्तमान में, इस कार्यक्रम को सेशन न्यायालय द्वारा विचारणीय अपराधों के मामलों में अभियोजन साक्षी और पीड़ितों के लिए सीमित रखा जा सकता है।

(प्रश्न 5) क्या पुलिस अधीक्षक/पुलिस कमिश्नर को यह प्रमाणित करने की शक्ति प्राप्त होनी चाहिए कि किसी विशिष्ट व्यक्ति या पीड़ित या साक्षी को खतरा है और उसे साक्षी सुरक्षा कार्यक्रम में सम्मिलित किया जाना चाहिए? क्या ऐसे प्रमाण-पत्र की साक्षी सुरक्षा का आदेश किए जाने से पूर्व विचारण न्यायाधीश द्वारा पुनरीक्षा की जानी चाहिए?

40 में से 33 प्रतिक्रियाओं में यह विचार व्यक्त किया गया था कि सुरक्षा की आवश्यकता के बारे में प्रमाणित करने की शक्ति पुलिस अधीक्षक/पुलिस कमिश्नर जैसे वरिष्ठ पुलिस अधिकारी को प्राप्त होनी चाहिए और इनमें से 15 ने आगे यह भी कहा है कि पुलिस अधिकारी के निर्णय का न्यायालय द्वारा पुनरीक्षण किया जाना चाहिए।

सर्वप्रथम, पुलिस को इस बात से संतुष्ट होना चाहिए कि पीड़ित के जीवन को 'गम्भीर खतरे' की 'संभावना' है। ऐसा निर्णय पुलिस अधीक्षक/पुलिस कमिश्नर जैसे वरिष्ठ पुलिस अधिकारी द्वारा किया जाना चाहिए और उसे, इस निष्कर्ष पर पहुंचने के लिए कारणों को अभिलिखित करने के पश्चात्, अपनी संतुष्टि के बारे में प्रमाण-पत्र देना चाहिए। परन्तु, न्यायालय के आदेश के बिना यह पर्याप्त नहीं होगा।

तब पुलिस या लोक अभियोजक को संबंधित मजिस्ट्रेट न्यायालय में, जो प्रमाण-पत्र की तथा उस सामग्री की जांच करेगा जिसके आधार पर प्रमाण-पत्र दिया गया है और आदेश करेगा, आवेदन करना चाहिए। मजिस्ट्रेट के समक्ष यह समस्त प्रक्रिया बंद कमरे में चलनी चाहिए। इस जांच में, संदेहास्पद व्यक्ति या अभियुक्त को सुने जाने की आवश्यकता नहीं है।

मजिस्ट्रेट को ही यह निर्णय भी करना चाहिए कि क्या साक्षी को न केवल पहचान बदलने की स्वीकृति अपितु क्या स्थान बदलने, वित्तीय सहायता आदि जैसी कोई अन्य सुविधा भी दी जानी चाहिए।

(प्रश्न 6) क्या कार्यक्रम के अधीन सुरक्षा पीडित साक्षी के परिवार के सदस्यों, निकट संबंधियों तथा मित्रों को भी दी जानी चाहिए, यदि हां, तो ऐसे व्यक्तियों की सूची में किस-किस को सम्मिलित किया जाना चाहिए?

अधिकांश, प्रत्यर्थियों (40 में से 38) ने इस विचार का समर्थन किया है कि कार्यक्रम की सुविधा परिवार के सदस्यों, निकट संबंधियों आदि को भी प्राप्त होनी चाहिए। कार्यक्रम में किस सम्मिलित किया जाए, इस बारे में यह कहा गया है कि यह परिस्थितयों पर निर्भर करेगा।

बहुत से मामलों में केवल साक्षी को ही संरक्षण देना पर्याप्त नहीं होगा। खतरा साक्षी के पति/पत्नी, बच्चों, माता-पिता, भाई-बहिन को भी हो सकेगा। इस बात का मूल्यांकन किया जाना चाहिए कि परिवार के सदस्यों में से कौन साक्षी के निकट रहता है और किसे खतरे की संभावना है और उसी के आधार पर सुरक्षा देनी होगी। यह साधारण अनुभव है कि साक्षी के बच्चों का अपहरण कर लिए जाने की धमकियां दी जाती हैं।

इसके साथ-साथ, यदि साक्षी को किसी अन्य स्थान पर रखने का निर्णय किया जाता है और वह (स्त्री/पुरूष) एकमात्र जीविका उपार्जन करने वाला है तो, यदि साक्षी को अकेले ही अन्यत्र कहीं रखा जाता है, उसके परिवार के सदस्य अपने जीवन-यापन के साधनों से वंचित हो जाएंगे और ऐसे मामलों में न्याय के हित में यह आवश्यक है कि निकट परिवार के सदस्यों को भी अन्यत्र स्थान पर ही रखा जाना चाहिए।

जैसाकि साक्षी की पहचान के मामले में प्रारूप विधेयक में प्रस्ताव किया गया है (जो यहां संलग्न किया जा रहा है), निकट परिवार के सदस्य पति/पत्नी, बच्चे, माता-पिता, दादा-दादी, भाई और बहिन हो सकेंगे, परन्तु सुविधा उन्हीं को प्राप्त हो सकेगी जिनके जीवन को खतरा है।

(प्रश्न 7) क्या साक्षी सुरक्षा कार्यक्रम के कार्यान्वयन के लिए आवश्यक धनराशि केन्द्र और राज्य सरकार दोनों के द्वारा उपलब्ध कराई जानी चाहिए?

41 प्रत्यर्थियों में से लगभग 31 ने कहा है कि आवश्यक धनराशि केन्द्र तथा राज्य सरकार दोनों के द्वारा उपलब्ध कराई जानी चाहिए। 31 प्रत्यर्थियों में से 6 राज्य सरकारें हैं, 8 पुलिस अधिकारी, 3 न्यायाधीश और 6 अन्य हैं। बिहार राज्य सरकार और संघ राज्यक्षेत्र लक्ष्यद्वीप प्रशासन ने सुझाव दिया है कि केन्द्र सरकार को 75 प्रतिशत व्यय की पूर्ति करनी चाहिए जबकि उड़ीसा, पश्चिम बंगाल और त्रिपुरा राज्यों ने और पंजाब पुलिस महानिदेशक और महानिदेशक, मणिपुर ने कहा है कि केन्द्र सरकार को शत-प्रतिशत व्यय की आपूर्ति करनी चाहिए। केवल 4 प्रत्यर्थियों ने कहा है कि खर्चों की आपूर्ति राज्य सरकार द्वारा की जानी चाहिए।

जैसाकि पहले भी कहा जा चुका है, साक्षी सुरक्षा कार्यक्रमों पर होने वोले खर्चों को केन्द्र तथा राज्य सरकारों दोनों को समान रूप से अर्थात् प्रत्येक को 50 प्रतिशत, पूरा करना चाहिए। यह बात भी नोट की जानी चाहिए कि भारतीय दंड संहिता, 1860, केन्द्रीय विधान है जो राज्य सरकारों द्वारा स्थापित किए गए न्यायालयों द्वारा लागू किया जा रहा है। दंड प्रक्रिया संहिता, 1973 भी इसी प्रकार का विधान है। इसके अतिरिक्त, 1976 में, संविधान में संशोधन द्वारा, न्याय प्रशासन का विषय संविधान की 7वीं अनुसूची में राज्य सूची से समवर्ती सूची की प्रविष्टि 11क में लाया गया है

और इस कारण से न्याय प्रशासन का दायित्व संयुक्त रूप में केन्द्र और राज्य सरकार दोनों पर ही हो जाता है। हमारे विचार में, केन्द्र सरकार सारा भार राज्य सरकारों पर इस आधार पर नहीं छोड सकेगी कि 'कानून और व्यवस्था' राज्य का विषय है। साक्षी सुरक्षा कार्यक्रम का विषय 'कानून और व्यवस्था' का विषय नहीं है अपितु सीधा न्याय प्रशासन से संबंधित है ताकि साक्षी अन्वेषण के दौरान कथन करते हुए या जांच अथवा विचारण में साक्ष्य देते हुए निर्भय होकर साक्ष्य दे सके । हम इस तथ्य का पहले ही निर्देश कर चुक हैं, जैसाकि परामर्शी-पत्र के पैरा 7.7.4 में कहा गया है कि अमरीका में, कार्यक्रम आरम्भ होनक के समय से, दोषसिद्धि की दर, साक्षी सुरक्षा कार्यक्रम में सम्मिलित किए गए साक्षी के अभिसाक्ष्य के परिणामस्वरूप, 89 प्रतिशत तक पहुंच चुकी है। हमारा विचार यह है कि केन्द्र तथा राज्य सरकारों को बराबर-बराबर व्यय का वहन करना होगा।

(प्रश्न 8) प्रश्न यह है कि क्या किसी ससाक्षी को कार्यक्रम के प्रभारी के साथ ऐसे किसी समझौता ज्ञापन पर हस्ताक्षर करने चाहिए जिसमें दोनों पक्षों के अधिकार, दायित्व और निर्बंधनों का उल्लेख किया गया हो और यदि हां, तो उन अधिकारों और दायित्वों को किस प्रकार कार्यान्वित किया जाएगा?

अधिकांश प्रत्यर्थियों (37 में से 29 ने) ने साक्षी सुरक्षा कार्यक्रम के अधीन समझौता ज्ञापन पर हस्ताक्षर किए जाने की आवश्यकता का समर्थन किया है। इसमें, 6 राज्य सरकारें, 9 पुलिस अधिकारी, 3 न्यायाधीश तथा 11 अन्य व्यक्ति हैं। शेष ने ऐसे समझौता ज्ञापन का समर्थन नहीं किया है। जहां तक समझौता ज्ञापन अधिकारों और दायित्वों को कार्यान्वित करने का संबंध है, कतिपय प्रत्यर्थियों ने एक विशिष्ट अधिनियम अधिनियमित करने या ऐसे दस्तावेजों के निष्पादन का सुझाव दिया है जिनमें साक्षी प्रतिभूति के रूप में अपनी सम्पत्ति दे सकेगा। पंजाब के पुलिस महानिदेशक ने सुझाव दिया है कि दंड प्रक्रिया संहिता, 1973 में एक उपबंध किया जा सकेगा । कुछ प्रत्यर्थियों ने संहिता की धारा 446 में संशोधन करने का सुझाव दिया है।

हम अन्य देशों में प्रचलित ऐसे कतिपय उपबंधों का निर्देश करेंगे जिन्हें समझौता ज्ञापन में अन्तर्विष्ट किया जा सकेगा।

कनाडा

कनाडा के साक्षी सुरक्षा अधिनियम, 1996 (परामर्शी-पत्र का पैरा 7.4 देंखे) के अधीन धारा 8 में विनिर्दिष्ट किया गया है कि -

"(क) फेरा के कमिश्नर का दायित्व है कि उसे करार में संरक्षक के लिए सुरक्षा उपलब्ध कराने हेतु निर्दिष्ट किए गए ऐसे न्यायोचित कदम उठाने होंगे जो आवश्यक हों ; और

(ख) संरक्षिति का दायित्व होगा -

(i) जांच, अन्वेषण और अभियोजन के बारे में अपेक्षित सूचना या साक्ष्य देना या कार्यवाहियों में भाग लेना जिसके लिए करार में सुरक्षा के लिए उपबंध किया गया है ;

(ii) संरक्षिति द्वारा विधिक कार्यवाहियों में उन सभी वित्तीय दायित्वों को पूरा करना जो करार की शर्तों के अनुसार, कमिश्नर द्वारा संदेय नहीं है ;

(iii) संरक्षिति द्वारा अपने सभी विधिक दायित्वों का, बच्चों की अभिरक्षा और भरण-पोषण सहित, पूरा किया जाना ;

(iv) ऐसे क्रियाकलापों से बचना जिनसे पार्लियामेन्ट के किसी अधिनियम के विरूद्ध कोई अपराध बनता हो या जिनसे संरक्षिति की सुरक्षा को कोई खतरा हो ;

(v) संरक्षिति को उपलब्ध कराई गई सुरक्षा के संबंध में और संरक्षिति के दायित्वों के निवर्हन के लिए कमिश्नर के न्यायोचित अनुरोधों और निदेशों को स्वीकार करना और उन्हें कार्यान्वित करना।"

अधिनियम की धारा 11(1) के अधीन किसी भी व्यक्ति द्वारा किसी संरक्षिति या किसी भूतपूर्व संरक्षिति के निवास स्थान या पहचान परिवर्तन के बारे में कोई जानकारी नहीं दी जाएगी।

साऊथ अफ्रीका

साऊथ अफ्रीका के 'साक्षी सुरक्षा अधिनियम, 1998' की धारा 11(4) के अधीन सुरक्षा निदेशक का निम्नलिखित दायित्व है :

"(क) (i) संरक्षित व्यक्ति को सुरक्षा और अन्य संबंधित सेवाएं उपलब्ध कराने के लिए, जैसाकि सुरक्षा करार में निर्दिष्ट किया गया है, वे सभी न्यायोचित उपाय करना आवश्यक हैं ; और

(ii) किसी संरक्षित व्यक्ति को, जब तक अन्यथा सहमति न हो, सुरक्षा के लिए किसी जेल में नहीं रखा जाएगा ;

(ख) साक्षी या अन्य संबंधित व्यक्ति के दायित्व इस प्रकार हैं -

(i) जहां प्रवर्तनीय है, कार्यवाहियों में, जिनसे सुरक्षा संबंधित है, आवश्यकता के अनुसार साक्ष्य देना ;

(ii) अपने उन सभी वित्तीय दायित्वों को पूरा करना जो करार की शर्तों के अनुसार निदेशक द्वारा संदेय नहीं है ;

(iii) बच्चों की अभिरक्षा और भरण-पोषण तथा कर दायित्वों सहित, अपने सभी विधिक दायित्वों पूरा करना ;

(iv) ऐसे क्रियाकलापों से बचना जिनसे कोई अपराध बनाता हो ;

(v) ऐसे क्रियाकलापों से बचना जिनसे उसकी तथा किसी अन्य संरक्षित व्यक्ति की सुरक्षा को खतरा हो ;

(vi) उस दी गई सुरक्षा या उसके दायित्वों के संबंध में कार्यालय के किसी सदस्य द्वारा किए गए न्यायोचित अनुरोधों और निदेशों को स्वीकार करना और उन्हें कार्यान्वित करना ;

(vii) निदेशक को ऐसी सिविल कार्यवाहियों के बारे में जानकारी देना जो उसके द्वारा संस्थित की गई हैं या की जा सकेंगी या जिनमें वह अन्यथा अन्तर्ग्रस्त है ;

(viii) निदेशक को ऐसी किसी दांडिक कार्यवाही के बारे में जानकारी देना जो उसके द्वारा या उसके विरूद्ध संस्थित की गई हैं या की जा सकेंगी या जिनमें वह साक्षी या अभियुक्त के रूप में या अन्य किसी प्रकार से अन्तर्ग्रस्त है ; और

(ix) साक्षियों और संबंधित व्यक्तियों या संबंधित सेवाओं या इस अधिनियम में उपबंधित साक्षी सुरक्षा कार्यक्रम से संबंधित किसी अन्य मामले में सुरक्षा या सुरक्षा से संबंधित किसी अन्य प्रश्न के लिए कोई खतरा उत्पन्न न करना ।

(ग) कोई अन्य विहित शर्तें जिन पर सहमति हुई है ; और

(घ) कोई प्रक्रिया, जिसके अनुसार सुरक्षा करार में, यदि आवश्यक हो, संशोधन किया जा सके।"

धारा 17 में कहा गया है कि अधिनियम के उपबंधों को प्रभावी बनाने के प्रयोजन से या जब किसी न्यायालय द्वारा ऐसा करने के लिए कहा जा सके के सिवाय, कोई भी व्यक्ति ऐसी कोई जानकारी प्रकट नहीं करेगा जो उसे अधिनियम के अधीन अपनी शक्तियों का उपयोग करते हुए या कर्त्तव्यों का निर्वहन करते हुए प्राप्त हुई है। उपधारा (5) से उपधारा 97) तक में ऐसी रीति और शर्तों का निर्देश किया है जिनके अनुसार निदेशक कोई जानकारी प्रकट कर सकेगा।

जहां तक साक्षियों द्वारा समझौता ज्ञापन को निष्पादन किए जाने का संबंध है, हमने पिछले अध्याय में बताया है कि यह प्रक्रिया उन सभी देशों में विद्यमान है जहां साक्षी सुरक्षा कार्यक्रम प्रवर्तन में हैं। साक्षी और संबंधित पुलिस अधिकारी या अभियोजक के बीच एक समझौता ज्ञापन

होता है और इससे संबंधित विधि में दोनों पक्षों के अधिकार और दायित्व दिए गए हैं। उन्हें समझौता ज्ञापन में अन्तर्विष्ट करना होगा।

हम सिफारिश करते हैं कि पीड़ित/साक्षी को, यथास्थिति, जिला पुलिस अधीक्षक या पुलिस कमिश्नर क साथ समझौता ज्ञापन निष्पादित करना होगा और ये पुलिस अधिकारी पीड़ित/सासक्षी को कार्यक्रम में सम्मिलित करने के लिए मजिस्ट्रेट के समक्ष आवेदन करेंगे। आदेश किए जाने पर, जैसाकि पहले बताया जा चुका है, विधिक सहायता प्राधिकरणों द्वारा धनराशि उपलब्ध कराई जाएगी। पक्षकार उपर्युक्त सूचीबद्ध दायित्व समझौता ज्ञापन में अन्तर्विष्ट किए जाएंगे। समझौता ज्ञापन में यह उपबंध भी किया जाएगा कि प्रत्येक पक्षकार समझौता ज्ञापन में उल्लिखित शर्तों को पूरा करने के लिए बाध्य होगा। समझौता ज्ञापन में कनाडा और दक्षिण अफ्रीका के अधिनियमों में दिए गए कतिपय मुख्य दायित्वों को समाविष्ट किया जाएगा।

जहां तक समझौता ज्ञापन के प्रवर्तन का संबंध है, एकबार विधि में अधिकार और दायित्व उपवर्णित कर दिए जाने पर, यदि आवश्यक हो, तो इस आशय का उपबंध भी किया जा सकेगा कि समझौता ज्ञापन के पक्षकार उसकी शर्तों के प्रवतन के प्रयोजन से मजिस्ट्रेट के न्यायालय में जा सकेंगे। पीड़ित/साक्षी या पुलिस अथवा अन्य किसी व्यक्ति द्वारा समझौता ज्ञापन का उल्लंघन करने के लिए, प्रभावित होने वाला पक्षकार समुचित आदेशों के लिए मजिस्ट्रेट के समक्ष आवेदन कर सकेगा।

(प्रश्न 9) जब किसी व्यक्ति की पहचान बदल दी जाती है और बाद में वह किन्ही अन्य सिविल कार्यवाहियों में वादी या प्रतिवादी या साक्षी बन जाता है, तब क्या ऐसी कार्यवाहियां

अस्थयी रूप से निलम्बित कर दी जानी चाहिए और उन कार्यवाहियों का संस्थित किया जाना, विचारण और निर्णय न्यायालय के आदेश के अधीन होना चाहिए?

हम बता सकते हैं कि 37 में से 30 प्रत्यर्थियों ने इस बात से सहमति व्यक्त की है कि बाद में सामने आने वाली इस प्रकार की सिविल कार्यवाहियों को अस्थयी रूप से निलम्बित कर दिया जाना चाहिए और ये न्यायालय के आदेशाधीन होनी चाहिए जिसके अनुसार कार्यवाही संस्थित की जाएंगी या उनका संस्थापन विचारण या ऐसी कार्यवाहियों का निर्णय लम्बित रखा जाएगा। इनमें से 7 राज्य सरकारें, 9 पुलिस अधिकारी, 1 न्यायाधीश और 13 अन्य हैं।

(क) कोई सिविल कार्यवाही, यदि वह संरक्षित पीड़ित/साक्षी द्वारा वादी या याचिकाकर्ता के रूप में संस्थित की जाती है, तब परिसीमा की कालावधि के बढ़ाने के बजाय यही पर्याप्त होगा यदि संरक्षित व्यक्ति को छद्म नाम से मामला फाइल करने की अनुमति दे दी जाती है जहां उसका वास्तविक नाम और पता न्यायालय अभिलेखों में प्रकट नहीं किए जाएंगे केवल न्यायाधीश को प्रकट किए जाएंगे। यही प्रक्रिया उस समय भी अपनाई जा सकेगी यदि कोई सिविल कार्यवाही उस समय लम्बित है जब साक्षी को संरक्षित साक्षी घोषित किया जाता है और इस प्रकार की घोषणा आगे जारी रहती है। कार्यवाहियों में छदम नाम दर्शाया जाएगा और नया पता सिविल कार्यवाही के न्यायाधीश को छोडकर, गोपनीय रखा जाएगा। उसके पश्चात्, सिविल कार्यवाही को अस्थायी रूप से तब तक के लिए रोका जाएगा जब तक कि वह दांडिक मामला पूरा नहीं हो जाता जिसमें वह व्यक्ति कार्यक्रम के अधीन संरक्षित साक्षी है।

(ख) जहां संरक्षित साक्षी पर उसके वास्तविक नाम में वाद चलाया जाता है, और वह प्रतिवादी है, तब भी उसके वास्तविक नाम के लिए एक छद्म नाम और उसका नया पता देने के पश्चात्, जो सिविल मामले के सिवाय, गोपनीय रखा जाएगा, अस्थायी रूप में रोकी जाएंगी।

दोनों परिस्थितियों में सिविल कार्यवाहियों पर रोक दांडिक मामले के पूरा होने तक (विचारण न्यायालय में) जारी रहेगी जिसमें उसे साक्षी सुरक्षा कार्यक्रम में सम्मिलित किया गया है।

(ग) ऐसे रोकादेश एकपक्षीय और उस न्यायालय में बंद कमरे में की गई कार्यवाहियों में किए जाएंगे जिसमें सिविल मामला फाइल किया जाता है या लंबित है और ऐसे आदेश, उपर्युक्त पुलिस अधिकारियों या लोक अभियोजक या प्रभावित साक्षी के आवेदन पर सिविल न्यायालय मे उसके छद्म नाम का प्रयोग करते हुए, पारित किए जाएंगे।

किसी सिविल मामले को रोकने की ऐसी प्रक्रिया साऊथ अफ्रीका के साक्षी सुरक्षा अधिनियम, 1998 की धारा 15 के अधीन उपलब्ध है (परामर्शी-पत्र का पैरा 7.2 देखें)।

(प्रश्न 10) जब किसी व्यक्ति की पहचान बदल दी जाए और वह किसी अन्य दांडिक कार्यवाही में अपनी पहली पहचान के अधीन अभियुक्त या साक्षी है तब क्या सुरक्षा कार्यक्रम के प्रभारी व्यक्ति को ऐसे मामले में अभियोजक, न्यायाधीश या मजिस्ट्रेट या प्रतिरक्षा के वकील के समक्ष उसकी पहचान प्रकट करने के लिए प्राधिकृत किया जाना चाहिए?

38 प्रत्यर्थियों में से 26 ने यह सुझाव दिया है कि साक्षी सुरक्षा कार्यक्रम के प्रभारी को न्यायाधीश या अभियोजक के समक्ष वास्तविक पहचान प्रकट करने के लिए प्राधिकृत किया जाना चाहिए। बहुत से प्रत्यर्थियों ने यह सुझाव दिया है कि वास्तविक पहचान प्रतिरक्षा के वकील के समक्ष प्रकट नहीं की जाएगी।

अध्याय-बारह में, साऊथ अफ्रीका और आस्ट्रेलिया की प्रक्रिया का निर्देश किया गया है जहां वास्तविक पहचान केवल उस मजिस्ट्रेट या न्यायाधीश के समक्ष प्रकट की जाती है जिसके न्यायालय में संरक्षित साक्षी के विरूद्ध दांडिक मामला फाइल किया जाता है। यदि संरक्षित साक्षी द्वारा या उसके विरूद्ध कोई दांडिक मामला फाइल किया जाता है तो निम्नलिखित प्रक्रिया अपनाई जाएगी :

(i) जहां साक्षी सुरक्षा कार्यक्रम में सम्मिलित किए गए पीड़ित/साक्षी के विरूद्ध कोई दांडिक मामला फाइल किया जाता है वहां उसकी वास्तविक पहचान और छद्म नाम/नए स्थान का पता केवल ऐसी कार्यवाहियां करने वाले मजिस्ट्रेट या न्यायाधीश को ही प्रकट किए जा सकेंगे अर्थात् संरक्षित साक्षी के विरूद्ध फाइल की गई कार्यवाही उक्त मजिस्ट्रेट या न्यायाधीश को दांडिक कार्यवाही को तब तक रोकना होगा जब तक कि पहली कार्यवाही का विचारण, जिसमें इस प्रकार अभियुक्त व्यक्ति संरक्षित साक्षी है, पूरा नहीं हो जाता।

(ii) जहां पीड़ित/साक्षी किसी दांडिक मामले में परिवादी या अभियोजन साक्षी है वहां उसकी वास्तविक पहचान औरी पता उस न्यायाधीश/मजिस्ट्रेट के समक्ष प्रकट किया जा सकेगा जिसके समक्ष मामला आएगा और वह कार्यवाही भी तब तक रोकी जाएगी जब तक कि पूर्व की कार्यवाही, जिसमें वह व्यक्ति संरक्षित साक्षी है, पूरी नही हो जाती।

(प्रश्न 11) क्या कोई व्यक्ति, यदि उस न्यायालय द्वारा जिसने संरक्षण प्रदान किया है, प्राधिकृत किए गए बिना ही किसी संरक्षित व्यक्ति की पहचान प्रकट करता है तो दंड के लिए दोषी ठहराया जाना चाहिए, यदि हां, तो क्या दंड विहित किया जाना चाहिए?

(i) सभी प्रत्यर्थियों ने इस बात से सहमति व्यक्त की है कि गोपनीयता बनाए रखने संबंधी विधिक उपबंधों का उल्लंघन दंडनीय होना चाहिए और दंड कठोर होना चाहिए।

हम सिफारिश करते हैं कि साक्षी सुरक्षा कार्यक्रम में सम्मिलित किए गए साक्षी की पहचान का किसी व्यक्ति द्वारा अप्राधिकृत प्रकटन प्रस्तावित विधि के अधीन अपराध बनाया जाना चाहिए और इसके लिए कठोर दंड की व्यवस्था की जानी चाहिए।

(ii) दंड की मात्रा के बारे में, प्रत्यर्थियों ने 3 वर्ष से 7 वर्ष तक और रू05000/- से रू050,000/- तक के जुर्माने का सुझाव दिया है।

हम सिफारिश करते हैं कि इस तथ्य को ध्यान में रखते हुए कि हम सेशन न्यायालय द्वारा विचारणीय अपरोधों के लिए साक्षी संरक्षण कार्यक्रम का प्रस्ताव कर रहें हैं, पहचान के बारे में सुरक्षा भंग के लिए जुर्माना, जो रू.10,000/- तक हो सकेगा सहित 3 वर्ष का दंड होना चाहिए।

(प्रश्न 12) क्या आप इस विचार का समर्थन करते हैं कि जहां कोई साक्षी, जो साक्षी सुरक्षा कार्यक्रम में सम्मिलित किया गया है, बिना किसी उचित कारण से साक्ष्य देने में असफल रहता है या साक्ष्य देने से इंकार करता है तो, उसे न्यायालय की अवमानना के लिए अभियोजित किया जाना चाहिए और सुरक्षा आदेश रद्द कर दिया जाना चाहिए?

40 में से 32 प्रत्यर्थियों (7 राज्य सरकारों, 7 पुलिस अधिकारियों, 2 न्यायाधीश तथा 17 अन्य सहित) ने कहा है कि न केवल अवमानना के लिए कार्यवाही की जानी चाहिए अपितु सुरक्षा भी वापस ले ली जानी चाहिए।

यदि संरक्षित साक्षी समझौता ज्ञापन का उल्लंघन करता है और किसी उचित कारण के बिना साक्ष्य देने में असफल रहता है या साक्ष्य देने से इंकार करता है तो उसके विरूद्ध अवमानना की कार्यवाही की जानी चाहिए और साथ ही साक्षी सुरक्षा कार्यक्रम में उस सम्मिलित करने का आदेश भी रद्द कर दिया जाना चाहिए।

यह सच है कि जहां तक हमारे अधीनस्थ न्यायालयों का संबंध है, उन्हें न्यायालय की अवमानना के लिए किसी को दंडित करने की शक्ति प्राप्त नहीं है परन्तु न्यायालय अवमानना अधिनियम, 1971 में यह परिकल्पना की गई है कि न्यायाधीश अधिनियम के अधीन कार्यवाही करने के लिए उच्च न्यायालय को सूचित करेगा और उसके पश्चात् प्रक्रिया का अनुसरण किया जाएगा। इसके अतिरिक्त, पुलिस और लोक अभियोजक मजिस्ट्रेट को जिसने साक्षी को कार्यक्रम में सम्मिलित करने का आदेश पारित किया है, उस आदेश को रद्द करने का आवेदन कर सकते हैं जिसके अन्तर्गत साक्षी को कार्यक्रम में सम्मिलित किया गया है।

(प्रश्न 13) क्या किसी व्यक्ति को साक्षी सुरक्षा कार्यक्रम में सम्मिलित करने या न करने का निर्णय प्रवर्तनीय बनाया जाना चाहिए? विलम्ब से बचने के लिए, क्या इससे संबंधित अपील सीधे उच्च न्यायालय में की जानी चाहिए?

38 प्रत्यर्थियों में से 27 प्रत्यर्थियों ने किसी साक्षी को कार्यक्रम में सम्मिलित करने या न करने के आदेश के विरूद्ध अपील किए जाने का उपबंध करने का समर्थन किया है। अधिकांशतः, यह कहा गया है कि अपील उच्च न्यायालय में की जानी चाहिए। इनमें से 5 प्रतिक्रिया राज्य सरकारों से, 8 पुलिस अधिकारियों से, 2 न्यायाधीशों से तथा 12 अन्य व्यक्तियों से प्राप्त हुई हैं ।

यदि किसी पीड़ित/साक्षी के लिए न्यायालय से बाहर शारिरीक सुरक्षा की व्यवस्था की जाती है या उसे किसी अन्य स्थान पर रखा जाता है और भिन्न नाम दिया जाता है तो, इससे इस मामले में अभियुक्त के अधिकार पर किसी प्रकार से भी कोई प्रभाव नहीं पडता है और उसे, जब तक उस व्यक्ति को उसके विरूद्ध साक्ष्य देने के लिए लाया जाता रहेगा तब तक कोई शिकायत नहीं हो सकती। तथापि, इसके साथ-साथ यदि ऐसा पीड़ित/साक्षी को साक्षी पहचान संरक्षण आदेश प्राप्त है तो, अभियुक्त को उच्च न्यायालय में अपील करने का अधिकार प्राप्त होगा, जैसाकि हमारे प्रारूप विधेयक की धारा 15 में उपबंध किया गया है।

तथापि, यदि मजिस्ट्रेट साक्षी सुरक्षा कार्यक्रम में किसी साक्षी/पीड़ित को सम्मिलित करने से इंकार कर देता है, तब साक्षी/पीड़ित को उच्च न्यायालय में अपील करने का अधिकार होना चाहिए।

एक ओर, जहां किसी साक्षी को न्यायालय से बाहर कार्यक्रम के अधीन सुरक्षा कार्यक्रम में सम्मिलित किया जाता है तो उसके विरूद्ध अभियुक्त के कहने पर अपील न किए जाने का कोई विरोध नहीं है और दूसरी ओर पीड़ित/साक्षी के पक्ष में अपील का उपबंध किए जाने का जिसे गलती से कार्यक्रम में सम्मिलित किए जाने से वंचित कर दिया गया है और जा दांडिक मामले में लम्बित रहने के दौरान पूरी अवधि में न्यायालय से बाहर भयभीत रहेगा।

हम, साक्षी सुरक्षा कार्यक्रम से संबंधित परामर्शी-पत्र के तेरह प्रश्नों के बारे में, तदनुसार सिफारिश करते हैं।

न्यायमूर्ति एम जगन्नाथ राव
अध्यक्ष

आर.एल.मीना
(उपाध्यक्ष)

दिनांक 31.8.2006

(डा. डी.पी.शर्मा)
सदस्य-सचिव

अनुलग्नक - I

साक्षी (पहचान) संरक्षण विधेयक, 2006

दांडिक मामलों में, जहां गम्भीर अपराध अन्तर्ग्रस्त हैं, संकटग्रस्त साक्षियों की पहचान संरक्षण देने और ऐसे संरक्षण के लिए प्रक्रिया और तंत्र की व्यवस्था और उनसे संबंधित अन्य प्रासंगिक मामलों का उपबंध करने के लिए विधेयक

भारत गणराज्य के सत्तावनवें वर्ष में संसद द्वारा निम्नलिखित रूप में यह अधिनियमित हो:-

अध्याय-एक

प्रारम्भिक

संक्षिप्त नाम और प्रारम्भ.-

1. (1) इस अधिनियम का संक्षिप्त नाम 'साक्षी (पहचान) संरक्षण अधिनियम, 2006' है।

(2) इसका विस्तार, जम्मू और कश्मीर राज्य के सिवाय, समस्त भारत पर है।

(3) यह उस तारीख को प्रवृत्त होगा जो केन्द्रीय सरकार राज्यपत्र में अधिसूचना द्वारा नियत करे।

परिभाषाएं.-

2. इस अधिनियम में, जब तक कि संदर्भ से अन्यथा अपेक्षित न हो-

(क) 'पहचान' में किसी व्यक्ति के संबंध में ऐसे व्यक्ति का नाम, लिंग, माता-पिता का नाम और व्यवसाय सम्मिलित हैं ;

(ख) 'निकट संबंधी' में पत्नी/पति, माता-पिता, दादा-दादी, पुत्र, पुत्रियां, पोते/पोती, भाई और बहिन सम्मिलित हैं ;

(ग) 'न्यायाधीश' से सेशन न्यायालय या समान स्तरीय न्यायालय का न्यायाधीश या विशिष्ट न्यायालय का न्यायाधीश अभिप्रेत है ;

(घ) 'गम्भीर अपराध' से ऐसा अपराध अभिप्रेत है जिसे दंड प्रक्रिया संहिता, 1973(1974 का 2) की प्रथम अनुसूची में सेशन न्यायालय द्वारा विचारणीय अपराध के रूप में वर्णित किया गया है और इसमें ऐसा अपराध भी सम्मिलित है जिसका विचारण किसी विशिष्ट विधि द्वारा सेशन न्यायालय, या किसी अन्य समान स्तरीय अभिहित न्यायालय या किसी विशिष्ट न्यायालय द्वारा किया जाना अपेक्षित है;

(ङ) 'संकटग्रस्त साक्षी' से कोई ऐसा साक्षी अभिप्रेत है जो संदेहास्पद या अभियुक्त को ज्ञान नहीं है, जिसके बारे में साक्षी होने के कारण से, उसे तथा उसके निकट संबंधियों के जीवन को या उसकी और उसके निकट संबंधियों की सम्पत्ति को गंभीर खतरे की संभावना है ;

(च) 'पीड़ित' से ऐसा व्यक्ति अभिप्रेत है जिसे किसी अपराध के किए जाने से शारीरिक, मानसिक, मनोवैज्ञानिक या वित्तीय क्षति पहुंची या उसकी सम्पत्ति को क्षति पहुंची है

(छ) 'साक्षी' से अभिप्रेत है -

(i) कोई व्यक्ति, जिसे तथ्यों और परिस्थितियों की जानकारी है, या उसे कोई ऐसी सूचना, जानकारी प्राप्त है जो किसी गम्भीर अपराध से संबंधित किसी अपराध के अन्वेषण, जांच या विचारण के प्रयोजन से आवश्यक है, और जिसके द्वारा ऐसे मामले में अन्वेषण, जांच या विचारण के दौरान सूचना देना या कथन करना या कोई दस्तावेज प्रस्तुत करना अपेक्षित है या अपेक्षित हो सकेगा ; और

(ii) इसमें ऐसे गम्भीर अपराध का पीड़ित भी सम्मिलित है

(ज) वे शब्द और अभिव्यक्तियां, जो इस अधिनियम में परिभाषित नहीं हैं और दंड प्रक्रिया संहिता, 1973 (1974 का 2) में परिभाषित किए गए हैं उन्हें क्रमशः वही अर्थ दिया जाएगा जो उन्हें संहिता में दिया गया है।

अधिनियम का लागू होना और अध्यारोही प्रभाव. -

3. (1) इस अधिनियम के उपबंध गम्भीर अपराधें के अन्वेषण, जांच और विचारण के लिए लागू होंगे ।

(2) किसी असंगति के मामले में, दंड प्रक्रिया संहिता, 1973 (1974 का 2) के किसी उपबंध में या तत्समय प्रवृत्त किसी अन्य विधि के किसी उपबंध में अनतर्विष्ट किसी बात के असंगत होते हुए भी इस अधिनियम के उपबंध प्रभावी होंगे।

अध्याय-दो

साक्षी पहचान संरक्षण आदेश

भाग-एक

अन्वेषण के दौरान पहचान का संरक्षण

पहचान संरक्षण आदेश की मांग करने के लिए आवेदन :-

4. (1) किसी गम्भीर अपराध के अन्वेषण के दौरान, यदि अन्वेषण के प्रभारी अधिकारी का ऐसा समाधान हो जाता है कि मामले के प्रभावी अन्वेषण के प्रयोजन से किसी संकटग्रस्त साक्षी की पहचान को संरक्षण देना आवश्यक है तो, वह, यथास्थिति, प्रथम श्रेणी के न्यायिक मजिस्ट्रेट या मेट्रोपोलिटन मजिस्ट्रेट को साक्षी की पहचान के संरक्षण का आदेश करने के लिए लिखित में आवेदन कर सकेगा।

(2) उपधारा (1) के अधीन किए गए प्रत्येक आवेदन में, संकटग्रस्त साक्षी की सही पहचान और ऐसा कोई अन्य विवरण जिससे ऐसे साक्षी की पहचान ज्ञात हो सके, नहीं दियां जाएगा और उसके बजाय कोई छद्म नाम या अंग्रेजी वर्णमाला का कोई अक्षर संकटग्रस्त

साक्षी की पहचान के लिए प्रयोग किया जाएगा, परन्तु सही पहचान और अन्य विवरण मजिस्ट्रेट के समक्ष प्रकट किया जाएगा।

(3) उपधारा (1) के अधीन -

(क) प्रत्येक आवेदन के साथ ऐसी संगत सामग्री तथा दस्तावेज संलग्न किए जाएंगे जो यह साबित करते हों कि साक्षी एक संकटग्रस्त साक्षी है और उसके पक्ष में संरक्षण आदेश किए जाने की आवश्यकता है ; और

(ख) पुलिस अधीक्षक या पुलिस कमिश्नर के पद के अधिकारी से, यह प्रमाणित करते हुए कि साक्षी एक संकटग्रस्त साक्षी है, एक प्रमाण-पत्र संलग्न किया जा सकेगा।

मजिस्ट्रेट द्वारा एकपक्षीय प्राथमिक जांच.-

5. (1) धारा 4 के अधीन आवेदन प्राप्त होने पर, मजिस्ट्रेट बंद कमरे में इस विषय में एकपक्षीय प्राथमिक जांच करेगा कि क्या साक्षी, संकटग्रस्त साक्षी है जैसाकि आवेदन में दावा किया गया है और क्या कोई संरक्षण आदेश पारित किए जाने की आवश्यकता है और ऐसा विनिश्चय करने के लिए इस धारा में अधिकथित प्रक्रिया का अनुसरण करेगा।

(2) मजिस्ट्रेट, अभियोजन पक्ष से अपने समक्ष ऐसी सामग्री या दस्तावेज प्रस्तुत करने की अपेक्षा कर सकेगा जो अभी तक प्रस्तुत नहीं किए गए हैं और जिन्हें वह आवेदन निपटान के प्रयोजन से आवश्यक समझता है।

(3) मजिस्ट्रेट, अभियोजन पक्ष को सुनेगा और अपने विवेकाधिकार में साक्षी सहित आवेदन के अध्यधीन किसी भी व्यक्ति की मौखिक परीक्षा कर सकेगा और कथन का सार अभिलिखित करेगा।

(4) प्राथमिक जांच के दौरान, कोई अभियोजक, न्यायालय का अधिकारी, या प्राथमिक सुनवाई में उपस्थित या अन्तर्ग्रस्त अन्य व्यक्ति साक्षी की सही पहचान या ऐसा कोई विवरण जिससे साक्षी की पहचान प्रकट होने की संभावना हो, प्रकट, व्यक्त या उद्घटित नहीं करेगा।

(5) प्राथमिक जांच के दौरान, कोई मौखिक साक्ष्य नहीं दिया जाएगा और किसी व्यक्ति से ऐसा कोई प्रश्न नहीं पूछा जाएगा, यदि ऐसा साक्ष्य या प्रश्न आवेदन के अध्यधीन साक्षी की सही पहचान प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष रूप से संबंधित है।

(6) आवेदन पर विचार करते समय, मजिस्ट्रेट निम्नलिखित को ध्यान में रखेगा :-

(i) साक्षी की पहचान जानने के लिए अभियुक्त का साधारण अधिकार ;

(ii) यह सिद्धान्त कि साक्षी की अनामता के आदेश केवल आपवादिक परिस्थितियों में न्यायोचित है ;

(iii) अपराध की गम्भीरता ;

(iv) मामले में संकटग्रस्त साक्षी के साक्ष्य का महत्व ;

(v) क्या उपधारा (3) के अधीन साक्षी का इस आशय का कथन, यदि कोई है, कि यह संकटग्रस्त साक्षी क्योंकर है और उसके पक्ष में संरक्षण आदेश पारित करने की क्योंकर आवश्यकता हे, विश्वसनीय है ; और

(vi) क्या कोई अन्य ऐसा साक्ष्य है जो अपराध के संबंध में साक्षी के साक्ष्य का समर्थक है।

मजिस्ट्रेट द्वारा आदेश.-

6. (1) यदि, विचार करने के पश्चात् -

(क) आवेदन और धारा 4 के अधीन आवेदन के समर्थन में प्रस्तुत की गई सभी सामग्री और दस्तावेजों पर और

(ख) धारा 5 की उपधारा (3) के अधीन किसी व्यक्ति का लेखबद्ध किए गए किसी कथन पर, यदि कोई है,

और, अभियोजन पक्ष को सुनने के पश्चात् मजिस्ट्रेट का समाधान हो जाता है कि-

(क) आवेदन के अध्यधीन साक्षी, संकटग्रस्त साक्षी है ;

(ख) अन्वेषण पूरा होने और न्यायालय में अन्तिम रिपोर्ट या आरोप-पत्र प्रस्तुत किए जाने तक संकटग्रस्त साक्षी की पहचान गोपनीय रखना न्याय के हित के विरूद्ध नहीं होगा ; और

(ग) संरक्षण आदेश पारित करने की आवश्यकता से साक्षी की पहचान जानने के अभियुक्त के अधिकार का अधिक्रमण ता नहीं होता है ;

वह न्यायोचित आदेश पारित कर सकेगा कि जब तक अन्वेषण पूरा नहीं हो जाता और दंड प्रक्रिया संहिता, 1973 की धारा 173 की उपधारा (2) में निर्दिष्ट पुलिस रिपोर्ट या किसी विधि के अधीन आरोप-पत्र मजिस्ट्रेट या न्यायाधीश को नहीं भेज दी जाती तब तक निम्नलिखित में संकटग्रस्त साक्षी की पहचान दर्शायी या उल्लिखित नहीं की जाएगी :

(क) दंड प्रक्रिया संहिता,1973 (1974 का अधिनियम 2) की धारा 161 और 164 के अधीन अभिलिखित किए गए किसी कथन या प्रकरण डायरी सहित, अन्वेषण के क्रम में अभिलिखित किए गए किसी कथन में ;

(ख) उपर्युक्त निर्दिष्ट पुलिस रिपोर्ट या आरोप-पत्र और पुलिस रिपोर्ट या आरोप-पत्र के साथ भेजे गए दस्तावेजों में ;

(ग) ऐसे अपराध से संबंधित किसी कार्यवाही में मजिस्ट्रेट या न्यायाधीश को भेजे गए किसी अन्य दस्तावेज में ;

(घ) ऐसे अपराध के संबंध में, अन्वेषण के दौरान मजिस्ट्रेट के समक्ष या किसी अन्य न्यायालय में किसी कार्यवाही में।

(2) तथापि, यदि उपधरा (1) में निर्दिष्ट ऐसा विचार और सुनवाई करने के पश्चात्, मजिस्ट्रेट का समाधान हो जाता है कि-

(क) आवेदन में उल्लिखित साक्षी कोई संकटग्रस्त साक्षी नहीं है ; या

(ख) ऐसे साक्षी की पहचान को गोपनीय रखा जाना-

(i) जो न्याय के हित के विपरीत होगा ;

(ii) जिससे साक्षी की पहचान जानने के अभियुक्त के अधिकार का अधिक्रमण नहीं होगा ;

तब वह, एक न्यायोचित न्यायिक आदेश के द्वारा आवेदन को खारिज कर सकेगा।

साक्षी की पहचान का उल्लेख करने का निषेध.-

7. (1) आवेदन के अध्यधीन साक्षी की सही पहचान किसी आदेश या इस भाग के अन्तर्गत किसी कार्यवाही में उल्लिखित या दर्शायी नहीं जाएगी।

(2) इस भाग के अधीन किसी कार्यवाही के संबंध में किसी भी रूप में किसी मामले को मुद्रित या प्रकाशित करना विधिक नहीं होगा।

भाग-दो

पहचान संरक्षण के लिए आवेदन

पहचान संरक्षण के लिए आवेदन.-

8. (1) यदि दंड प्रक्रिया संहिता, 1973 (1974 का 2) की धारा 173 की उपधारा (2) में निर्दिष्ट पुलिस रिपोर्ट के पश्चात् या किसी अन्य विधि में निर्दिष्ट आरोप-पत्र, यथास्थिति, मजिस्ट्रेट या न्यायाधीश को अग्रेषित कर दिए जाने पर परन्तु, जांच सहित, विचारण में साक्षी की परीक्षा आरम्भ किए जाने से पूर्व, यथास्थिति, सहायक लोक अभियोजक या लोक अभियोजक का यह मत है कि किसी संकटग्रस्त साक्षी की पहचान को संरक्षित रखना आवश्यक है तो, भाग-एक के अधीन अन्वेषण के स्तर पर, साक्षी के बारे में पहचान संरक्षण के लिए आवेदन या आदेश किया गया हो या नहीं, वह प्रथम श्रेणी के न्यायिक मजिस्ट्रेट या न्यायाधीश को, जिसके समक्ष पहचान संरक्षण के लिए मामला लंबित है, लिखित में आवेदन कर सकेगा।

(2) उपधारा (1) में निर्दिष्ट आवेदन संकटग्रस्त साक्षी द्वारा भी प्रस्तुत किया जा सकेगा, यदि ऐसा साक्षी अपने पक्ष में संरक्षण आदेश चाहता है।

(3) धारा 4 की उपधारा (2) और (3) के उपबंध आवश्यक परिवर्तन सहित, इस धारा के अन्तर्गत किए गए आवेदनों के लिए लागू होंगे।

(4) जहां उपधारां (1) के अन्तर्गत मजिस्ट्रेट या न्यायाधीश, यथास्थिति, के समक्ष फाइल किया गया कोई आवेदन किसी समय भाग-एक के अधीन या इस भाग के अधीन रद्द कर दिया जाता है तो, आवेदन के रद्द किए जाने के कारण से, यदि पहला आवेदन रद्द किए जाने के पश्चात् नई परिस्थितियां उत्पन्न हो गई हों तो, संरक्षण आदेश मंजूर किए जाने के लिए नया आवेदन करना नहीं रोका जा सकेगा।

मजिस्ट्रेट या न्यायाधीश द्वारा प्राथमिक जांच.-

9. (1) धारा 8 के अधीन आवेदन प्राप्त होने पर, मजिस्ट्रेट या न्यायाधीश, यथास्थिति, बंद कमरे में ऐसा विनिश्चय करने के लिए जांच करेगा कि क्या साक्षी संकटग्रस्त साक्षी है जैसाकि आवेदन में दावा किया गया है और क्या संरक्षण आदेश पारित किए जाने की आवश्यकता है और ऐसा विनिश्चय करने के लिए इस धारा में अधिकथित प्रक्रिया का अनुसरण करेगा।

(2) मजिस्ट्रेट या न्यायाधीश, यथास्थिति, अभियोजन या संकटग्रस्ट साक्षी से, जिसने धारा 8 के अधीन आवेदन किया है, ऐसी सामग्री या दस्तावेज अपने समक्ष प्रस्तुत किए जाने के लिए कह सकेगा जो अभी तक प्रस्तुत नहीं किए गए हैं और जिन्हें वह आवेदन के निपटान के लिए आवश्यक समझता है।

(3) मजिस्ट्रेट या न्यायाधीश, यथास्थिति, अभियोजन पक्ष को सुनेगा और उपधारा (4) और (5) के उपबंधों के अध्यधीन अभियुक्त को और साक्षी सहित, जो आवेदन का विषय है, किसी भी व्यक्ति की मौखिक परीक्षा कर सकेगा और कथन के सार को अभिलिखित करेगा।

(4) मजिस्ट्रेट या न्यायाधीश, यथास्थिति, उस सूचना के आधार पर जो धारा 8(1) की उपधारा (1), उपधारा (2) और उपधारा (3) के अधीन उसके सामने आई है, अभियुक्त और उसके वकील को साक्षी की आशंका और संकटग्रस्त होने के कारण और संरक्षण आदेश

पारित करने की आवश्यकता के बारे में सूचित करेगा और उस प्रयोजन से संरक्षण आदेश पारित करने से पूर्व अभियुक्त की सुनवाई करेगा ।

परन्तु यह कि मजिस्ट्रेट या न्यायाधीश साक्षी की पहचान प्रकट नहीं करेगा या ऐसा कोई अन्य विवरण प्रकट नहीं करेगा जिससे उस साक्षी की पहचान प्रकट हो सकेगी ।

परन्तु यह और कि यदि अभियुक्त और उसका वकील अभियोजन के संकटग्रस्त साक्षी से उसकी तथा उसके निकट संबंधियों को जान-माल के खतरे की संभावना के प्रश्न पर आगे और कोई जानकारी मांगना चाहते है तो उन्हें ऐसे प्रश्नों की एक सूची देने की अनुज्ञा दी जा सकेगी जिनका उत्तर अभियोजन या उक्त साक्षी द्वारा दिया जाएगा परन्तु ऐसे किसी प्रश्न या सूचना की अनुज्ञा नहीं दी जाएगी जिसे प्रत्यक्ष या परोक्ष रूप से उक्त साक्षी की पहचान प्रकट होती है।

(5) अभियुक्त तथा उसके वकील को ऐसी जांच के दौरान उपस्थित नहीं रहने दिया जाएगा जब, यथास्थिति, मजिस्ट्रेट या न्यायाधीश -

(i) साक्षी की या उपधारा (3) के अधीन किसी अन्य व्यक्ति की परीक्षा कर रहा हो ; और

(ii) अभियोजन या आवेदक साक्षी का पक्ष सुन रहा हो।

(6) धारा 5 की उपधारा (4) से (6) के उपबंध, आवश्यक परिवर्तन सहित, इस भाग के अधीन प्राथमिक जांच के लिए भी लागू होंगे।

मजिस्ट्रेट या न्यायाधीश द्वारा आदेश.-

10. (1) यदि-

(क) पक्षकारों द्वारा आवेदन और उसके समर्थन में प्रस्तुत की गई सामग्री और दस्तावेजों पर ; और

(ख) धारा 9 की उपधारा (3) के अधीन अधिकथित किए गए कथनों पर विचार करने के पश्चात्, यदि कोई है,

और अभियोजक या आवेदक साक्षी और अभियुक्त का पक्ष सुनने के पश्चात्, यथास्थिति, मजिस्ट्रेट या न्यायाधीश का समाधान हो जाता है कि -

(क) साक्षी, जो आवेदन का विषय है, संकटग्रस्त साक्षी है

(ख) विचारण में जब तक निर्णय नहीं दिया जाता और यदि निर्णय के विरूद्ध कोई अपील या पुनरीक्षण प्रस्तुत किया जाता है तो, जब तक, यथास्थिति, अपील या पुनरीक्षण पर निर्णय नहीं किया जाता तब तक संकटग्रस्त साक्षी की पहचान गोपनीय रखना न्याय के हित के विरूद्ध नहीं होगा।

(ग) साक्षी की पहचान जानने के अभियुक्त के साधारण अधिकार की तुलना में संरक्षण आदेश पारित करने की आवश्यकता अधिक महत्वपूर्ण है,

तो वह, इस आशय का न्यायोचित न्यायिक आदेश पारित करेगा कि जब तक विचारण में निर्णय नहीं दे दिया जाता और यदि निर्णय के विरूद्ध कोई अपील या पुनरीक्षा प्रस्तुत की जाती है तो जब तक उस अपील और पुनरीक्षा पर निर्णय नहीं दिया जाता तब तक ऐसे साक्षी की पहचान निम्नलिखित में उल्लिखित या दर्शायी नहीं जाएगी,-

(i) मजिस्ट्रेट या न्यायाधीश या अपीलीय या पुनरीक्षा न्यायालय के समक्ष, ऐसे मामले के बारे में प्रस्तुत किए गए किसी दस्तावेज में

(ii) ऐसे मामले के बारे में मजिस्ट्रेट या न्यायाधीश या अपीलीय या पुनरीक्षा न्यायालय के समक्ष किसी कार्यवाही में (निर्णय तथा आदेश सहित)

(iii) दंड प्रक्रिया संहिता, 1973 (1974 का 2) की धारा 207 और धारा 208 में या किसी अन्य विशिष्ट विधि के अधीन विनिर्दिष्ट अभिमुक्त दिए जाने के लिए अपेक्षित किसी दस्तावेज की प्रतिलिपि में।

(2) तथापि, यदि उपधारा (1) में निर्देशित इस प्रकार विचार और सुनवाई के पश्चात्, मजिस्ट्रेट या न्यायाधीश, यथास्थिति, का ऐसा समाध्यान हो जाता है कि -

(क) साक्षी, जो आवेदन का विषय है, संकटग्रस्त साक्षी नहीं है ; या

(ख) ऐसे साक्षी की पहचान को गोपनीय रखना -

(i) न्याय के हित के प्रतिकूल होगा ; या

(ii) वह साक्षी की पहचान जानने के अभियुक्त के अधिकार से अधिक महत्वपूर्ण नहीं है,

तब वह, एक न्यायोचित न्यायिक आदेश पारित करके आवेदन को खारिज कर सकेगा।

साक्षी की पहचान के उल्लेख का निषेध.-

11. (1) ऐसे साक्षी की वास्तविक पहचान का उल्लेख, जो आवेदन का विषय है, इस भाग के अधीन किसी आदेश-पत्र या किसी कार्यवाही में नहीं किया जाएगा।

(2) इस भाग के अधीन किसी कार्यवाही से संबंधित कोई भी सामग्री किसी भी रूप में किसी व्यक्ति द्वारा मुद्रित या प्रकाशित किया जाना विधि सम्मत नहीं होगा ।

अध्याय-तीन

विचारण में साक्षियों और पीड़ितों का संरक्षण

विचारण में क्लोज्ड सर्किट टलीविजन द्वारा संकटग्रस्त साक्षी के कथनों का अभिलिखित किया जाना.-

12. (1) जहां संकटग्रस्त साक्षी के संबंध में, धारा 10 की उपधारा (1) के अधीन संरक्षण आदेश पारित किया गया है, वहां उसका कथन अनुसूची-एक में दी गई प्रक्रिया के अनुसार न्यायालय में, टू-वे क्लोज्ड सर्किट टेलीविजन या वीडियो लिंक का इस प्रकार से प्रयोग

करके कि अभियुक्त और उसका वकील साक्षी का चेहरा और शरीर नहीं देख सकेंगे, लेखबद्ध किया जाएगा ।

परन्तु यह कि अभियुक्त और उसका वकील, उपधारा (2) के उपबंधों के अध्यधीन कथन लेखबद्ध किए जाने के दौरान साक्षी की आवाज सुन सकेंगे।

(2) पीठासीन न्यायाधीश स्वयेंव ही, या अभियोजन या संकटग्रस्त साक्षी द्वारा आवेदन किए जाने पर, यदि उसका समाधान हो जाता है, निदेश दे सकेगा कि उपधारा (1) में निर्दिष्ट कथन को लेखबद्ध करते समय, साक्षी की आवाज विकृत की जाएगी, और उस स्थिति में, अभियुक्त ओर उसका वकील उस विकृत आवाज को सुन सकेंगे।

परन्तु यह कि अविकृत आवाज़ का अभिलेखन मोहरबंद लिफाफे में रखा जाएगा और केवल पीठासीन न्यायाधीश को ही उस अविकृत आवाज को सुनने का अनन्य अधिकार होगा।

(3) जब उपधारा (1) में उल्लिखित कथन अभिलिखित किया जाएगा, तब जनसामान्य को, मीडिया कर्मियों सहित, न्यायालय द्वारा कथन के अभिलेखन के प्रयोजन से उपयोग किए जाने वाले कमरे में या अन्य स्थानों पर, पहुंचने, उपस्थित होने या रहने की अनुमति नहीं होगी।

(4) जहां संकटग्रस्त साक्षी का कथन उपधारा (1) और उपधारा (2) में दिए गए उल्लेखानुसार अभिलिखित किया जाएगा तब संकटग्रस्त साक्षी की पहचान जिसका कथन इस प्रकार अभिलिखित किया गया है, किसी भी रूप में किसी व्यक्ति द्वारा मुद्रित या प्रकाशित किया जाना विधि सम्मत नहीं होगा।

गम्भीर अपराधों के विचारण में, जहां संरक्षण आदेश के लिए आवेदन नहीं किया गया है या उसे स्वीकार करने से इंकार कर दिया गया है वहां पीड़ित के कथनों का अभिलेखन.-

13. जहां किसी गम्भीर अपराध के विचारण के मामले में संरक्षण आदेश के लिए कोई आवेदन नहीं किया जाता है या किए जाने पर अस्वीकृत कर दिया जाता है परन्तु जहां मानसिक आघात से बचने के लिए, पीड़ित यह अनुरोध करता है कि उसे अभियुक्त को वैयक्तिक रूप में या टेलीविजन या वीडिया लिंक के माध्यम से देखे बिना साक्ष्य देने की अनुज्ञा दी जाए वहां न्यायालय, पीड़ित को अभियुक्त को वैयक्तिक रूप में या टेलीविजन या वीडियो लिंक के माध्यम से पहचानने में समर्थ बनाने के सिवाय, निदेश दे सकेगा कि साक्षी की परीक्षा टू-वे क्लोज्ड सर्किट टेलीविजन या वीडियो लिंक और टू-वे ओडियो प्रणाली द्वारा, अनुसूची-दो में विनिर्दिष्ट रूप में की जाएगी।

अनुसूची-एक और अनुसूची-दो में निर्दिष्ट किए गए कतिपय व्यक्तयों को गोपनीयता की शपथ दिलाई जाएगी.-

14. (1) अनुसूची-एक और अनुसूची-दो में निर्दिष्ट टू-वे टेलीविजन या वीडियो लिंक या टू-वे ऑडियो प्रणाली का संचालन करने वाले तकनीकी कर्मचारयों और कोर्ट मास्टर या न्यायाधीश के आशुलिपिक को संगटग्रस्त साक्षी की पहचान और अन्य विवरणों को गोपनीय रखने की शपथ दिलायी जाएगी ; और

(2) उपधारा (1) में निर्दिष्ट किसी व्यक्ति द्वारा किसी व्यक्ति या किसी निकाय को साक्षी की पहचान प्रकट किए जाना विधि सम्मत नहीं होगा ।

अधिनियम का लागू होना.-

15. इस अधिनियम के उपबंध निम्नलिखित के लिए लागू होंगे -

(क) गम्भीर अपराधों के पीड़ित, इस अधिनियम के प्रवर्तन की तारीख को, सेशन न्यायालय में विचारण में जिनके कथनों का अभिलेखन प्रारम्भ नहीं हुआ है ; और

(ख) गम्भीर अपराधों के बारे में संकटग्रस्त साक्षी, इस अधिनियम के प्रवर्तन की तारीख को, जिनकी पहचान संदेहास्पद व्यक्ति या अभियुक्त को प्रकट नहीं की गई है और अन्वेषण के दौरान या जांच के दौरान मजिस्ट्रेट के समक्ष जिनके कथन अभिलिखित नहीं किए गए हैं या सेशन न्यायालय में विचारण के दौरान जिनके कथन अभिलिखित नहीं किए गए हैं ।

अध्याय-चार

प्रकीर्ण

अपील.-

15. (1) कोई व्यक्ति जो धारा 10 के अधीन पारित किए गए आदेश से व्यथित है, ऐसे आदेश के विरूद्ध, आदेश की तारीख से तीस दिन के भीतर, उच्च न्यायालय में अपील फाइल कर सकेगा ।

(2) उच्च न्यायालय अपील पर शीघ्रातिशीघ्र निर्णय करेगा और प्रतिवादी को नोटिस की तामील की तारीख से 30 दिन के भीतर निर्णय किया जाना श्रेयकर होगा।

अपराध.-

16. जो कोई धारा 7 की उपधारा (2), धारा 11 की उपधारा (2) और धारा 14 की उपधारा (2) के उपबंधों का उल्लंघन करेगा, कारावास से, जिसकी अवधि दो वर्ष तक हो सकेगी, और जुर्माने से, जो 10 हजार रूपए तक हो सकेगा, दंडनीय होगा।

नियम बनाने की उच्च न्यायालय की शक्ति.-

17. (1) प्रत्येक उच्च न्यायालय, मजिस्ट्रेट या न्यायाधीश के न्यायालय में इस अधिनियम के उपबंधों के प्रवर्तन के प्रयोजन से नियम बना सकेगा।

(2) विशिष्टया और उपधारा (1) के उपबंधों की व्यापकता पर प्रतिकूल प्रभाव डाले बिना, ऐसे नियमों में निम्नलिखित के बारे में निर्देश किया जा सकेगा-

(क) उस रीति और स्थानों का जिसमें और जहां पर, अनुसूची-एक की धारा 12 में निर्दिष्ट संकटग्रस्त साक्षियों के और अनुसूची-दो की धारा 13 में निर्दिष्ट पीड़ित के कथन टू-वे क्लोज्ड सर्किट टेलीविजन या वीडियो लिंक या टू-वे ऑडियो प्रणाली का उपयोग करके, लेखबद्ध किए जा सकेंगे ;

218 – 219

अनुसूची-दो

(धारा 13)

(1) उस कमरे, जिससे पीठासीन न्यायाधीश कार्य करता है (यहां इसके पश्चात् इसे कमरा 'क' कहा गया है) और दूसरे कमरे (यहां इसके पश्चात् इसे कमरा 'ख' कहा गया है) के बीच एक टू-वे क्लोज्ड सर्किट टेलीविजन या वीडियो लिंक और एक टू-वे ऑडियो प्रणाली स्थापित की जाएगी।

(2) कमरा 'क' में पीठासीन न्यायाधीश, कोर्ट मास्टर, आशुलिपिक, अभियुक्त और टू-वे क्लोज्ड सर्किट टेलीविजन या वीडियो लिंक और टू-वे ऑडियो प्रणाली का संचालन करने वाले तकनीकी कर्मचारी उपस्थित रहेंगे और जब पीड़ित अभियुक्त की पहचान करेगा तब के सिवाय, कैमरा अभियुक्त की ओर केन्द्रित नहीं किया जाएगा ।

(3) कमरा 'ख' में पीड़ित, लोक अभियोजक और अभियुक्त का वकील उपस्थित रहेंगे और खंड (2) द्वारा अनुज्ञेय के सिवाय, अभियुक्त की आकृति कमरा 'ख' में स्क्रीन पर नहीं दर्शायी जाएगी।

(4) पीड़ित की अभियोजक द्वारा परीक्षा की जाएगी या अभियुक्त के वकील द्वारा सीधे प्रतिपरीक्षा की जाएगी और कमरा 'ख' के स्क्रीन पर नहीं देखी जा सकेगी।